ISSN: 2278-0408

Vol.-15 / Issue-01
January to June : 2022

World Translation

(An International Multidisciplinary Peer Reviewed Refereed Research Journal)

Editor in Chief
Prof. Ashok Singh

Editor

Dr. Surendra Pandey
Dr. Vikash Kumar

Address
C-2, Satendra Kumar Gupta Nagar
Lanka, Varanasi-221005 U.P. (INDIA)
Email-**worldtranslation04@gmail.com**

©सम्पादक

प्रधान सम्पादक

प्रो0 अशोक सिंह (कुलपति, संत गहिरा गुरु विश्वविद्यालय, सरगुजा, अम्बिकापुर, छत्तीसगढ़)

सम्पादक

डॉ0 सुरेन्द्र पाण्डेय (असिस्टेंट प्रोफेसर, कूबा पी0जी0 कालेज, दरियापुर, नेवादा, आजमगढ़)

डॉ0 विकास कुमार (असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, श्री वार्ष्णेय महाविद्यालय, अलीगढ़, उत्तर प्रदेश)

उप सम्पादक

डॉ0 रत्नेश कुमार त्रिपाठी (असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, सत्यवती कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय)

डॉ0 सपना भूषण (एसो0 प्रो0, हिन्दी विभाग, वसन्त कन्या महाविद्यालय, कमच्छा, वाराणसी)

डॉ0 ऋतु वार्ष्णेय, असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, किरोरीमल कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

कार्यकारी सम्पादक

डॉ0 सीमा सिंह (असिस्टेन्ट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, कॉलेज ऑफ वोकेशनल स्टडीज़, दिल्ली विश्वविद्यालय)

डॉ0 लाल सिंह (असिस्टेन्ट प्रोफेसर, विधि विभाग, श्री वार्ष्णेय महाविद्यालय, अलीगढ़)

डॉ0सुनील कुमार सिंह (असिस्टेंट प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, अर्मापुर स्ना. महाविद्यालय, कानपुर)

सह सम्पादक

डॉ0 सच्चिदानन्द चौबे (एसोसिएट प्रोफेसर, अध्यक्ष, इतिहास विभाग, सिद्धार्थ विश्वविद्यालय, कपिलवस्तु, सिद्धार्थनगर, उ.प्र.)

डॉ0 राकेश कुमार (असिस्टेंट प्रोफेसर, शारीरिक शिक्षा विभाग, श्री वार्ष्णेय महाविद्यालय, अलीगढ़)

डॉ0 उमेश कुमार राय (पूर्व शोध छात्र. वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा, बिहार)

प्रबंध सम्पादक

डॉ0 विनय कुमार शुक्ल (सहायक प्राध्यापक, शासकीय रामानुज प्रताप सिंहदेव स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैकुण्ठपुर, कोरिया, छ.ग.)

डॉ0 अरूण कुमार मिश्र (असिस्टेंट प्रोफेसर (हिंदी), एम.डी.पी.जी. कॉलेज, प्रतापगढ़

ISSN : 2278-0408

मूल्य : रु0 250.00

सम्पादकीय पता

डॉ0 सुरेन्द्र पाण्डेय

एस.एन. 14/191, सरायनन्दन, खोजवाँ,

वाराणसी, उ0प्र0, मो0नं0 09451173404, 7705040045

Email: surendrpanday@gmail.com

डॉ0 विकास कुमार

सिविल लाइन, तकिया रोड,

सासाराम, रोहतास (बिहार)

मो0 : 09470828492, 9934468661

Email: vik982pri@gmail.com

मुद्रक

राजैरिया ऑफसेट

जगतपुरी, दिल्ली-110093

नोट : सभी पद अवैतनिक एवं अव्यावसायिक हैं। प्रकाशित लेखों एवं उद्धरणों का दायित्व स्वयं लेखकों का है। लेखों एवं उद्धरणों से सम्बन्धित किसी भी वाद-विवाद के लिए लेखक स्वयं जिम्मेदार होगा।

सम्पादक मण्डल

डॉ0 राधेश्याम दुबे, प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ0 सुरेन्द्र प्रताप, प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
डॉ0 विजय बहादुर सिंह, प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ0 अनीता सिंह, प्रोफेसर, अंग्रेजी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ0 वशिष्ठ अनूप, प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ0 चम्पा सिंह, प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ0 गजेन्द्र पाठक, प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, हैदराबाद विश्वविद्यालय
डॉ0 प्रभाकर सिंह, असि0 प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ0 जितेन्द्र कुमार सिंह, असि0 प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, केन्द्रीय विश्वविद्यालय, राजस्थान
डॉ0 मृत्युंजय सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर, शांति प्रसाद जैन महाविद्यालय, सासाराम, बिहार
डॉ0 एस0आर0 जयश्री, प्रोफेसर, केरल विश्वविद्यालय, केरल
डॉ0 सुनीता सिंह, असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, ली. मोयने कॉलेज, साउथ न्यूयार्क, यू0के0
डॉ0 मनोज सिंह, प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ0 विनोद कुमार मिश्र, प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, केन्द्रीय विश्वविद्यालय, त्रिपुरा
डॉ0 सतीशचन्द्र दुबे, प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ0 उमापति दीक्षित, प्रोफेसर, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा
डॉ0 नलिनी माथुर (एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, भगिनी निवेदिता कालेज दिल्ली विश्वविद्यालय)
डॉ0 सावित्री सिंह (एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, रोहतास महिला विश्वविद्यालय, सासाराम बिहार)
डॉ0 विकास कुमार सिंह, असि0 प्रोफेसर, प्रा0भा0इ0सं0 एवं पुरातत्त्व विभाग, का0हि0वि0वि0, वाराणसी
डॉ0 दिग्विजय सिंह, हिन्दी विभाग, के0डी0वी0 डिग्री कॉलेज, दुबहर, बलिया
डॉ0 देवेन्द्र प्रताप सिंह, प्रोफेसर, कूबा पी0जी0 कालेज, दरियापुर, नेवादा, आजमगढ़, उ0प्र0
डॉ0 अभय कुमार, असिस्टेन्ट प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, बी.आर.एम. महाविद्यालय, मुंगेर वि.वि., मुंगेर, बिहार
डॉ0 चन्द्रशेखर चौबे, असिस्टेन्ट प्रोफेसर, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, शाखा– नागालैंड
डॉ0 विजय कुमार रोड़े, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सावित्रीबाई फुले विश्वविद्यालय, पुणे, मुम्बई
प्रो0 चन्द्रदेव यादव, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, जामिया विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
ऋषिभूषण चौबे, हिन्दी विभाग, प्रेसीडेन्सी विश्वविद्यालय, कलकत्ता
डॉ0 अभिमन्यु यादव, प्राचार्य, कूबा पी0जी0 कालेज, दरियापुर, नेवादा, आजमगढ़, उ0प्र0
डॉ0 जितेन्द्र कुमार सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
डॉ0 अरविन्द कुमार, असि. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, डॉ0 हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, म0प्र0
डॉ0 अफरोज बेगम, असि. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, डॉ0 हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, म0प्र0
हिमांशु कुमार, असि. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, डॉ0 हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, म0प्र0
डॉ0 प्रीति सिंह, असि. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला (हि0प्र0)
डॉ0 सुजीत कुमार सिंह, असि. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय
डॉ0 राजेश गर्ग, एसो. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय
डॉ0 संतोष पटेल, सहायक रजिस्ट्रार, दिल्ली शिक्षक विश्वविद्यालय

विधि परामर्शदाता

डॉ0 मुकेश कुमार मालवीय, असि0 प्रोफेसर, विधि संकाय विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

अनुक्रम

1.	भारतीय संस्कृति में दान विवक्षा **डॉ0 अजित कुमार जैन**	**9-12**
2.	नेहरू ग्राम भारती मानित व. व. जमुनीपुर कोटवा प्रयागराज प्रेमचंद के उपन्यासों में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति रीता पाल	**13-22**
3.	मीरा शक्ति और सहनशीलता **मंजु रानी**	**23-26**
4.	स्वाध्यायान्मा प्रमदः **डॉ0 अजित कुमार जैन**	**27-29**
5.	सामाजिक चेतना वाले दो आरम्भिक उपन्यासकार **सन्तोष कुमार**	**30-35**

6.	हिन्दी कहानी की वरासत **विजय लक्ष्मी गुप्ता**	**36-46**
7.	राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और उच्च शिक्षा **डॉ. लाल सिंह**	**47-54**
8.	सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन **चन्द्र प्रकाश मणि त्रिपाठी**	**55-63**
9.	किशोर बाल अपराध को रोकने में विद्यालयों की भूमिका **डॉ0 सुनीता गुप्ता**	**64-70**
10.	उषा प्रियम्वदा के उपन्यासों में पाश्चात्य सामाजिक वैशिष्ट्य **सिन्दू यादव**	**71-77**
11.	**समकालीन हिंदी उपन्यास** : **सामाजिक यथार्थ एवं नया मूल्यबोध** प्रमोद कुमार पटेल	**78-80**

12.	लिंग एवं क्षेत्र के आधार पर प्राथमिक स्तर के शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का अध्ययन **विमल कुमार शुक्ल**	**81-91**
13.	पचमढ़ी कार्यशाला और संगीत नाटक पुरस्कार वजेता अलखनंदन **चन्द्र पाल**	**92-97**
14.	तुलसी मन–मानस में राम **डॉ0 अरुण कुमार मिश्र**	**98-109**
15.	गोपालदास 'नीरज' जी के काव्य में राष्ट्रीय संचेतना का विकास **डॉ0 अवधेश कुमार**	**110-114**
16.	समाचार पत्र 'प्रताप' का आरोह–अवरोह **डॉ0 राजेश कुमार पाण्डेय**	**115-118**
17.	Education: The Root of Foresight and Reverence **Dr. Varsha Singh**	**119-126**

18.	Identity, Toxic Relation and Justification of Crime through Myth: A critical Study of *Private India: City on Fire* **Md. Monirujjaman**	**127-133**
19.	काव्य में बिम्ब का महत्त्व **रेणु बाला**	**134-137**
20.	पारिवारिक वातावरण के सन्दर्भ में माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन **अतुल कुमार सिंह**	**138-144**
21.	मन्नू भण्डारी का उपन्यास महाभोज (1979) : एक संक्षिप्त विवेचन **डॉ0 विकास कुमार**	**145-147**
22.	कबीर और भारतीय समाज : एक संक्षिप्त परिचय **डॉ0 सुरेन्द्र पाण्डेय**	**148-150**
23.	वामन का रीति सिद्धाँत : उपलब्धियाँ एवं सीमाएँ **डॉ0 कमलेश सिंह**	**151-153**

24.	विद्यालयों में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) की उपयोगिता **नाजिया**	**154-158**
25.	भारत में चुनावीय समस्याएं एवं समाधान : एक नजर **देवी लाल**	**159-162**
26.	रवीन्द्र संगीत में पाश्चात्य संगीत प्रभाव **डॉ0 रूमा चटर्जी**	**163-166**
27.	''आजादी के अमृत महोत्सव में अंग्रेजी हुकूमत तथा स्त्री अस्त्विबोध : अपमान और सम्मान'' **प्रज्ञा पाण्डेय**	**167-169**
28.	लिंग के आधार पर माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों के शैक्षणिक पर्यावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन **सुनील कुमार**	**170-178**
29.	समकालीन कवि डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी के साहित्य में काव्य क्षणिकाएं (कोलाज) का महत्त्व **हेतराम (शोधार्थी) ओप्रजोसिंविवि चुरु** **डॉ. चित्रा देवगन (शोध प्रवेक्षिका) ओप्रजोसिंविवि चुरु**	**179-184**

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

भारतीय संस्कृति में दान विवक्षा

डॉ0 अजित कुमार जैन
एसो0 प्रोफेसर एवम् अध्यक्ष,
संस्कृत विभाग, एस0वी0 कॉलेज,
अलीगढ़, (उ0प्र0)

अर्जन का विसर्जन करना प्रत्येक मनुष्य का पावन कर्तव्य है। आचार्य कुंदकुंद स्वामी ने गृहस्थ के आवश्यक कार्यों में गिनाया है।[1] वसुनंदि श्रावकाचार में भी आचार्य इसे परं उपादेय और आवश्यक कार्यों में गिनाते हैं।[2] यहाँ यह कहना भी समीचीन है कि प्रकृति के उपादानों से भी यही शिक्षा मिलती है। वृक्ष फल का दान करते हैं, नदियाँ जल का दान करती हैं। खेत फसल का दान करते हैं। मेघ जल का दान करते हैं इतयादि। मेरा अभिमत है कि भारतीय संस्कृति में दान पुण्य का कारण कहा गया है और लोभ या संचयशील प्रवृत्ति पाय का मूल कहा गया है।

दान का लक्षण : परम् दार्शनिक संत आचार्य उमा स्वामी महाराज ने दान को परिभाषित करते हुए कहा है– **''अनुग्रहार्थं स्वस्याति सर्गो दानम्''।**[3] अर्थात् अपने और दूसरों के उपकार के लिए अपनी वस्तु का त्याग करना दान है। आचार्य ने सर्वार्थासिद्धि ग्रन्थ में कहा हे– **''परानुग्रह बुद्धया स्वस्याति विसर्जनम् दानम्''।**[4] अर्थात् पर उपकार की भावना करके अपने संचित द्रव्य या वस्तु का त्याग करना दान है। इस प्रसंग में धवलाकार का मत उद्धृत करना अत्यन्त समीचीन है, कहा है[3]– **''रत्नत्रय वंदिभ्य स्वचित्त परित्यागो दानम् रत्नत्रय साधनादित्साव''** अर्थात् रत्नत्रय युक्त साधकों के लिए अपने द्रव्य का त्याग करना या रत्नत्रय के साधनभूत वस्तुओं का परित्याग करना या प्रदान करने की इच्छा करनादान के अन्तर्गत है।

इस सन्दर्भ में, मेरा अभिमत है कि वस्तुतः दान करना तो दान है ही किन्तु दानरूप परिणाम या भाव करना भी दान की श्रेणी में है।

दाता के गुण : दान जैसा परमोपादेय कर्तव्य तभी पूर्णता या सफलता को पायेगा जब दानदातार में सद्गुणों का समावेश हो अतः दान देने वाला फल की आकांक्षा से रहित होकर श्रद्धा, शक्ति, भक्ति, विज्ञान, अलुब्धता, क्षमा और त्याग भाव रखकर दान दे, ऐसा आचार्यों का मत है। कहा है–

श्रद्धा शक्तिश्च भक्तिश्च विज्ञानञ्चालुब्धता।
क्षमा तगश्च सप्तैते प्रोक्ता दानपर्तेगुणो।।''[6]

दान के पात्र : दान जैसा प्रशस्त कार्य सत्पात्र के लिए किया जाना अनिवार्य है, अपात्र या कुपात्र के लिए दिया गया दान फलदायी नहीं है। अतः सत्पात्र की पहचान रखना या करना दानदाता के लिए आवश्यक है। पात्र की दृष्टि से उत्तम पात्र, मध्यम पात्र और जघन्य पात्र ये तीन भेद शास्त्रकारों ने कहे हैं। उत्तम पात्र के अंतर्गत अढ्ढाइसि मूलगुणधारी, निर्ग्रन्थ, वीतरागी, अनगार साधु गिने गये हैं। मध्यम पात्र के रूप में अर्यिका, सेलक, क्षुल्लक कहे गये हैं। जधन्न पात्र में सम्यक्दृष्टि श्रावक–गृहस्थों को कहा गया है।

दान का वर्गीकरण : नीतिशास्त्र का कथन है कि– **गेती दानेन शोभते** अर्थात् गृहस्थ की शोभा दान देने से है। दान के प्रमुखतः दो भेद कहे गये हैं– (1) अलौकिक दान (2) लौकिक दान।

अलौकिक दान चार प्रकार का कहा गया है–

उत्तम त्याग कह्यो जग सारा। औषधशास्त्र अभय आहारा।।7

यह दान औषधदान, शास्त्रदान, अभयदान और आहारदान के भेद से चार प्रकार का है।

लौकिक दान भी चार प्रकार का कहा गया है– समदन्ति, करुणादन्ति, दयादन्ति, और पात्र दन्ति।

यहाँ पर यह भी समीचीन है कि दान करते समय भावों की अत्यधिक प्रधानता है। भाव की दृष्टि से विचार करें तब दान के तीन भेद कहे गये हैं– (1) सात्विक दान (2) राजसिक दान (3) तामसिक दान।

अलौकिकदान : उपरोक्त वर्गीकरण के अंतर्गत अलौकिक दान के चार भेद निम्नवत् हैं–

(1) आहारदान : जैसे संसारी क्रियाओं में हम सभी का अनुभव है कि जल के द्वारा मल का शोधन होता है। उसी प्रकार गृहस्थ अपनी कमाई हुई राशि से जब आहार दान देता है उसके पाप रूप मल का शोधन होता है। कुरल काव्य में कहा गया है–

परनिन्दाभयं यस्य विना दानं न भोजनम्।
कृति नस्तस्य निर्बीजो वंशो नैव कदाचन।।[8]

अर्थात् जो व्यक्ति पर की बुराई से दूर रहता है और बिना दान दिए भोजन नहीं करता है, कभी भी ऐसे व्यक्ति के वंश का नाश नहीं हो सकता अर्थात् सदैव फलता फूलता रहेगा।

आचार्य पद्मनन्दि ने इस संदर्भ में कहा है–

"तद्वृत्तिवपुषोऽस्य वृत्तिरशनात्तद्वी श्रावकैः।
काल क्लिष्टतरेऽपि मोक्षपदवीप्रायस्ततोवर्तते।।"[9]

आचार्य कार्तिकेय स्वामी ने कहा है–

भोयण दाणे तिण्णि विदाणाणि होति दिण्णणि।।[10]

अर्थात् भोजन का दान देने से शेष तीन दानों की भी सिद्धि स्वतः हो जाती है।

(2) औषधदान : रोग से पीड़ित व्यक्ति के शरीर और स्वास्थ्य के अनुकूल बनाने के निमित्त औषधदान किया जाता है। औषध दान के करने से पात्र का रोग उपशमन होता है और इस दान के प्रतिफलस्वरूप स्वयं को उत्तम और नीरोग शरीर की प्राप्ति होती है। आचार्य ने कहा है–

"कुर्याद् औषध पथ्य वारिभिरिदं चारित्रभारक्षमं।

यत्तस्मादिह वर्तते प्रशमिनां धर्मो गृहस्थोत्तमात्।।"[11]

(3) शास्त्रदान : शास्त्रदान या ज्ञान दान या उपकरण दान अर्थात् उपकार करने वाला दान ऐसा अभिप्राय है। मुनियों को पिच्छी कमण्डल और शास्त्र का प्रदान करना उपकरण दान कहा है। शास्त्र दान, ज्ञान दान या श्रुत ज्ञान या व्याख्यान करना यह सब ज्ञानवर्द्धन के निमित्त ही है।

आचार्य ने कहा है–

व्याख्याता पुस्तक दानमुन्नतधियां पाठायभव्यात्मनाम्।

भक्त्या यत्क्रियते श्रुताश्रयमिदं दानं तदाहुर्बुधाः।।[12]

(4) अभयदान : भयग्रस्त जीवों के भय को दूर कर उन्हें भयमुक्त बनाना यह अभयदान कहलाता है। आचार्य ने कहा है–

मरण भय भीरू आणं अभयं जो देदि सत्व जीवाणम्।

तं दाणाणावि तं दाणं पुण जोगेसु मूल जो गंपि।।[13]

इस प्रकार चारों अलौकिक श्रेणी के दानों का स्वरूप कहा है। अब चारों लौकिक दानों का क्रम प्राप्त है।

लौकिकदान : लौकिकदान का स्वरूप निम्नवत् वर्णित है–

(1) समदत्ति : उत्तम गृहस्थ के लिए कन्या, मकान, नौकरी, वाहन आदि देना, स्वर्ण धरती रुपया आदि समान बुद्धि धारी को प्रदान करना यह समदन्ति दान कहा गया है।

(2) करुणादत्ति : गरीब, रोगी, मूक, बधिर आदि पर करुणा करते हुए धन द्रव्य औषधि वस्त्र आदि दान देना करुणा दान के अंतर्गत है।

(3) दयादत्ति : अनुग्रह के योग्य जीवों के समूह पर दया करते हुए उनके जीवन के संकट को दूर करना दायादान है।

(4) पात्रदत्ति : योग पात्र के मिल जाने पर उसके यथायोग्य विनय पूर्वक आदर सत्कार स्वागत करते हुए जल भोजन आदि दान देना यह पात्र दत्ति के अंतर्गत कहा गया है।

सारतः, यह सुस्पष्ट है कि भारतीय संस्कृति में दान प्रशस्त कर्म और परमोपादेय कहा गया है।

संदर्भ :

1. आचार्य कुंदकुंद– रयणसार– ''दाणं पूजा मुखं श्रावय धम्मम्'' ।।
2. आचार्य वसुनंदि– वसुनंदिश्रावकाचार– ''दानं चेति गृहस्थानाम् षट्कर्माणि दिने दिने।''
3. उमास्वामी– तत्वार्थसूत्र– अध्याय 7/38वां सूत्र
4. आचार्य– सवार्थसिद्धि– 6/12/33/14
5. आचार्य धवलाग्रन्थ– 13/5, 137/389/12
6. आचार्य जिनसेन– महापुराण 20/82, व्याख्यान– 83, 84, 85
7. कविवर धानतराम– दशलक्षणधर्म–पूजा
8. कुरल काव्य
9. आचार्य पद्मनन्दि– पद्मनन्दिपंचविंशतिका
10. स्वामी कार्तिकेय– कार्तिकेयानुप्रेक्षा– 363/364, 382/12
11. आचार्य पद्मनन्दि– पद्मनन्दि पंचवंशितिका– 7/9/2
12. आचार्य पद्मनन्दि– पद्मनन्दि पंचविंशतिका– 190
13. आचार्य– मूलाराधना– 939

नेहरू ग्राम भारती मानित व. व. जमुनीपुर कोटवा प्रयागराज

प्रेमचंद के उपन्यासों में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति

रीता पाल
शोध छात्रा
एस.आर.एफ. हिन्दी

प्रेमचंद का साहित्य "करोड़ो जनता की वाणी है। उसमें मुक्ति की व्यापक बानी है।" प्रेमचंद की दृष्टि में साहित्य की सर्वोत्तम परिभाषा जीवन की आलोचना है। प्रेमचंद की कथाओं में स्त्री मुक्ति संघर्ष की चेतना वशेष रूप में है। नारी के प्रति उनका व वध कोणी वचार प्रशंसनीय है।

'कलम के सपाही' प्रेमचंद हिन्दी साहित्य के ऐसे पुरोधा रचनाकार है जिन्होंने अपने स्वा भमानी, क्रांन्तिकारी व्यक्तित्व से अपनी रचनाओं में समाज का यथार्थ चत्रण कया है। वे आजादी के वद्रोही लेखक और सच्चे सैनिक थे। उनके साहित्य में राष्ट्रीय, सामाजिक, धा र्मक और आ र्थक एवं जातीय अत्याचारी समस्याएँ मुखरित हुई है। अपने निर्भय व्यक्तित्व द्वारा सामाजिक जीवन से प्राप्त अनुभवों का कसान, मजदूर, नारी समस्या जैसे- वधवा ववाह, वेश्याप्रथा, अनमेल- ववाह आदि जटिलताओं पर उन्होंने खुलकर अपने अमोघ अस्त्र 'कलम' को चलाया। प्रेमचंद जी को जड़ता मंजूर नही थी। वे अपने जीवन को संग्राम-स्थल समझते थे जहाँ एक सच्चे सपाही की भाँति डटकर रहना आवश्यक है, डरकर भागने से काम नही चलेगा। इस लए वे चाहते थे क लेखक को समाज या परंपरा से न दबकर निष्पक्ष दृष्टि से अपना उत्तरदायित्व निभाना चाहिए। प्रेमचंद जी ने उसी के अनुरूप साहित्य रचा। जो मानव को नारी की दशा की ओर सोचने को बाध्य करता है।

प्रेमचंद का वद्रोही व्यक्तित्व नारी की हालत में सुधार चाहता था। इस लए उनके व्यक्तित्व का कभी सुधारवादी तो कभी आदर्शवादी रूप, कभी यथार्थवादी तो कभी साम्यवादी रूप निखर आता है। प्रेमचंद जी की धारणा को बं कमचंन्द्र, रवीनद्रनाथ ठाकुर, टालस्टाय, गोर्की, डकेंस, ढालवर्दी, गोखले, तिलक, महात्मा गाँधी आदि की वचारधाराओं ने प्रभा वत कया था। प्रेमचंद जी के वचार हिंसक, वध्वंसक नही थे। उन्हें तो शो षतों को परिपूर्ण न्याय दिलवाना था जिसमें संसार के सभी प्रकार के आदमी मौजूद है। इनमें नारी पात्र अस्वाभा वक नहा है। प्रेमचंद जी एक ऐसे लोक प्रय साहित्यकार है जिनका रूझान लोकध र्मता की ओर रहा है। उनके साहित्य की जड़े लोकजीवन से जुड़ी है। हिन्दी में प्रेमचंद जी के लगभग दस पूर्ण उपन्यास है, जिनमें नारी-जीवन की व वध समस्याओं का चत्रण है। इनकी रचनाओं का संसार भी अतिव्यापक है जिसमें अमृतराय के अनुसार 224 कहानियाँ है।

प्रेमचंद जी की रचनाओं में मानवीय जिन्दगी के कई पहलुओं का चत्रण है। इनकी कहानियों तथा उपन्यासों की वस्तु जिन्दगी के ऐसे सच से जुड़ी हुई है जो समकालीन रही और आज भी प्रासं गक प्रतीत होती है। आज भी समस्यायें वही है पर हालात बदल गये है। प्रेमचंद जी बदलते समय के ऐसे कथाकार है जिन्होंने बदलते यथार्थ वषयों को नवीन शल्प में डाला। इस लए वे स्पष्ट कहते है- "अब पाठक कहानियों में नये भावों, नये वचारों, नये चरित्रों कता दिग्दर्शन चाहता है।" इनकी रचनाएँ जिन्दगी के सच से जुड़ी रहने के कारण कभी पुरानी नही लगती। प्रेमचंद दूरदृष्टा थे, इसी लए अपने समय में ही उन्होंने नारी के स्वरूप को परख लया था। इस लए आज के संदर्भ में उनके नारी पात्रों की ओर पुनः दृष्टि डालना आवश्यक और प्रासं गक है।

'नारी ! तुम केवल श्रध्दा हो।'

'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।।"

ये नारी की व शष्टता एवं उसके महत्वपूर्ण अस्तित्व की द्योतक उक्ति है। ले कन क्या सचमुच समाज में नारी का यही स्वरूप है, यह वचारणीय है। आज की श क्षत, नौकरीपेशा आत्मनिर्भर नारी ने बरसों के संघर्ष के पश्चात् वर्तमान स्थिति को हा सल कया है, जिससे उसने इस पुरूष सत्तात्मक समाज में अपना चन्ह बना लया है। आज भारतीय नारी के समक्ष सर्वा धक महत्वपूर्ण चुनौती यह है क नारी का प्राथ मक रूप क्या है भारतीय नारी या नारी ? यदि वह भारतीय नारी है तो हिन्दू है, सवर्ण है या द लत ? इस प्रकार एक दूसरे प्रश्न को जगाता है।

आज नारी ने सब कुछ पाकर बहुत कुछ खोया है। अब वह जीवन के उस कगार पर आ पहुँची है जहाँ वह स्वयं अपने आप से प्रश्न करने पर ववश है। उसका सबसे निजी प्रशअन है- मैं कौन हूँ ? मैं क्या चाहती हूँ ?

आश्चर्य की बात यह है क यह प्रश्न आज का नही, सदियों पुराना है। भारतीय सभ्यता में पाँच से दस हजार वर्ष पूर्व वश्व की कसी भी सभ्यता से पहले ब्रहमवादी गार्गी ने वदेहराज जनक के दरबार में उपनिषदों के प्रणेता मह र्ष याज्ञवल्क्य से ब्रहम और आत्मा के संदर्भ में प्रश्न उठाया था। उस समय उसे यह कहकर चुप करा दिया गया था क अब आगे और प्रश्न पूछोगी तो तुम्हारा शीष हजारों टुकड़ो में चकनाचूर हो जायेगा। इतना ही नही भारतवर्ष के कसी भी कोने का उदाहरण ले लीजिए, कसी भी भाषा का लोकगीत दे खए, सब में यही कहा गया है-

"बेटी पराया धन होती है। बाबुल ! हम तुम्हारे आँगन की च ड़या है।

कल कसी अज्ञात देश को चली जायेगी, फर हमारी खोज खबर नही आयेगी।"

ऐसी भारतीय नारी जिसका अस्तित्व ही नही था, उसके समक्ष कोई चुनौती नही थी। ऐसी नारी का स्वरूप कुछ इस प्रकार बनाया गया क उसे कभी प्रतिरोध ही नही करने दिया हो। जो जन्म से आत्मसमर्पण, आत्मवंचन, आत्मदमन के संस्कारों से गढ़ी गयी हो, मनोवैज्ञानिक तौर पर जिसे

लगातार पौरा णक कथाओं के जरिये स्थित कया जाता रहा हो, जो सदा लाचारी को नियति और नियति को सौभाग्य मानती रही हो, उसके समक्ष कोई चुनौती नही थी, कोई उपाय नही था। वह तो पंजरे में बन्द च ड़या जैसी थी-

"चमन दूर / आ शयाँ बरबाद / ये टूटे हुए बाजू / मेरा क्या हाल हो / सौदागर मुझे रिहा कर दो।"

नारी की इस घुटन, चुप्पी, कश्मकश, कसक, टीस को प्रेमचंद ने बखूबी चत्रित कया है। उसकी मूक वेदना को आवाज देकर समाज के समक्ष लाने का प्रयास कया है ता क समाज का नारी के प्रति नजरिया बदले। वे उसकी स्थिति के बारे में सोचे।

प्रेमचंद जी एक जागरूक और युगदृष्टा रचनाकार है। जिन्होंने हिन्दी उपन्यास को गंभीरता से लया और उसे ऊँचाई तक ले गये। उन्होंने केवल लखा ही नही बल्कि लखने से पूर्व वे वश्व साहित्य का सूक्ष्म अध्ययन कर चुके थे। इसी लए सामाजिक तथा साहित्यिक दृष्टिकोण उनकी रचनाओं में प्राप्त होता है। हिन्दी में प्रेमचंद की प्रथम औपन्या सक कृति सेवासदन मानी जाती है। कालक्रमानुसार प्रेमचंद जी के उपन्यासों को इस प्रकार रख सकते है-

1. सेवासदन (1918) 2. वरदान (1920) 3. प्रेमाश्रय (1920) 4. रंगभू म (1925) 5. कायाकल्प (1926) 6. निर्मला (1926) 7. प्रतिज्ञा (1929) 8. गबन (1930) 9. गोदान (1936) 10. मंगलसूत्र (अपूर्ण) तत्कालीन समाज में निहित लगभग सभी समस्याओं को प्रेमचंद जी ने अपने उपन्यासों में अं कत कया है। जैसे- दहेज प्रथा, वधवा समस्या, अनमेल- ववाह, वेश्या समस्या, दरिद्रता, खोखले धर्मा धकारी, हिन्दू-मुस्लिम वद्रोह, हिन्दुस्तानियों की गुलाम मनोदशा, भ्रष्टाचारी राजनेता, अज्ञानता, अन्ध- वश्वास, धर्मभीरूता, जमीदारों द्वारा शोषण अत्याचार आदि। इनमें से सेवासदन, वरदान, निर्मला, प्रतिज्ञा, रंगभू म, गोदान आदि में नारी सम्बन्धी व वध स्वरूपों का चत्रण देखने को मलता है जिसकी वस्तृत चर्चा की जायेगी।

सेवासदन- 'सुमन'

यह हिन्दी का पहला उपन्यास माना जाता है। जिसमें कसी लेखक ने व्यापक रूप से सामाजिक यथार्थ को उद्घाटित कया है। 'सेवासदन' सर्वप्रथम उर्दू में 'बाजार-ए-हुस्न' के नाम से प्रका शत हो चुका था। इसमें दरोगा कृष्णचन्द की पुत्री सुमन की कथा है। कृष्णचन्द अपनी बेटी के दहेज की रकम जुटाने के चक्कर में रिश्वत के मामले में फँस जाते है। उन्हें जेल हो जाती है। अब सुमन की माँ गंगाजली सुमन का ववाह गजाधर प्रसाद नामक एक दुहाजू से करा देती है। गजाधर और सुमन के वचारों और संस्कारों में भी कोई मेल नही है। गजाधर पन्द्रह रूपये महीने की एक सामान्य नौकरी करता था और कराये के घर में रहता था। उनके मकान के सामने भोली नामक गौंडाहारी वेश्या रहती थी। भोली के सौन्दर्य, ठाठ-बाट से सुमन को ईर्ष्या थी। वह भोली से मत्रता करती है और धन के लालच में धर्म, सामाजिक प्रतिष्ठा का परित्याग कर भोली के साथ कोठे पर बैठ जाती है। सुमन के कारण उसकी बहन

शान्ता के ववाह में अड़चने आती है। सुमन का पति गजाधर सन्यासी बनकर दीन-दुखी स्त्रियों के आश्रय के लए सेवाश्रम की स्थापना करता है। सुमन आत्महत्या करने का प्रयत्न करती है तभी गजानन्द रूपी गजाधर उसे बचाता है और सेवासदन का कार्यभार सँभालने को कहता है।

आज समाज में स्टेटस और सामाजिक सम्मान को ही अ धक महत्व दिया जाता है, इस लए लेखक ने सुमन के माध्यम से यह बताने की को शश की है क स्त्रियों में ऐसा लोभ अ धक पाया जाता है और इससे कभी-कभी उसके भटकने की सम्भावना बनी रहती है। ले कन नारी जागरूक रहकर अपने साथ होने वाले अन्याय से मुक्ति पा सकती है और अपने चरित्र को कलं कत होने से बचा सकती है।

वरदान- ' वरजन' ब्रजरानी-

इसमें प्रतापचन्द और वरजन के प्रेम, उसकी सफलता और अन्त में उसके उदात्तीकरण का चत्रण प्रस्तुत हुआ है। प्रताप चन्द्र एक श क्षत, मेधावी और गुणवान युवक है। उनके पता शालीग्राम साधु-सन्तों को दान देने में वश्वास करते थे। उनके इस दानी-स्वभाव के कारण वे कर्जदार हो जाते है। एक दिन कुम्भ मेले के लए जाते है और वापस नही लौटते। प्रताप की माण सुवामा ने काफी संघर्ष कर उनका पालन-पोषण कया और पति के कर्ज को चुकाया। सुवामा के नाम जो घर बचता है वह उसका दो हिस्सा कर एक में स्वयं प्रताप के साथ रहती थी, तो दूसरा कराये पर दे दिया। उनके घर में कराये पर मुंशी सजीवन लाल, उनकी पत्नी सुशीला और बेटा वरजन रहते थे। एक मकान में साथ रहने के कारण वरजन और प्रताप को एक दूसरे से प्यार हो जाता है ले कन आ र्थक वषमता के कारण मुंशी जी अपनी बेटी का ववाह प्रताप से न करके डप्टी क मश्नर के लड़के श्यामचरण के बेटे कमलाचरण से करते है। कमलाचरण आवारा कस्म का लड़का है। इस प्रकार पैसे की कमी के कारण प्रताप की शादी वरजन से नही हो पाती। प्रेमचंद जी को यह बात दुःखी करती थी इसी लए उन्होंने इस उपन्यास के माध्यम से हमारे समाज की इस समस्या को चत्रित कया है। वे इस बात से चंतित थे क जीवन में शादी व्याह जैसे महत्वपूर्ण निर्णय को गुण के आधार पर नही बल्कि पैसे के आधार पर कया जाता है।

जिस सुख की कल्पना कर मुंशी जी ने अपनी बेटी वरजन का ववाह कमलाचरण जैसे आवारा से कर दिया था, उसकी सच्चाई का पता लगने पर वे दुःखी होते है। समय बीतने के बाद पश्चाताप करने से कोई फायदा नही। वे दुःखी होते है, वरजन भी खुश नही और प्रताप भी मन ही मन घुटता है। अन्तम में कमलाचरण की मृत्यु हो जाती है। वधवा वरजन कवयित्री बन अपनी सहेली माधवी को प्रेरित करती है। इस प्रकार जीवन में आये दुःख का सामना करते हुए वह अपने आपको निराशा से मुक्त कर लेती है। यहाँ पर नारी की सहनशीलता और धैर्य का ज्वलन्त उदाहरण है जो दूसरों को प्रेरणा देता है।

प्रतिज्ञा- 'प्रेमा'

इसमें लेखक ने वधवा ववाह की समस्या को उठाया है। अमृतराय और दाननाथ दो परम मत्र है जो प्रेमा नामक एक लड़की से प्यार करते है। प्रेमा अमृतराय की साली है। प्रेमा की बड़ी बहन

की मृत्यु के बाद उसकी शादी अपने जीजा अमृतराय से करने का निर्णय लया जाता है। इस बात से दाननाथ दुःखी होता है। एक दिन अमृतराय का वधवा ववाह के सम्बन्ध में व्याख्यान सुन वे प्रभा वत होकर वधवाओं की सेवा करने की प्रतिज्ञा लेते है। इसमें प्रेमा के पता को दुःख होता है और वे प्रेमा की शादी दाननाथ से कर देते है। प्रेमा की एक सहेली है पूर्णा, जिसका पति वसन्तकुमार होली के दिन भंग पीकर गंगा में डूब जाता है। प्रेमा अपनी सहेली को अपने घर में रख लेती है। प्रेमा का भाई कमला प्रसाद जो शादीशुदा है उसकी कुदृष्टि पूर्णा पर पड़ती है तो वह वहाँ से भागकर अमृतराय के वधवाश्रम में रहने लगती है। तब से कमला प्रसाद का हृदय परिवर्तन हो जाता है।

कमलाप्रसाद की पत्नी सु मत्रा इस उपन्यास की सशक्त पात्र है। वह अपने पति की धूर्तता का वरोध करती है और एक स्त्री के अ धकारों के लए लड़ती है। आज भी सवर्ण समाज में बहुत सी ऐसी नारियाँ पाई जाती है जो पति की धूर्तता और बदमाशी के आगे घुटने टेक देती है और घुट-घुट कर जीती है। आज सु मत्रा जैसी जुझारू स्त्रियों की आवश्यकता है जो अपने बर्ताव से पुरूष की क्रूरता को जीतकर उसकी यातनाओं से मुक्त हो सकती है। नारी का अपना अस्तित्व है और उसे अपनी पहचान हेतु लड़ना है।

रंगभू म- 'माँ'

इसमें प्रेमचंद ने औद्योगीकरण की समस्या को उठाया है। इसका प्रमुख पात्र पांडेरपुर की एक बस्ती का अन्ध भखारी है। उसने म ू नामक एक बच्चे को पाल रखा है। उसके माँ-बाप की मृत्यु के बाद वही उसकी दुनिया है। सूरदास के पास एक छोटी सी जमीन है जिसे उसने सार्वजनिक प्रयोग के लए छोड़ रखा है। जानसेवक नामक एक उद्योगपति की नजर उस जमीन पर पड़ती है। वह उस जमीन पर सगरेट का कारखाना खड़ा करना चाहता है। इस जानसेवक की पत्नी कुँअर वनय संह को प्रेम करती है ले कन वनय संह सो फया के प्रेम में पागल है। जब कुँअर वनय संह की माँ रानी जान्हवी को सो फया के बारे में पता चलता है तो रानी साहिबा को खुशी नही होती। वह तो अपने बेटे को सच्चा देशभक्त बनाना चाहती थी। जानसेवक सूरदास की जमीन हड़प लेता है। गाँव के लोग बिखर जाते है और सूरदास आ खरी दम तक लड़ता है।

इसमें प्रेमचंद जी एक ओर वनय संह और सो फया के प्रेम द्वारा जीवन का प्रगतिशील आयाम प्रस्तुत करते है तो दूसरी ओर सूरदास के माध्यम से जागृत भारतीय जनता को प्रतीकात्मक ढंग से उभारते है। रंगभू म का सूरदास सगरेट के कारखाने का जी-जान से वरोध करता है। यह संसार उसके लए रंगभू म है। वह जीवन की इस खेल-भू म का सच्चा खलाड़ी है। देश स्वतंत्र है तो हम स्वतंत्र है। हमारी स्वतंत्रता हमारे हाथों में है। इस कथा में एक माँ अपने बेटे को देशभक्ति की ओर ले जा रही है। एक माँ ही दूसरी माँ की पीड़ा को समझ सकती है।

कायाकल्प- रानी देव प्रया-

इसमें चक्रधर और रानी देव प्रया की कहानी है। यह कहानी कल्पना पर आधारित है इस लए यह सीधे तिलस्मी उपन्यास की श्रृंखला में आ जाती है। चक्रधर का ववाह आगरा के यशोनन्दन की पा लत पुत्री अहिल्या से होता है। इसी अहिल्या से उन्हें एक पुत्र होता है- शंखधर। शंखधर की मुलाकात रानी देव प्रया से होती है। रानी देव प्रया जगदीशपुर की रानी है। वह वधवा है, पर खूब भोग- वलास में जीवन व्यतीत करती है। उसके जीवन में जो भी युवा पुरूष आते है, वे सब उसके पूर्व जन्म के पति होते है या प्रेमी होते है। जब वह शंखधर से मलती है तो दोनों में प्रेम हो जाता है। रानी देव प्रया कमला बनकर शंखधर से ववाह करती है। रानी को शाप है क जब वह कसी युवक के प्रति वासना ग्रस्त होती है तो उसकी मृत्यु हो जाती है। जब शंखधर की भी मृत्यु होती है वह वासना को त्याग देती है और सात्त्विक जीवन व्यतीत करती है। यही कायाकल्प है। रानी स्वयं जाग्रत होकर अपने जीवन को सार्थक बनाती है।

यह कहानी परी कहानी प्रतीत होती है। रानी चर युवा है। इसके माध्यम से लेखक स्त्री-जीवन की वडम्बना का चत्रण करते है क कोई भी चीज यदि सीमोल्लंघन करे तो उसका काया-पलट होना आवश्यक है। स्त्री अगर स्वच्छंद हो गयी तो उसकी स्वतंत्रता खो जाती है। उसे अपने अस्तित्व की प वत्रता को बचाकर रखना चाहिए।

निर्मला-

यह कहानी हमारे समाज में निहित अनमेल ववाह तथा उससे जुडी अनेक समस्याओं का अंकन करती है। यह नारी जीवन की महान त्रासदी के रूप में मुखरित हुई है। बाबू उदयभानुलाल अपनी बेटी निर्मला के ववाह के लए दहेज की रकम जुटाते है। वे वकील है। एक अपराधी को सजा दिलाने के कारण वह (मतई) जब जेल से छूटता है बदले की भावना से बाबू उदयभानु को मार डालता है। यही से निर्मला के जीवन का बुरा समय प्रारम्भ होता है। निर्मला का ववाह भालचन्द के बेटे भुवन से तय हुआ था। उन्हें बिना माँगे बहुत कुछ मलने का लालच था। ले कन बाबू उदयभानु लाल की असमय मृत्यु के बाद भालचन्द और भुवन इस ववाह से इंकार कर देते है। भालचन्द की पत्नी रंगीली बाई को भारी मन से मना करना पड़ता है। तब कल्याणी को मजबूरन निर्मला का ववाह मुंशी तोताराम से करना पड़ता है जो वधुर है और उसके पता की उम्र का है। तोताराम की पहली पत्नी से तीन लड़के है- मंसाराम, जियाराम, और सयाराम। तोतोराम निर्मला से ववाह कर उसका प्रेम पाने का लाख प्रयत्न करता है ले कन उसका आकर्षण मंसाराम के प्रति होता है। उसे अपनी वधवा ननद रूक्मिणी के रूखेपन को भी सहन करना पड़ता है। तोताराम का दूसरा बेटा सयाराम साधुओं के साथ भाग जाता है और उसके लए निर्मला को दोषी ठहराया जाता है। फर वह बीमार पड़ जाता है। तोताराम अपने खोये बेटे को ढूढ़ने के लए निकल पड़ता है। यहाँ निर्मला की मृत्यु हो जाती है.

इस प्रकार हम देखते है क दहेज की समस्या से निर्मला का अनमेल ववाह होता है जिसके परिणामस्वरूप निर्मला जैसी नन्हीं सी जान को बड़ी बुरी परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है। निर्मला अन्त में एक बच्ची को जन्म देती है और उसे रूक्मिणी ननद के हाथों सौंपती हुई कहती है-

"बच्ची को आपकी गोंद में छोड़ जाती हूँ। अगर जीती जागती रहे तो कसी अच्छे कुल में ववाह कर दीजियेगा। मैं तो अपने जीवन में उसके लए कुछ न कर सकी केवल जन्म देने भर की अपरा धनी हूँ। चाहे कुँवारी र खयेगा, चाहे वष देकर मार डा लयेगा, पर कुपात्र के गले न मढ़ियेगा, इतना ही आपसे वनय है।

निर्मला की स्थिति एक आम औरत की स्थिति है। आज भी यदि निर्मला जैसी कसी स्त्री की मृत्यु होगी तो वह भी ऐसी ही कहेंगी। यही इस उपन्यास की प्रासं गकता है। निर्मला अपने जीवन में काफी त्रासदियों का सामना करती है और अन्त में अपने अनुभव से नारी मुक्ति का रास्ता खोज पाती है। नारी-जीवन तभी सुन्दर है जब उसकी परिस्थितियाँ अनुकूल हो।

कर्मभू म- 'मुन्नी'-

इस उपन्यास में लेखक ने तत्कालीन सामाजिक राजनितिक परिवेश का वर्णन कया है। समरकान्त का दूसरा ववाह हुआ, जिससे उन्हें एक बेटी हुई, उसका नाम नैना है। उनकी पहली पत्नी से एक बेटा है जो गाँधीवादी वचारों वाला है। इस लए समरकान्त और उनके बेटे के बीच बनती नही थी। ले कन समरकांत के बेटे अमरकांत और नैना के सम्बन्ध अच्छे थे। दोनों भाई-बहन में बहुत प्यार था। समरकान्त की दूसरी पत्नी की भी मृत्यु हो जाती है। अमरकान्त का ववाह सुखदा से होता है। सुखदा की अपने पति से बनती नही थी, इस लए अमरकान्त का आकर्षण सकीना नामक एक मुस्लिम महिला की ओर खंचता है। जब इस बात को लेकर घर में बहस होती है तो वह घर छोड़कर चला जाता है। गाँधीवादी होने के कारण अछूतोध्दार के आन्दोलन में शा मल हो जात है। वह जिस गाँव में सेवा कार्य करता है वहाँ उसकी मुलाकात मुन्नी नामक स्त्री से होती है, जो धैर्यवान है। कसी गोरे ने उसका अपमान कया तो उसके बदले वह गोरे की छाती में छुरा भोंक देती है। उसके पति ने पहले उसका परित्याग कया था, बाद में वह उसे अपनाता है। मुन्नी एक तेज-तर्रार नारी है, जो सच का ही साथ देती है। उसी गाँव में एक चमार मरी हुई गाय का माँस लेने गया तो उन्हें समझाने का खूब प्रयास करती है क गाय का माँस नहीं खाना चाहिए पर लोग नही समझते तो वह बात मनवाने के लए सत्याग्रह पर उतर जाती है।

इस प्रकार इस उपन्यास में चत्रित मुन्नी के माध्यम से प्रेमचंद अछूतोध्दार, कसानों और गरीबों पर हो रहे शोषण को दिखाते है और यह बताने का प्रयास करते है क नारी चाहे तो कुछ भी कर सकती है। नारी हृदय सुदृढ भी है औ चंचल भी। ले कन यदि कुछ करने की ठान ले तो अवश्य कर सकती है।

गोदान- 'पुष्पा'-

यह एक कसान की संघर्षपूर्ण कथा है। होरी एक मामूली कसान है और उसकी पत्नी धनिया, जमींदार के द्वारा कये गये शोषण का वरोध करती है। होरी को अपने घर गाय बाँधने की तीव्र इच्छा है, इस इच्छा को पूरा करने के लए वह कर्जदार बन जाता है। खेती से उसे की फायदा नहीं होता। एक बेटा था, वह भी शादी के बाद पत्नी को लेकर अपनी आजी वका के लए शहर बस जाता है।

होरी का बेटा गोबर का आ र्थक वषमता के कारण गाँव से शहर की ओर उन्मुख होना और अन्त में होरी का एक कसान से मजदूर बन जाना ही इस कथा का मुख्य भाव है। जहाँ होरी की पत्नी धनिया संघर्ष करके गाँव में रहकर जीवन बिताना चाहती है। वहीं गोबर की पत्नी झुनिया अपनी सुख-सु वधा के लए शहर में बस जाना ही सही मानती है, ले कन शहर की स्थिति गाँव-सी है। वहाँ भी छँटनी होती है।

गोदान एक यथार्थवादी उपन्यास है, जो भारतीय कसान के सत्य का उद्घाटन करती है। यह रचना अपने समय का दस्तावेज है जो भारतीय कसान के ग्रामीण जीवन का सच्चा चत्र प्रस्तुत करती है। धनिया एक सशक्त एवं जागरूक पात्र है।

मंगलसूत्र- 'पुष्पा'

यह प्रेमचंद जी का अन्तिम एवं अपूर्ण उपन्यास है। इसका मुख्यपात्र है- देवकुमार। उनके दो बेटों और एक बेटी की यह कथा है। देवकुमार के दो बेटे सन्त कुमार और साधु कुमार है, तो उनकी बेटी पंकजा है। सन्त कुमार वकील है तो साधु कुमार ने बी.ए. कया है। देव कुमार अहंकारी है और चाहते हैं क हर कोई उनके कदमों पर आ गरे, उनकी खुशामद करे। सन्त कुमार की पत्नी पुष्पा तेज-तर्रार है। वह एक जागरूक महिला के रूप में चत्रित है। वह घर में स्त्री से कये जाने वाले कार्यों के पीछे छिपे श्रम का वर्णन करती है। इस उपन्यास में एक लेडी डा. है मस बटलर। वह आजीवन कुमारी रहती है। पुष्पा कई बार कहती है क स्त्री को सम्मान से जीना चाहिए। और वह लेडी डाक्टर का उदाहरण देकर समझाती है क कस प्रकार स्त्री अकेली रहकर भी सम्मानपूर्वक रह सकती है। पुष्पा से प्रतिवाद करते हुए सन्त कुमार कहते है- उनके समाज में और हमारे समाज में बडा अन्तर है। तब पुष्पा, सन्त कुमार के कथन का उत्तर देते हुए कहती है- अर्थात् उनके समाज के पुरूष शष्ट है, शीलवान है और हमारे समाज के पुरूष चरित्रहीन, लम्पट, वशेषकर जो पढ़े- लखे है। सच में पुष्पा का कथन कतना प्रासं गक और समीचीन प्रतीत होता है।

इस उपन्यास में प्रेमचंद ने दाम्पत्य प्रेम, पता-पुत्र का सम्बन्ध, साहित्यकार धर्म और दर्शन के आदर्शवादों के पीछे सत्य का उद्घाटन करने का प्रयास कया है। अतः प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी के व वध पहलुओं का वस्तारपूर्वक वर्णन हुआ है। इसके नारी-पात्र व्यापक आयाम लये हुए है।

गाँधी दर्शन से प्रभा वत होकर मानव प्रेम के चरन्तन सत्य को लेकर प्रेमचंद झोपड़ी से लेकर महलों तक के सूक्ष्म निरीक्षक बने। प्र सध्द आलोचक और हिन्दी साहित्य के इतिहास में डा. रामस्वरूप चतुर्वेदी प्रेमचंद की रचनाओं का आन्तरिक अर्थ खोजते हुए कहते है- "आदर्श और यथार्थ घटना और अनुभूति का क्रमशः संतुलन प्रेमचंद अपनी अन्तिम रचनाओं में पाते है जिससे उनकी पछळी कथा-कृतियाँ, पूर्व प्रभावी ढंग से आलो कत हो उठती है। गोदान उपन्यास का अँधेरा सेवासदन को प्रका शत करता है और

कफन कहानी का पंचपरमेश्वर तक। परिवार की जिस इकाई को तुलसीदास ने व वध पक्षों में अ कत कया, उसी की अनेक तरह की स्थितियों और परिणतियों को द् ववेदी युग के लेखकों ने चत्रित कया-

"काव्य रूप में मै थलीशरण गुप्त

कथाकृतियों के रूप में प्रेमचंद"

मै थलीशरण गुप्त मर्यादावादी क व है तो प्रेमचंद अपने मु खया चरित्र होरी के माध्यम से मरजाद वाले कथाकार है। मर्यादा पुरूषोत्तम राम और मरजाद के लए अपने को होम देने वाला होरी इसी एक बिन्दु पर संवेदनात्मक रूप में एक-दूसरे के निकट आते है। अन्यथा दो ध्रुवों पर स्थित इन भारतीय चरित्रों के बीच क्या तुलना हो सकती है ? यह सब जो हुआ प्रेमचंद के समय का था पर जरा अब के समय पर दृष्टि डाले तो समय और समाज थोड़ा बदला। नारी की सदियों की चुप्पी टूटी, जिससे नारी के सामाजिक, पारिवारिक स्थिति में सुधार आया। इस प्रगति और सुधार ने नारी जीवन में अलग परेशानियाँ और समस्यायें खड़ी कर दी। परिणामस्वरूप समाज की भाँति साहित्य में नारी चेतना, नारी- वमर्श का स्वरूप सामने आया। आज साहित्यलोचना का सबसे ववादित क्षेत्र है- नारी और द लत। ये दोनों शो षत है और सदा के लए हा शए पर रखे गए है। दुनिया चाहे कतनी भी तरक्की कर ले वह अपने आपको कतना भी प्रगतिशील क्यों ने माने फर भी उसने नारी को पुरूष प्रधान आचरण से मुक्त नही कया। सदियों से पुरूष, स्त्री की हर हलचल को नियंत्रित करता रहा है। जैसे-

'कहिये। मैं कैसे दिखूँ ?

मैं कैसे हँसू ?

क्या पहनूँ और क्या ओढूँ ?

पढ़ूँ न पढ़ू ?

करूँ या न करूँ आदि.....

नारी ने इन पाबन्दियों और बन्धनों को ववश होकर स्वीकार कया ले कन अब उसमें जागरूकता आयी।

केवल नारी होना, नारीवाद नही। नारी ल खत पुस्तक भी नारीवादी नही। नारीवाद, नारी-

मुक्ति संघर्ष और उससे नि र्मत आन्तरिक चेतना से सम्बन्धित है। नारीवाद आधुनिक काल की संकल्पना है, जिसमें नारी को एक व्यक्ति या मानव के रूप में प्रतिष्ठित कया जाता है। नारी समाज द्वारा न देवी के रूप में पूजी जाना चाहती है और न अबला के रूप में प्रता ड़त। वह तो समान मानव अ धकार चाहती है। उसकी यही चेतना ने मुक्ति संघर्ष के दौरान नारीवाद का रूप लया और साहित्य में यही वचारधारा प्रवाहित हुई। प्रेमचंद नारी को सामाजिक बे ड़यों से मुक्त कर उसे एक सामान्य जीवन जीने देना चाहते है जो हर यातना, पीड़ा, अपमान, शोषण से मुक्त हो।

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

मीरा शक्ति और सहनशीलता

मंजु रानी

तदर्थ असिस्टेंट प्रोफेसर (दिल्ली विश्वविद्यालय)

हिन्दी विभाग, किरोड़ीमल कॉलेज

''राधे–राधे सब बोलते हैं
मीरा–मीरा कब बोलेंगे
त्याग, सहनशीलता की मूर्ति को
कब इस जग में लोग सराहेंगे ?''

स्त्रीवादी लेखन में मीरा की भूमिका महत्वपूर्ण उस पुल का काम करती है जिस पर निरन्तर स्त्रियाँ आज भी चलती आ रही है। साहित्य में जब भक्तिकाल आया मीरा के काव्य ने समाज की जंजीरें तोड़ कर क्या जोधपुर, क्या गुजरात, क्या मथुरा, क्या वृंदावन सर्वत्र अपने साहित्य की अमिट छाप छोड़ दी है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास–ग्रंथों में मीराँबाई पर अन्यन्त संक्षिप्त व परिचयात्मक सामग्री प्राप्त होती है अथवा इन ग्रंथों में उन पर यथोचित रूप में प्रकाश नहीं डाला गया है। यह कहा जाता रहा है कि हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रन्थों में उन पर यथोचित रूप में प्रकाश नहीं डाला गया है।यह कहा जाता रहा है कि हिन्दी साहित्य के इतिहास–ग्रन्थों में मीराँबाई पर उतना और उस रूप में विचार नहीं किया गया है, जितना और जिस रूप में कबीर, जायसी, सूर और तुलसी पर तथा हिन्दी के अन्य कालों के कुछ खास रचनाकारों पर विचार किया गया है। ऐसा इसलिए हो पाया है, क्योंकि मीराँ किसी सम्प्रदाय, पन्थवादी अथवा धारा से सम्बद्ध नहीं थी। कबीर, जायसी, सूर तथा तुलसी के पश्चात् मीराँ का ही नाम स्वतः आता है और उनके बाद रसखान का नाम लिया जाता है।

सबसे पहले बात शुरू करते हैं आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की इतिहास–पुस्तक से। आचार्य शुक्ल ने लगभग सवा पृष्ठ में मीराँ पर विचार किया है। ''मीराँबाई की उपासना 'माधुर्य भाव' की थी अर्थात् वे अपने इष्टदेव श्रीकृष्ण की भावना प्रियतम या पति के रूप में करती थीं।

मीराँबाई का नाम भारत के प्रधान भक्तों में है और इनका गुणगान नाभाजी, ध्रुवदास, व्यास जी, मलूकदास आदि भक्तों ने किया है। इनके पद कुछ तो राजस्थानी मिश्रित भाषा में है और कुछ विशुद्ध साहित्यिक ब्रजभाषा में। पर सबमें प्रेम की तल्लीनता समान रूप से पाई जाती है।'' स्पष्टतः आचार्य शुक्ल की सूत्रात्मक शैली–अर्थात् सूत्रवाक्य में अधिकाधिक कह देने की कला–दृष्टिगोचर होती हैं। इस थोड़े–से वर्णन में शुक्ल जी ने मीराँ और तुलसीदास के बीच परस्पर पद लिखकर भेजनेवाली बात को जनश्रुति–जन्य व कल्पनाधारित बताया है, मीराँ के सूफियों से प्रभावित होने की भी चर्चा की है तथा उनके बनाए चार ग्रन्थों–नरसी जी का मायरा, गीतगोविन्द टीका, राग गोविन्द, राग सोरठ के पद–के नाम गिनाए हैं।[1]

जिस आकार–प्रकार में आचार्य शुक्ल ने मीरा पर विचार किया है लगभग वैसा ही विचार आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का भी दिखाई देता है। वही सवा पृष्ठ के लगभग! आचार्य द्विवेदी की दृष्टि में भी मीराँबाई हिन्दी की प्रसिद्ध भक्त कवि हैं। मीराँ और तुलसीदास के मध्य पद के रूप में हुए पत्र–व्यवहार का उल्लेख उन्होंने भी किया है। मगर उन्होंने भी इसे किदवन्ती मात्र ही बतलाया है। आचार्य द्विवेदी ने उस छोटे–से आकार के वर्णन में कुछ ऐतिहासिक बातों का भी जिक्र कर दिया है। कर्नल टॉड के उस कथन का खंडन किया है कि मीराँ महाराणा कुम्भा की स्त्री थीं। उन्हेंाने विलियम क्रुक, मुंशी देवी प्रसाद और महामहोपाध्याय गौरीशंकर हीराचन्द ओझा के स्वरों में स्वर मिलाया है कि मीराँबाई वस्तुतः राणा कुम्भा की स्त्री नहीं थीं, बल्कि राणा साँगा के पुत्र भोजराज से ब्याही गई थीं।

आचार्य द्विवेदी ने अपने इस अल्प विवेचन की मारफत यह बता दिया है कि मीराँ हिन्दी साहित्य की प्रसिद्ध भक्त, कवयित्री हैं और उनकी कविताई भी अव्वल दर्जे की है।[2]

आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने 'हिन्दी साहित्य का अतीत (प्रथम भाग)' में 'मीराँ की साधना और अभिव्यक्ति' नामक शीर्षक से लगभग नौ पृष्ठों' में मीराँबाई पर विचार किया है। मीराँबाई को केन्द्र में रखकर उन्होंने निर्गुण–सगुण मार्ग, सूफी धारा, चैतन्य सम्प्रदाय, सूर, तुलसी, घनआनन्द, छायावादी कवियों और उनमें भी विशेषकर महादेवी की चर्चा की है। मीराँ पर किन–किन लोगों का किस–किस रूप में प्रभाव पड़ा है, किस भावधारा को मीराँ ने कितने परिमाण में ग्रहण किया है तथा अन्य लोगों से तुलना करने पर मीराँ की कौन–सी छवि हमारे सामने प्रकट होती है– ये सारी बातें आचार्य मिश्र के विवेचन से सामने आती हैं। यों आचार्य मिश्र ने मीराँ के काव्य में निर्गुण–सगुण दोनों प्रभावों को देखा है और इसी कारण उन्हें 'उभयविशिष्ट मार्ग' में शामिल किया है।

आगे आचार्य मिश्र ने मीराँ की विशेषता और समान भावधारा के कवियों से हटकर उनकी मौलिकता का मूल्यांकन इस प्रकार किया है कि "सूफी जिस प्रकार केवल विरह में रहना चाहता है या विरह की साधना को ही प्रधान मानता है अथवा छायावादी कवि जिस विरह–साम्राज्य का प्राणी होता है अथवा जिस नैराश्य में प्रवाहित होते रहना चाहता है वह मीराँ में नहीं हैं।...महादेवी वर्मा जिस पीड़ा में निरंतर पड़ी रहना चाहती हैं उसका हेतु यही है कि उनका प्रिय परम पुरुष निर्गुण है, किन्तु मीराँबाई ने जिस पुरुषोत्तम को अपना प्रिय बनाया वह सगुण है।

आचार्य मिश्र ने काव्यशास्त्रीय धरातल पर अनेक रचनाकारों से मीराँ का जो तुलनात्मक विवेचन किया है वह काबिले तारीफ है।[3]

डॉ. रामकुमार वर्मा ने अपने इतिहास–ग्रन्थ 'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास' में लगभग सवा तेईस पृष्ठों में मीराँबाई पर विचार किया है। वे सर्वप्रथम मीराँबाई का सामान्य परिचय कुछ इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं– "मीराँबाई राजस्थान की कवयित्री थीं।

डॉ. वर्मा ने नाभादस के 'भक्तमाल', प्रियादास की 'टीका', चौरासी वैष्णवन की वार्ता', 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता', वेणी माधवदास का 'गोसांई चरित', दयाराम का 'मीराँ चरित्र' व 'भक्तवेल', राधाबाई का 'मीराँ माहात्म्य', दयाबाई की 'विनयमालिका', ध्रुवदास की 'भक्तनामावली' आदि पुस्तकों का उल्लेख किया है और उनमें मीराँबाई के विषय में लिखी गई पंक्तियों को उद्धृत करते हुए उसके अर्थ एवं भाव को स्पष्ट किया है। अनेक देशी–विदेशी इतिहासकारों की पुस्तकों में उल्लिखित मीराँबाई से सम्बन्धित विवरणों को भी बड़े प्रामाणिक ढंग से सन्दर्भों के साथ डॉ. वर्मा ने वर्णन किया है और मीराँबाई के 'जीवन–चरित्र' को उपर्युक्त सारे तथ्यों के आधार पर स्पष्ट तरीके से रखने का प्रशंसनीय उपक्रम किया है।

मीराबाई के सम्बन्ध में डॉ. वर्मा के समग्र विवेचन को देखने के उपरान्त निष्कर्ष के तौर पर यही कहा जा सकता है कि उन्होंने अत्यन्त शोधपरक, तथ्यपरक, सन्दर्भसहित व प्रामाणिक ढंग से मीराँबाई के जीवन और साहित्य पर प्रकाश डाला है। उनके इस वर्णन को पढ़ते समय शोध आलेख पढ़ने का आनन्द प्राप्त होता है।[4]

डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने अपने इतिहास ग्रन्थ 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में पृष्ठों में मीराँबाई पर विचार किया है। डॉ. वार्ष्णेय ने मीराँ पर लिखते समय प्रारम्भ में ही कह दिया है– ''कृष्ण–भक्ति–परम्परा में राजस्थानी की मीराँ का भी विशेष स्थान है। हिन्दी काव्य की कोकिला मीराँ ने माधुर्य भाव (दाम्पत्य भाव) में भक्ति भावना ग्रहण कर और स्वयं विरहिणी बनकर अपने आराध्य देव श्रीकृष्ण से विरह की भिक्षा माँगी।) कुल मिलाकर, यह कहा जा सकता है कि डॉ. वार्ष्णेय ने मीराँ के जीवन और साहित्य का यथातथ्य व सन्तुलित मूल्यांकन किया है तथा उनके इस मूल्यांकन से कतिपय नूतन बातें भी प्रकाश में आई है।''[5]

डॉ. गणपतिचन्द्र गुप्त ने अपने इतिहास–ग्रन्थ 'हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास (प्रथम खंड)' में लगभग छह पृष्ठों में मीराँबाई पर विचार किया है और उन्हें 'सम्प्रदाय–निरपेक्ष हिन्दी कवि' की कोटि में स्थापित किया है। अपने वर्णन के प्रारभिक अंश में 'मीराँबाई' नाम के शब्द और अर्थ का विश्लेषण किया है। फिर मीराँबाई के जीवनवृत्त पर प्रकाश डाला है।

मीराँ के 'काव्यत्व' पर अपना मन्तव्य व्यक्त करते हुए डॉ. गुप्त लिखते हैं कि– ''मीराँ के काव्य में विरहानुभूतियों की व्यंजना सहज स्वाभाविक रूप में हुई है। उनकी कविता, कविता के लिए रचित नहीं, अपितु उसे भावावेश में व्यक्त उद्‌गारों का संकलन कहना अधिक उपयुक्त होगा।[6]

'हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास' डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी का एक चर्चित इतिहास–ग्रन्थ हैं और इसमें उन्होंने तीन पृष्ठों में मीराँबाई पर अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। अत्यन्त मौलिक अन्दाज में वे मीराँबाई के महत्त्व को उद्‌घाटित करते हुए लिखते हैं कि– ''मीराँ का काव्य उन विरल उदाहरणों में है जहाँ रचनाकार का जीवन और काव्य एक–दूसरे से घुल–मिल गए हैं, परस्पर सम्पर्क–से वे एक–दूसरे को समृद्ध करते हैं। इसका अर्थ यह भी है कि जीवन–वृत्त से अलग किए जाने पर इस काव्य की सर्जनात्मक क्षमता घट जाती है। मिलता–जुलता नारी–चरित्र होने के कारण गोपियों की विरह–भावना का अध्यारोपण मीराँ पर आसानी से हो जाता है। उनका काव्य सूर द्वारा विस्तार में चित्रित गोपियों की विरहोन्मुखता की 'डिटेल' या ब्योरा है। जीवन–वृत्त में ब्रज की गोपियों से, और रचनाधर्मिता में सूरदास से एकबारगी साम्य मीराँ के पदों में अतिरिक्त तीव्रता भरता है।[7]

डॉ. बच्चन सिंह लिखित 'हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास' एक चर्चित इतिहास–ग्रन्थ है और इस कृति में उन्होंने लगभग तीन पृष्ठों में मीराँबाई पर अपना मन्तव्य व्यक्त किया है। वे स्पष्टतः मीराँबाई को 'सम्प्रदाय निरपक्ष कवि' की कोटि में शुमार करते हैं और उन्हें किसी भी धार्मिक सम्प्रदाय में दीक्षित नहीं होने तथा किसी दूसरे की भावभूमि में चाहे वह गोपी–भाव की भूमि हो या राधा–भाव की प्रवेश कराने के पक्षपात नहीं हैं। उनके अनुसार मीराँ स्वयं भाव–स्वरूप हैं।[8]

डॉ. नगेन्द्र द्वारा सम्पादित 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में लगभग ढाई पृष्ठों में मीराँबाई पर डॉ. विजयेन्द्र स्नातक ने विचार किया है। डॉ. स्नातक ने 'सम्प्रदाय–निरपेक्ष कृष्ण–काव्य' के अन्तर्गत मीराँबाई को स्थापित किया है और उनके जीवन और साहित्य पर विचार किया है। वे सम्बन्धित लेख की शुरुआत ही इन शब्दों में करते हैं– ''भक्तिकाल में कुछ ऐसे कवि भी हुए,

जिन्होंने सम्प्रदाय विशेष में न बँधकर राधा–कृष्ण की विभिन्न लीलाओं का स्वतन्त्र भाव से वर्णन किया है। इनमें मीराबाई और रसखान प्रमुख है। विभिन्न भक्तमालों एवं वार्ताग्रन्थों में भी मीराँ सम्बन्धी अनेक साक्ष्य प्राप्त हैं। राजपूताना के कतिपय प्रशस्ति–पत्रों, अभिलेखों, दानपत्रों और कुछ प्राचीन चित्रों में भी उनके जीवन से सम्बन्धित कई तथ्य उपलब्ध हैं।[9]

सभी इतिहासकारों ने साहित्य में मीरा की प्रमुख भूमिका दर्शाई है। उक्त इतिहासकारों ने 'इतिहास–ग्रंथ' साहित्य में मीरा पर अपना मन्तव्य व्यक्त कर रहे हैं, मीरा के सम्बन्धित किसी 'स्वतंत्र पुस्तक' के संदर्भ में नहीं। मीरा के जीवन और साहित्य में मीरा की अहम भूमिका पर सभी इतिहासकारों ने सूक्ष्मता से विचार विमर्श किया हैं। मीरा एक उच्चकोटि की वह स्त्री है जिसका नाम आज भी हम कबीर, तुलसी, सूर आदि महान, संत, साहित्यकारों के साथ गर्व से लेते हैं।

पुरुषवादी समाज की बेड़ियों से आजाद हो विशाल आकाश में पंख फैलाये स्त्रीवादी साहित्य अपनी चरमसीमा को लांघकर हमारे समक्ष आज भी सजीव रूप से मीरा विद्यमान है।

संदर्भ :

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, तीसवाँ संस्करण, संवत् 2052 वि., पृ. 101–102
2. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य : उद्भव और विकास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, छठा संस्करण, 1990, आठवीं आवृत्ति, 2007, पृ. 111–112
3. आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, हिन्दी साहित्य का अतीत, प्रथम भाग, वाणी प्रकाशन, प्रथम संस्करण : 2006, पृ. 111–119
4. डॉ. रामकुमार वर्मा, हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद, आठवां संस्करण : 2010, पृ. 545–68
5. डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, हिन्दी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद–1, संस्करण : 2009, वृ. 168–173
6. डॉ. गणपतिचन्द्र गुप्त, हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद–1, नवम्, संस्करण : 2010, पृ. 280–285.
7. डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद–1, संस्करण : 1991, पृ. 59–62
8. डॉ. बच्चन सिंह, हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली–2, तीसरी आवृत्ति : 2009, पृ. 250–52
9. डॉ. नगेन्द्र सम्पादक, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली–02, संस्करण : 1998, पृ. 250–52

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

स्वाध्यायान्मा प्रमदः

डॉ0 अजित कुमार जैन
एम0ए0 (संस्कृत,हिन्दी,अंग्रेजी, अर्थशास्त्र)
आचार्य (जैन दर्शन) एल0एल0बी0, पी–एच.डी.
एसोसियेट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
संस्कृत विभाग– एस0वी0 कॉलेज, अलीगढ़

भारतीय ज्ञान परम्परा का बीज, वेदों का शाश्वत उद्घोष, उपनिषदों का प्राण, जीवात्मा को परमात्मा प्राप्त्यर्थ कारणभूत 'स्वाध्यायान्मा प्रमदः' केवल सूक्ति ही नहीं है अपितु सत्य है। भारतीय मनीषा सदैव से ही सत्यान्वेषी प्रवृत्ति की रही है। अतः यह चिन्तन अत्यन्त समीचीन और परमोपादेय है।

'स्वाध्याय' शब्द 'स्व' और 'अध्याय' के सन्धि करने पर निष्पन्न है। शाब्दिक अर्थ है 'अपना अध्ययन' अर्थात् आत्मा का अध्ययन, आत्म ज्ञान। चूँकि ज्ञान बल है, इस बल को पाने में किसी भी प्रकार आलस्य–प्रमाद भूल–चूक नहीं होनी चाहिए। मेरा अभिमत है कि भूयोविद्य होने के लिए प्रतिपल प्रतिक्षण ज्ञान अर्जन करने के लिए उद्यत रहना चाहिए। सत्य का रूप–स्वरूप शास्त्रों के द्वारा केवल अंश रूप ही जाना जा सकता है किन्तु वास्तविक अनुभव सत्य को जीने से ही प्राप्त हो सकता है।

परिभाषा– आचार्य ने कहा है – **"स्वस्मै हितोऽध्यायः स्वाध्यायः"**[1] अर्थात् 'स्व' (आत्मा) का हित करने वाला अध्ययन 'स्वाध्याय' है। आचार्य पूज्यपाद स्वामी ने अपना मन्तव्य दिया है– **"ज्ञानभावनालस्य त्यागः स्वाध्यायः"**[2] अर्थात् आलस्य का सर्वथा त्याग कर सम्यक् ज्ञान की आराधना करना 'स्वाध्यायः' है। पूज्य ग्रथराज धवला में उल्लेख प्राप्य है– **"अंगांग बाह्य आगमवायण पुच्छणाणुपेहा परियट्ठण धम्म कहाओ सज्झाओ णाम्"**[3] अर्थात् अंग और अंगबाह्य आगम की वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षा, प्रवर्तन और धर्मकथा करना 'स्वाध्याय' है। कुंदकुंदाचार्य इस विषय को और सुगम करते हुए व्याख्या करते हैं–

"स्वाध्यायस्तत्वज्ञानस्याध्ययनमध्यापनं स्मरणं च"[4] अर्थात् तत्वज्ञान का अध्ययन अध्यापन, स्मरण आदि स्वाध्याय है।

उपरोक्त के अनुशीलन से मेरा अभिमत है कि स्वाध्याय जीवन की गति को प्रगति में बदलता है और चारित्र की शुद्धि–विशुद्धि बनाता हुआ दोषों को दूर करने में समर्थ है।

स्वाध्याय का विभाजन– आचार्य ने जीवन के सारभूत, आत्मदर्शी ज्ञान के साधनभूत स्वाध्याय के विभाजन के संदर्भ में कहा है– **"वाचना पृच्छनानुप्रेक्षाम्नाय धर्मोपदेशाः"**[5] अर्थात् स्वाध्याय के निम्न प्रकार 5 भेद हैं–

(1) **वाचना** : ग्रन्थ को पढ़ने के लिए उद्यत होना, स्वयं पढ़ना या आचार्य से पढ़ना, पाठ वाचन करना, यह सब 'वाचना' नाम का स्वाध्याय है।

(2) **पृच्छना** : शास्त्रों के अर्थ वांचने पर स्पष्ट नहीं होने पर अपने से बहुज्ञानी से जिज्ञासुभाव से प्रश्न कर पूछना, यह 'पृच्छना' नाम का स्वाध्याय है।

(3) **अनुप्रेक्षा** : पढ़ने से स्पष्ट, पूछने पर सुस्पष्ट तत्वज्ञान का बार–बार स्मरण करते रहना, चिन्तन करते रहना यह 'अनुप्रेक्षा' नाम का स्वाध्याय है।

(4) **आम्नाय** : पढ़े हुए, सुने हुए, जाने हुए, स्मरण किये हुए तत्वज्ञान को भविष्य में नहीं बोलना, सत्य स्वरूप उसे धारण किये रहना 'आम्नायः' नाम का स्वाध्याय है।

(5) **धर्मोपदेश** : आगम ग्रन्थों के सुस्पष्ट पाये हुए ज्ञान को हित मित प्रिय वाणी के द्वारा परज्ञान निमित्त उपदेश करना, अध्यापन करना, पढ़ाना, बताना यह सब 'धर्मोपदेश' नाम का स्वाध्याय है।

स्वाध्याय हेतु आगम का लक्षण – वस्तुतः हर प्रकार का ग्रन्थ स्वाध्याय योग्य नहीं कहा गया है। हिंसा जगाने वाला, मिथ्या ज्ञान देना वाला, विकार जनक, प्रमाणों से असिद्ध इत्यादि लक्षणों से युक्त ग्रन्थ हितकारक नहीं है। तब आचार्य ने कहा है –

"आप्तोपज्ञमनुल्लंघ्य मददृष्टेष्टमविरोधकम्।

तत्वोपदेश कृतसार्व शास्त्र का पथ घट्टनम्।।"[6]

पूज्यपाद स्वामी ने कहा है– **"प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः"**[7] अर्थात् आगम ग्रन्थों का विभाजन – **प्रथमानुयोग**[8]**, करणानुयोग**[9]**, चरणानुयोग**[10] **और द्रव्यानुयोग**[11] रूप से करते हुए विस्तार से इनके स्वरूप को स्पष्ट कर नमस्कार किया है।

स्वाध्याय का उद्देश्य– आचार्य ने स्वाध्याय को साधु और गृहस्थ दोनों के लिए ही आवश्यक कहा है– **"भावस्य भवणासणम्"**[12] । आचार्य ने और भी स्पष्ट करते हुए कहा है–

"आगम चक्खू साहू इन्द्रिय चक्खू सव्वभूदाणि।

देवा ओहि चक्खू सिद्धापुण सव्वदा चक्खू !!"[13]

आचार्य ने स्वाध्याय का उद्देश्य पुनः स्पष्ट करते हुए चिन्तन किया है– **"प्रज्ञातिशयः प्रशस्ताध्यवसायः परम संवेगस्तपोवृद्धिरतिचार शुद्धिः विशुद्धिरित्येवमाद्यर्थः"**[14] और भी कहा है – **"श्रुत स्कन्धे धीमान् रमयतु मनो मर्कटम्।"**[15]

स्वाध्याय के अंग– आचार्यों ने सम्यक्ज्ञान को परिपुष्ट करने के उद्देश्य से स्वाध्याय के 8 अंग बतलायें हैं–

(1) शब्दाचार (2) अर्थाचार (3) उभयाचार (4) कालाचार

(5) विनयाचार (6) उपधानाचार (7) बहुमानाचार (8) अनिह्नवाचार

स्वाध्याय विधि– सत्पात्र को प्रक्रियापूर्वक की गयी क्रिया समुचित फल देने में समर्थ है। अतः आचार्यवर कहते हैं कि–

"क्षेत्र संशोध्य पुनः स्वहस्तपादौ विशोध्य शुद्धमनाः प्रासुक देशावस्यो ग्रहीयात् वाचना पश्चात युक्ता समधीयमानो – – – – – – – श्रुतं वाचनामुन्चेत्।।"[16]

सारतः स्पष्ट है कि आत्मार्थी, ज्ञानार्थी, जिज्ञासु, भवभीत शिष्य को अपने गुरू की पूर्ण विनय शिष्टाचार करते हुए विधिपूर्वक स्वाध्याय करना अभीष्ट है और वही संसाररूपी भवसागर से पार करने में समर्थ है।

संदर्भ :

1– आचार्य कुंदकुद : चारित्रसार– 152 / 5

2– पूज्यपाद स्वामी : सर्वार्थसिद्धि– 9 / 20, 429 / 7

3– ग्रन्थराज धवला : पुस्तक 13 / 5

4– आचार्य कुंदकुद : चारित्रसार– 44 / 3

5– आचार्य उमा स्वामी : तत्वार्थ सूत्र– 9 / 25

6– स्वामी समन्तभद्र : रत्नकरण्ड श्रावकाचार– 19

7– पूज्यपाद स्वामी : दशभक्त्यादि संग्रह

8– स्वामी समन्तभद्र : रत्नकरण्ड श्रावकाचार– 43

9– स्वामी समन्तभद्र : रत्नकरण्ड श्रावकाचार– 44

10– स्वामी समन्तभद्र : रत्नकरण्ड श्रावकाचार– 45

11– स्वामी समन्तभद्र : रत्नकरण्ड श्रावकाचार– 46

12– आचार्य कुंदकुंद : सूत्र पाहुड़ – 3

13– आचार्य कुंदकुंद :प्रवचनसार– 234, 237

14– आचार्य पूज्यपाद : सर्वार्थसिद्धि– 9 / 25 / 443 / 6

15– आचार्य गुणभद्र : आत्मानुशासन– 170

16– ग्रन्थराज– धवला पुस्तक 9 / 4, 54

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

सामाजिक चेतना वाले दो आरम्भिक उपन्यासकार

सन्तोष कुमार

शोध छात्र

हिन्दी विभाग

कूबा स्नातकोत्तर महाविद्यालय दरियापुर नेवादा, आजमगढ़

हिन्दी उपन्यासों की मौलिक रचना होने से पूर्व हिन्दी मे बांग्ला उपन्यासो के अनुवादों को लोकप्रियता मिल चुकी थी। 1871 से पूर्व बांग्ला में सामाजिक और ऐतिहासिक दोनो प्रकार के अच्छे उपन्यास प्रकाशित हो चुके थे। हिन्दी में कुछ तिलस्मी व ऐयारी उपन्यास लिखे गये। ऐयारी उपन्यास लिखने वाले देवकीनंन्दन खत्री (1861–1913) का नाम प्रमुख है। ये प्रेमचन्द्र युग के मुख्य उपन्यासकार है इनके उपन्यासो की धूम सर्वसाधारण में रही।

1. चन्द्रकान्ता – 1890–91
2. नरेन्द्र मोहिनी – 1893
3. वीरेन्द्र वीर – 1895
4. कुसुम कुमारी – 1899
5. चन्द्रकान्ता संतति – 1899 (चौबीस भाग)
6. काजर की कोठरी – 1902
7. अनूठी बेगम – 1905
8. गुप्त गोदना – 1906
9. भूतनाथ – 1906 (प्रथम छःह भाग) शेष भाग इनके पुत्र दुर्गाप्रसाद खत्री ने पूरा किया।

तिलस्म का अर्थ : अद्‌भुत आश्चर्य जनक कल्पना।

ऐयार का अर्थ : चालाक, वेग से चलने वाला, दूर तक दौडने वाला।

ऐसे उपन्यास जिसमे इन सब घटनाओं का वर्णन होता है उसे ऐयारी व तिलस्मी उपन्यास कहते है। ये उपन्यास जनता मे खूब प्रचलित हुए। इसमे रहस्य रोमांचप्रिय सस्ती कल्पना का पुट मिलता है। प्रायः कोई सुन्दरी राजकुमारी किसी रहस्यमयी तिलस्मी इमारत मे कैद हो जाती थी, उसका प्रेमी राजकुमार अपने हरफनमौला ऐयार की सहायता से तिलस्म तोड़कर उसका उद्धार करता था। तिलस्मी चन्द्रकान्ता की ऐसी घूम मची कि इसको पढ़ने के लिए न जाने कितने ऊर्दू जानने वाले को हिन्दी सीखना पड़ा। इससे सामान्य जनता में हिन्दी की लोकप्रियता बढ़ी और उपन्यास का पाठक वर्ग तैयार हो गया।

ऐसे उपन्यासों का मूल आधार फारसी कृति तिलस्म होशरूबा है। शिल्प और भाषा की दृष्टि से इन्होंने सुघटित एवं सही कथानकों की रचना की थी। पाठक की कुतूहलवृति इतनी रहती थी कि उपन्यास के जादू मे बधा रहता था। उपन्यास लेखक और पाठक की प्रवृत्ति कुतूहल, रहस्य, रोमांच के माध्यम से मनोरंजन करने की रही है। नयी–नयी चौकाने वाली घटनाओं की सृष्टि करके कथा मे रोचकता लायी जाती थी। रहस्यमयी अद्‌भुत घटनाओं को

श्रृंखलावद्ध करके एक अपरिचित संसार मे पाठको को भटकाते रहना इनका लक्ष्य रहा है। इसमे लेखक का कौशल इस बात मे रहता है कि वह पाठको की जिज्ञासा वृत्ति को जगाये रखे। खत्री जी इसमे पर्याप्त सफल रहे। पाठक आगे की घटना को जानने के लिए इतना बेचैन रहता है कि उसका मन कही नही लगता है। लेखक एक प्रकरण को ऐसे बिन्दु पर अधूरा छोड़ता है कि पाठक आगे क्या हुआ जानने के लिए बेचैन हो जाता है। इसी बीच दूसरी कथा का प्रकरण प्रारम्भ कर देता है। बाद में अमानवीय और अलौकिक घटनाएं नहीं है। ये उपन्यास ऐतिहासिक नही है फिर भी ऐतिहासिक वातावरण उत्पन्न किया गया है।इनकी भाषा मे साधारण हिन्दी का प्रयोग किया गया है। संस्कृत, अरबी, फारसी शब्दावली से बचा गया है। इसमे किस्सागोई शैली/दास्तान शैली अपनाई गयी है। इसलिए पात्रों के चरित्र पूर्व निर्धारित है। पाठकों को पात्रों, घटनाओं एवं दृश्यों का वर्णन स्वयं लेखक ही देता है। कल्पना का प्रयोग किया गया है। पात्रों के नाम उनके गुण के अनुरूप रखे गये हैं। लेखक ने यथा नाम तथा गुण का ध्यान रखा है। जैसे,

वीरेन्द्र सिंह– वीरता एवं पराक्रम।

चन्द्रकान्ता– चन्द्रमा के समान सुन्दर।

तेज सिंह– अपने नाम के अनुरूप तेज।

चपला– चपल एवं तेज थी।

क्रूर सिंह– क्रूर हृदय का था।

इन्होंने सामाजिक यथार्थ व समस्याओं को लेकर गम्भीर उपन्यास नहीं लिखा। लगता है जीवन के यथार्थ को कला मेंढालने का वातावरण नहीं था। सामाजिक जीवन के यथार्थ का वर्णन छायावादयुगीन कथा साहित्य में मिलता है। जिसकी पृष्ठभूमि सामाजिक उपन्यासों में मिलती है। सामाजिक उपन्यासों में सुधारवादी जीवन दृष्टि मिलती है। ये सब उपन्यास पाठकों की कुतूहल वृत्ति को उत्पन्न कर उसे मनोरंजन के माध्यम से सन्तुष्ट करने वाले थे या तो उपदेशात्मक बातें प्रकट कर के वर्णनीय समस्या की जटिलताओं में उतरे बिना सीधे–सीधे पाठकों को उपदेश देने का काम करते थे।

तत्कालीन परतंन्त्र समाज में उपन्यास पढ़ने–पढ़ाने की कल्पना करना कठिन था। भारत की जनता भूख एवं समस्याओं से त्रस्त थी। वह हमेशा अपनी पीड़ा से परेशान रहती थी, उपन्यास या साहित्य पढने मे किसी का मन नहीं लगता था। ऐसी बातों को खत्री जी जानते थे, तिलस्मी व अद्‌भुत घटना को विषयवस्तु न बनाते तो इतना बड़ा पाठक वर्ग मिलता ही नही। और जब पाठक ही नही रहेगा तो उपन्यास या साहित्य का क्या मतलब है ? इन ऐयारी तिलस्मी उपन्यासों द्वारा आगे के रचनाकारों के लिए पाठक वर्ग तो आसानी से मिल गया। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की तरह देवकीनन्दन खत्री जनता को पहले पढ़ना सिखा रहे थे। उसमें रूचि उत्पन्न करने का काम यही उपन्यास ही किये। हरिश्चन्द्र जी भी जानते थे कि इस अशिक्षित जनता को नाटक के माध्यम से ही कोई बात बताई जा सकती है इसलिए उन्होने श्रव्य–दृश्य माध्यम का सहारा लिया।

इसी पृष्ठभूमि में हिन्दी जगत के मूर्धन्य उपन्यासकार का अवतरण 1880ई0 में वाराणसी के लमही में हुआ। ये सामान्य आर्थिक पृष्ठभूमि के थे। पिता डाक विभाग में साधारण लिपिक थे। इनकी माता प्रायः अस्वस्थ रहती थी। नौकरी ही परिवार की जीविका का साधन था। गाँव में रहने के बावजूद भी इनके पास कृषि भूमि न थी। पाँच वर्ष की अवस्था में माता तथा चौदह वर्ष

की अवस्था में पिता का प्यार इनसे छिन गया। जीवन निर्वाह कठिन था। स्नातक तक शिक्षा ग्रहण कर ये अध्यापन का कार्य करने लगे तत्पश्चात् ये प्रोन्नत होकर विद्यालय उप निरीक्षक हो गये। इनकी प्रथम रचना 'जमाना' नामक ऊर्दू पत्र में 'अनमोल रत्न' नाम से छपी। ये लेख उपन्यास, कहानियां आदि लिखते रहे। इन्होंने 'हंस' पत्रिका के सम्पादन के साथ–साथ साहित्यिक आन्दोलन को भी बढ़ाने का कार्य किया। प्रगतिशील लेखक संघ के सभापति चुने गये। इनके रचना संसार का मुख्य विषय जीवन संघर्ष है। सामान्य जनता का दुःख दर्द इन्होंने लिखा,वही इनके लेखन का मुख्य विषय बन गया। इन्होंने समाज के साथ व्यक्ति के एकीकृत होने के प्रश्न को भी महत्व दिया। ऊर्दू के होते हुए हिन्दी में आकर ग्रामीण जीवन से सहज सम्पर्क के कारण इन्होने सामान्य बोल–चाल की भाषा में रचना किया। इनका कथा साहित्य उस समय के अन्य लेखकों के कथा साहित्य में अग्रणीय है। इनके कथा में वैविध्य और जीवन चेतना का आधिक्य रहता है। मुंशी प्रेमचन्द्र जी ने उपन्यास व कहानी विधा को अभूतपूर्व व्यापकता एवं गम्भीरता प्रदान की। व्यापकता का मतलब समाज के सभी श्रेणियों के पात्र लिये गये। गम्भीरता का मतलब कथानक का अन्त करने को कोई जल्दी नहीं थी।

राष्ट्रीय आन्दोलन में मोहनदास करमचन्द गांधी से महात्मा गांधी बने वही साहित्यिक पृष्ठभूमि पर धनपत राय (नवाब राय) से मुंशी प्रेमचन्द्र का अवतरण लगभग साथ–साथ हुआ। युग विशेष का साहित्य जहां पूर्ववर्ती साहित्य से जुड़ा होता है, वहीं सामयिक वातावरण और रचना प्रवृत्तियों का भी उस पर प्रभाव पड़ता है।

राजनीतिक दृष्टि से इसी युग में महात्मा गांधी का नेतृत्व जनता को सत्य अहिंसा और अंग्रेजी शासन के प्रति असहयोग आन्दोलन के माध्यम से स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए निरन्तर प्रेरणा व शक्ति प्रदान कर रहा था। अग्रेजों की दमन नीति और कटु व्यवहार से यहाँ की जनता का मनोबल कम नहीं हुआ। सामाजिक परिवर्तनशीलता के कारण पश्चिमी सभ्यता तथा संस्कृति के प्रभाव स्वरूप इस युग के सामाजिक जीवन में भी परिवर्तन आ गया था। युवा मन परम्परागत रीति–रिवाज को तोड़कर पश्चिमी राष्ट्रों के स्वतन्त्र नागरिकों के समान जीवन–यापन के लिए ललायित था। सामाजिक राजनीतिक परिवर्तनों की जैसी स्पष्ट छाप छायावादी युग के गद्य साहित्य में लक्षित होती है, वैसी काव्य साहित्य में नहीं होती। वस्तुतः आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की प्रेरणा से हिन्दी गद्य का व्याकरण सम्मत, परिमार्जित रूप प्रायः स्थिर हो चुका था। फलस्वरूप समकालीन परिवेश के सन्दर्भ में विभिन्न गद्य विधाओं का यथार्थोन्मुख विकास परिष्कार स्वाभाविक था। कथा साहित्य में इनका आना एक क्रान्ति के रूप में था। 'सेवासदन' के 1918 मे प्रकाशित होने से पूर्णतः कल्पना प्रधान कथानक से छुट्टी मिल गयी। कथानक सामाजिक विषयों से जुड़ गया तथा तत्कालीन जीवन को वाणी प्रदान किया। जीवन जगत में जिन्दा रह कर इन्होंने उसका उल्लेख किया।

'हिन्दी साहित्य का यह रूप उपन्यास जन्मना निम्न श्रेणी का होने पर भी कितना महत्वाकांक्षी था यह इसी से पता चलता है कि जब वह मनोरंजन का साधन बनकर लोकप्रिय हो रहा था तभी वह सामाजिक जीवन के सत्य का वाहक बन सकने के लिए प्रयास कर रहा था, यद्यपि उसे पूर्णतः कृत कार्य होने के लिए तब तक प्रतिक्षा करनी पड़ी जब तक प्रेमचन्द्र ने उनका अछूतोद्धार नही कर दिया।'[1]

प्रेमचन्द्र जी के उपन्यास छायावादी युग की परिस्थितियों में लिखे गये थे लेकिन इनके पूर्व दो कोटि के उपन्यास लिखे जा चुके थे। प्रथम कोटि के अन्तर्गत अजीबो–गरीब घटनाओं के द्वारा कुतूहल और चमत्कार की सृष्टि रहती थी, इसमें देवकीनन्दन खत्री, गोपाल राय गहमरी,

हरिकृष्ण जौहर आदि थे। द्वितीय कोटि के अन्तर्गत आर्य समाज और उसके समकक्ष अन्य सामाजिक आन्दोलन से प्रभावित समाज सुधार का प्रचार होता था। अभी तक उपन्यास जीवन की सही अभिव्यक्ति का साधन नही बन पाया था। इसमें गौरी दत्त, श्रद्धाराम फुल्लौरी, श्रीनिवास दास, बालकृष्ण भट्ट, मेहता लज्जाराम शर्मा, ब्रजनन्दन सहाय आदि थे। किशोरीलाल गोस्वामी की स्थिति बीच की थी। उनका झुकाव मनोरंजन का था लेकिन भुवनेश्वर प्रसाद मिश्र अपने समकालीनों से भिन्न थे उन्होंने उपन्यास को जीवन की अभिव्यक्ति के साधन के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया। प्रेमचन्द्र जी के लिए यही सब पृष्ठभूमि के रूप में था।

प्रेमचन्द जी ने 1918 से पूर्व ऊर्दू में कई उपन्यास लिखे इनमें इन्होंने उपन्यास को मनोरंजन से उपर उठाकर जीवन से सीधे सम्पर्क में लाने का प्रयास किया था। सामाजिक संस्थाओं एवं संगठनों से प्रेरणा के साथ–साथ अपनी विशिष्ट जीवन दृष्टि के कारण इनके उपन्यास और भी प्रभावकारी हो गये। उनके प्रारम्भिक उपन्यास तो ऊर्दू में लिखे गये।

1. प्रेमा अर्थात दो सखियों का विवाह–1907
   (हम सूर्खा और हम सवाब का रूपान्तर)
2. असरारे मआविद उर्फ देव स्थान रहस्य
3. किसना
4. रूठी रानी
5. जलवाए ईसार

आरम्भिक दौर में ये अपने उपन्यास पहले ऊर्दू में लिखते थे फिर उसे हिन्दी में रूपान्तर करते थे।

1. बाजारे हुस्न–सेवा सदन 1918
2. गोशाए आफिमत– प्रेमाश्रय 1922
3. चौगाने हस्ती– रंगभूमि 1925

इन्होंने अपने कुछ उपन्यासों को रूपान्तरित व परिष्कृत किया। जलवाए ईसार का रूपान्तरण 1921 में **'वरदान'** के रूप में किया गया। हम सूर्खा व हम सवाब का पूर्व प्रकाशन प्रेमा अर्थात दो सखियों का विवाह को परिष्कृत करके **'प्रतिज्ञा'** शीर्षक से सन् 1929ई0 प्रकाशित कराया। लगता है शुरू में प्रेमचन्द्र भी अपने लिए एक निश्चित व सही भाषा की तलाश नहीं कर पाये थे। इसी कारण शुरू के उपन्यास किसी प्रतिभाशाली लेखक के प्राथमिक प्रयास की तरह है। **'सेवासदन'**(1918) उनकी प्रथम प्रौढ़ कृति माना जाता है। उनके हिन्दी उपन्यास हिन्दी के लिए नये है। **'अपनी रचना यात्रा में प्रेमचन्द अपने अनुभव से सीखने वाले लेखक है। 'गोदान' (1936) के सन्दर्भ में जिस आश्रमवादी और सदनवादी समाधान पद्धति से उनकी मुक्ति की बात कही जाती रही है, 'गोदान' में वह किसी छलांग के रूप में उपस्थित नहीं है। प्रेमचन्द्र के यहाँ यह प्रकिया 'गबन' से ही शुरू हो जाती है, 'कर्मभूमि' में उसका विकास होता है और 'गोदान' में वह पूर्णतः प्राप्त करती है।'**[2] 'कायाकल्प' (1926)हिन्दी मे लिखित इनका प्रथम उपन्यास है।

निर्मला– 1927

गबन– 1931

कर्मभूमि– 1933

गोदान– 1936

1926 के बाद इन्होने ऊर्दू का सहारा लेना छोड दिया। हिन्दी उपन्यास मे उनकी देन बहुमुखी है। उन्होने केवल उपन्यास ही नही बल्कि पूरे कथा साहित्य को मनोरंजन के जगत से ऊपर उठाकर जीवन के सार्थक रूप मे जोड़ने का प्रयास किया है। चारो ओर फैले हुए जीवन और अनेक सामयिक समस्याओ ने उन्हे उपन्यास लेखन के लिए प्रेरित किया। ये समस्याएं निम्नलिखित है।

1. पराधीनता
2. जमीदारों, पूजीवपतियों एवं सरकारी कर्मचारियो के द्वारा किसानो का शोषण।
3. निर्धनता
4. अशिक्षा
5. अंधविश्वास
6. दहेज की कुप्रथा
7. घर और समाज मे नारी की स्थिति
8. वेष्याओं की घुटन भरी स्थिति
9. वृद्ध / अनमेल विवाह
10. विधवा समस्या
11. अग्रेजों द्वारा व अन्य आक्रान्ताओं द्वारा फैलाए गये साम्प्रदायिक वैमनस्य
12. अस्पृश्ता
13. मध्यवर्ग की कुण्ठाएं
14. फिजूल खर्ची व दिखावा

प्रेमचन्द्र जी ने एक एक कर इन समस्याओं और जीवन के अनेक पहलुओं को अपने उपन्यासों में स्थान दिया। कई समस्याओं का एक साथ चित्रण किया गया है जैसे–

सेवासदनः–विवाह से जुड़ी समस्या, तिलक दहेज की प्रथा, कुलीनता का प्रश्न, विवाह के बाद घर मे पत्नी का स्थान, समाज में वैश्याओं की स्थिति, साम्प्रदायिकता, अन्तर्जातीय विवाद तथाकथित पाखण्डी कर्मकाण्डो, समाज सुधारकों के क्रियाकलाप, नारी पराधीनता, सुमन द्वारा नारी पराधीनता के प्रति विद्रोह किया जाता है।

निर्मलाः–दहेज प्रथा, वृद्ध विवाह से होने वाला पारिवारिक विघटन, मध्यवर्गी कुण्ठा।

प्रेमाश्रमः–अपने युग की कृषि व कृषक जीवन की समस्या को उठाने का प्रयास, कृषकों का भूमि से कैसा भावात्मक लगाव होता है, बताया गया है। समाज के गरीबों किसानों पर ही ब्रिटिश साम्राज्यवाद बड़े व्यापारियों, शोषणवादी शक्तियों आदि सबका भार था। **रंगभूमिः**–ग्रामीणों की स्थिति का चित्रण, अन्तर्जातीय विवाह समाज में हरिजन दलित की स्थिति व उनकी समस्या का चित्रण।

कर्मभूमिः–इसमें किसानों द्वारा लगान बन्दी के आन्दोलन के साथ–साथ दलितों के प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट की है। अछूत आन्दोलन का चित्र पाठक के सामने स्पष्ट किया है। दलितों के प्रति अमानुषिक व्यवहार की तीव्र भर्त्सना की गयी है।

कायाकल्पः–साम्प्रदायिक समस्या

प्रतिज्ञाः–अन्तर्जातीय विवाह की समस्या, विधवा विवाह की समस्या।

गबनः—मध्यवर्ग की कुण्ठा मध्यवर्ग की फिजूलखर्ची अपने दिखावा व प्रदर्शन में हैरान रहने की स्थिति।

गोदानः—कृषक जीवन को अन्य उपन्यासों में दिखाया गया है लेकिन इसमें तो उसकी पूरी महागाथा ही है। ग्रामीण जीवन का इतना सच्चा व्यापक और प्रभावशाली चित्रण अन्य जगह नहीं है। छोटे किसानों व छोटे—मोटे जमीदारों की हालत क्रमशः बिगड़ रही है वह निरन्तर अवसान की तरफ बढ़ने को विवश है गोदान के जमींदार राय साहब की स्थिति भी बहुत अच्छी नहीं है।

इस प्रकार सामाजिक समस्याओं का वास्तविक यथार्थवादी चित्रण किया गया है।

सन्दर्भ सूची

1. **साहित्यतत्व और आलोचनाः** आचार्य नलिन विलोचन शर्मा, अनुपम प्रकाशन पटना 4 प्रथम संस्करण 1995, पृष्ठ—100
2. **हिन्दी उपन्यास का विकास :** मधुरेश, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, चतुर्थ संस्करण 2008, पृष्ठ 48

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

हिन्दी कहानी की वरासत

विजय लक्ष्मी गुप्ता
शोध छात्रा
हिन्दी विभाग
कूबा स्नातकोत्तर महाविद्यालय दरियापुर नेवादा, आजमगढ़

(क) प्रस्थान

मानव-सभ्यता के वकास-क्रम में कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तन ऐसे रहे जिन्होंने मानव-सभ्यता के वकास की दुनिया को ही परिवर्तित कर दिया। आग व पहिए के अ वष्कार के बाद भाषा का अ वष्कार निःसंदेह एक क्रान्तिकारी घटना रही होगी। इससे पूर्व मानव अपनी अनुभूतियों व वचारों को या तो संकेतों के माध्यम से व्यक्त करता होगा अथवा चत्र बनाकर। भाषा के रूप में उसे एक ऐसा सशक्त माध्यम उपलब्ध हो गया जिससे न केवल वह अपने सुख-दुःख, आशा-निराशा को एक-दूसरे से बाँटने में सक्षम हुआ; अ पतु अपनी जरूरतों को पूरा करना भी उसके लए अब अपेक्षाकृत सरल हो गया। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, परन्तु समाज की कल्पना बिना भाषा के अधूरी थी। इस प्रकार भाषा की उत्पत्ति के साथ ही समाज अस्तित्व सामने आया।

आरम्भ के लोग एक-दूसरे के सामने बैठकर कहानियाँ सुनते थे। ल प चह्नों के वकास ने मानव को अपनी अनुभूतियों को एक लम्बे समय तक सहेज कर रखने का मार्गप्रशस्त कया। आगे चलकर कहानियाँ लखी व पढ़ी जाने लगीं। ''इतना निश्चित है क भारत में कहानी की परम्परा पाश्चात्य प्रभाव से हर गज वक सत नहीं हुई क्यों क लोक और शास्त्र, दोनों में कहानी की एक समृद्ध परम्परा रही है। .... संक्षेप में कहें तो भारतवर्ष में कथासाहित्य का वशाल भण्डार रहा है। ब्राह्मण, बौद्ध और जैन धा र्मक वाङ्मय में उपदेशपरक कथाओं की परम्परा तो है ही, स्वतन्त्र रूप से भी नीतिकथा और लोककथा की परम्परा चली आ रही है। नीति कथा के पात्र मानव, मानवेतर पशु-पक्षी रहे हैं। नीतिकथाएँ तो भारत की सीमा लाँघकर बाहर तक फैल चुकी हैं। 'पंचतन्त्र' ऐसी ही नीति कथाओं का आगार है। इसी परम्परा में हितोपदेश भी आता है। इन कथाओं में दोनों पक्षों पर बल है-कुतूहलतर्यक घटना-शृंखला की भी और वर्णनों द्वारा मा र्मकता लाने की भी।''

सर्वप्रथम भारतवर्ष में ही ल खत कहानी का उद्भव हुआ, ऐसी मान्यता अ धकांश वद्वानों की है क्यों क ऋग्वेद में कहानी के बीज मलते हैं और ऋग्वेद को संसार का प्राचीनतम ग्रन्थ होने का गौरव प्राप्त है। ल पबद्ध कहानियों की यह परम्परा ऋग्वेद से आरम्भ होकर आज तक चली आ रही है। इस प्रकार आधुनिक हिन्दी कहानी के आ वर्भाव से पहले कहानी की एक लम्बी परम्परा भारतवर्ष में मलती है। यह परम्परा वैदिक संस्कृत, लौ कक संस्कृत, पा ल, प्राकृत, अपभ्रंश भाषाओं के साहित्य से होती हुई हिन्दी साहित्य तक चली आई है। ऋग्वेद के संवाद-सूक्त, उपनिषदों की रूपक कथाएँ, रामायण की अन्तर्कथाएँ, महाभारत के उपाख्यान, जातक कथाएँ, वृहत्कथा, वासवदत्ता, दशकुमारचरित, कादम्बरी, वृहत्कथाश्लोक, कथासरितसागर, वैताल पंच वंशतिका, शुकसप्तति, संहासन द्वात्रिं शका, प´्चतन्त्र, हितोपदेश, प्राकृत तथा अपभ्रंश में प्राप्त कथाकाव्य, हिन्दी के आदिकाल के चारण काव्य तथा मध्यकाल के प्रेमगाथाकाव्यों, वैष्णववार्त्ताओं और अन्ततः भारतेन्दुकालीन कथात्मक रचनाओं में हिन्दी कहानी के आ वर्भाव से पूर्व कहानी का वकास क्रम देखा जा सकता है।

(ख) प्रगति

स्वतन्त्रतापूर्व हिन्दी कहानी

आधुनिक हिन्दी कहानी का उद्भव बीसवीं शताब्दी के प्रथम वर्ष से ही माना जाता है। महावीर प्रसाद द् ववेदी और उनके द्वारा सम्पादित पत्रिका 'सरस्वती' को इसका श्रेय दिया जाता है। इससे पूर्व भारतेन्दुकाल में जो कथात्मक गद्य साहित्य उपलब्ध होता है, वह कलात्मक रूप से कहानी वधा में नहीं आता। हिन्दी कहानियों का प्रारम्भ अ धकांश वद्वानों और हिन्दी साहित्य इतिहास लेखकों ने एक स्वर से 'सरस्वती' के प्रकाशन से स्वीकार कया है। 'सरस्वती' के प्रारम्भिक अंकों में प्रका शत रचनाओं में हिन्दी कहानी की स्वरूप रचना हो रही थी। 'सरस्वती' के माध्यम से अनेक प्रकार के प्रयोग हो रहे थे। ''इन प्रयोगों में शेक्सपीयर के नाटकों के इतिवृत्त के आधार पर वर्णनात्मक शैली में लखी गई कहानियाँ, स्वप्न कल्पनाओं के रूप में र चत कहानियाँ, सुदूर देशों के कल्पनात्मक चरित्रों को लेकर लखी गई संवेदनात्मक कहानियाँ, कल्पनात्मक यात्रा वर्णन की कहानियाँ, आत्मकथात्मक रूप में प्रस्तुत कहानियाँ, संस्कृत नाटकों की आख्यायिकाएँ तथा घटना-प्रधान सामाजिक कहानियाँ प्रमुख हैं।'' इस प्रकार हिन्दी कहानी को एक नवीन वधा के रूप में स्था पत करने में 'सरस्वती' पत्रिका की भू मका महत्त्वपूर्ण रही है।

हिन्दी की प्रथम मौ लक कहानी के प्रश्न पर वद्वानों में मतभेद है। इस सन्दर्भ में डॉ. सुरेश सन्हा ने अपना मत प्रकट करते हुए आरम्भिक कहानियों की निम्न ल खत ता लका प्रस्तुत की है-'रानी केतकी की कहानी', 'राजा भोज का सपना', 'अद्भुत अपूर्व स्वप्न', 'इन्दुमती', 'गुलबहार', 'प्लेग की चुड़ैल', 'ग्यारह वर्ष का समय', 'पं डत और पं डतानी', 'दुलाईवाली'। उपर्युक्त ता लका के अतिरिक्त कहीं-कहीं माधव प्रसाद मश्र कृत 'मन की चंचलता' (1894), तथा माधवराव सप्रे की 'एक टोकरी भर म ी' (1901) आदि कहानियों का भी उल्लेख मलता है, कन्तु अ धकांश वद्वान 'सरस्वती' में प्रका शत कशोरीलाल गोस्वामी की 'इन्दुमती' (1900) को ही प्रथम मौ लक कहानी के रूप में स्वीकारते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का मत इस सन्दर्भ में द्रष्टव्य है-''इनमें यदि मा र्मकता की दृष्टि से भावप्रधान कहानियों को चुनें तो तीन मलती हैं- 'इन्दुमती', 'ग्यारह वर्ष का समय', और 'दुलाईवाली'। 'इन्दुमती' कसी बंगला कहानी की छाया नहीं है तो हिन्दी की यही मौ लक कहानी ठहरती है। इसके उपरान्त 'ग्यारह वर्ष का समय', और 'दुलाईवाली' का नम्बर आता है।''

प्रारम्भिक हिन्दी कहानियों में वर्णनात्मकता, स्थूलता, घटनात्मकता, आकस्मिकता और कुतूहलपूर्णता वद्यमान है। इस तरह इन कहानियों में आधुनिक हिन्दी कहानी के वकास के लक्षण वद्यमान हैं। प्रेमचन्दपूर्व हिन्दी कहानियों में कहानी वधा को सशक्त आधार देने व कलात्मकता की ऊँचाई पर ले जाने का श्रेय चन्द्रधर शर्मा गुलेरी कृत 'उसने कहा था' (1912) को जाता है। यह कहानी सृजनात्मकता और रचनात्मकता की अनुपम कहानी है। भाव, संवेदना, शल्प व उद्देश्य की दृष्टि से भी इस कहानी ने हिन्दी कहानी के इतिहास में मील के पत्थर का काम कया। एक बिल्कुल नये वषय को जिस कौशल से इस कहानी में प्रस्तुत कया गया है उसकी प्रशंसा में वजयमोहन संह लखते हैं- ''प्रथम महायुद्ध इस कहानी में पृष्ठभू म नहीं, कथाक्षेत्र है जिसकी कल्पना भी उस समय असम्भव थी। प्रथम तो क्या द् वतीय महायुद्ध पर भी हिन्दी में शायद ही कोई महत्त्वपूर्ण कहानी लखी गई हो। इस कहानी का शीर्षक ही जिस तरह पूरी कहानी में मंडराता रहता है वह रचनात्मकता के उन्मेष का वलक्षण उदाहरण है। प्र व ध के रूप में तब तक 'पूर्व दीप्ति' (फ्लैश बैक) और चेतना का प्रवाह (स्ट्रीम ऑफ कांससनेस) का नाम हिन्दी में सुना नहीं गया था जिसका इस कहानी में अपूर्व कौशल से उपयोग कया गया है।''

प्रेमचन्द के आगमन से हिन्दी कहानी को एक नई दिशा एवं दृष्टि मली। यद्य प वे सन् 1907 से ही उर्दू में कहानियाँ लखने लगे थे, कन्तु सन् 1916 में जब उनकी 'पंच परमेश्वर' कहानी 'सरस्वती' में प्रका शत हुई, तब से वे हिन्दी कथा क्षेत्र के महत्त्वपूर्ण लेखक के रूप में जाने-पहचाने गये। उन्होंने कहानी के प्राचीन कथा- शल्प को तोड़कर युगानुरूप उसे नया रूप-रंग प्रदान कया। उन्होंने सामाजिक, राजनीतिक एवं आ र्थक यथार्थ को केन्द्र में रखकर मानवीय संवेदना और हिन्दी कथा संसार से देवता, राजा और ईश्वर को अपदस्थ करके दीन, द लत, शो षत प्रता ड़त मनुष्य को नायक के पद पर प्रतिष्ठित कया। वश्वम्भरनाथ शर्मा कौ शक, सुदर्शन, ज्वालादत्त शर्मा आदि प्रारम्भिक लेखक प्रेमचन्द के ढंग पर आदर्शोन्मुखी यथार्थवादी कहानियाँ लख रहे थे। उनकी कहानियाँ घटनाप्रधान और इतिवृत्तात्मक हैं।

इस युग के एक अन्य महत्त्वपूर्ण कहानीकार भुवनेश्वर भी हैं। भुवनेश्वर को कहानीकार के रूप में प्रतिष्ठा नहीं मली। उन्हें एक एकांकी नाटककार के रूप में स्वीकृति दी गई। ले कन वे एक सशक्त कहानीकार भी थे। उन्होंने भी चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की ही तरह बहुत कम कहानियाँ लखी, ले कन ये कहानियाँ महत्त्वपूर्ण हैं। इस लए उन्हें हिन्दी कहानी के इतिहास से बाहर नहीं कया जा सकता। भारत भारद्वाज के शब्दों में- ''हिन्दी कथा-साहित्य के इतिहास में भुवनेश्वर का उल्लेख नहीं कया गया तो यह कहानी इतिहासकार की भूल थी क उन्होंने अपने ववेक का परिचय नहीं दिया, ले कन भुवनेश्वर कहानीकार के रूप में इससे ओझल नहीं हो जाते। भुवनेश्वर ने कहानियाँ भी लखीं हैं और ये कहानियाँ हिन्दी कहानी के वकास से कटी हुई नहीं हैं, बल्कि जुड़ी हुई हैं। ये कहानियाँ हा शये की कहानियाँ नहीं हैं बल्कि हिन्दी कहानी के बीच की कहानियाँ हैं। भुवनेश्वर की कहानियों का महत्त्व इस बात से भी प्रकट होता है क प्रेमचन्द जैसे महत्त्वपूर्ण कथाकार ने न केवल भुवनेश्वर की कहानियों पर लखा बल्कि उनकी कहानी 'मौसी' को अपने एक कहानी-संकलन में संगृहित भी कया।''

जयशंकर प्रसाद मूलतः रोमांटिक कहानीकार हैं। इनकी कहानियों में प्रेम और भावात्मकता की प्रधानता है। इनकी सफल कहानियाँ प्रेम और अन्तर्द्वन्द्व को लेकर चलती हैं, जिनमें 'आकाशदीप', 'पुरस्कार' आदि प्रमुख हैं। यशपाल प्रेमचन्द के सामाजिक यथार्थ को मार्क्सवादी दृष्टिकोण से प्रस्तुत करने वाले उल्लेखनीय कहानीकार हैं। रांगेय राघव, भैरवप्रसाद गुप्त, नागार्जुन आदि कहानीकार इसी वर्ग के महत्त्वपूर्ण कहानीकार हैं। जैनेन्द्र कुमार और इलाचन्द्र जोशी ने मनोवैज्ञानिक यथार्थ को केन्द्र में रखकर अपनी कहानियों में मानव-मन को चत्रित कया। इन कहानीकारों पर फ्रायड के मनो वश्लेषणवाद का गहरा प्रभाव है। अज्ञेय इस परम्परा के तीसरे महत्त्वपूर्ण कथाकार हैं। इनकी कहानियों में सार्त्र आदि अस्तित्ववादी चन्तकों का प्रभाव दिखाई देता है। इन कहानीकारों के मध्य कुछ कहानीकार ऐसे भी थे जिन्होंने कसी वचार वशेष से प्रभा वत न होकर स्वतन्त्र रूप से लेखन कया। ऐसे कहानीकारों में भगवतीचरण वर्मा और उपेन्द्रनाथ अश्क मुख्य हैं। वष्णु प्रभाकर, द् वजेन्द्र नाथ 'निर्गुण' तथा अमृतराय भी स्वतन्त्रता से पहले के प्रमुख कहानीकार हैं।

स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी

सन् 1947 में भारत आजाद हुआ। सदियों की गुलामी के बाद भारतीय जनमानस एक नये सवेरे को उल्लासपूर्ण नजरों से देख रहा था। अब उनके सारे सपने और आकांक्षाएँ पूरी होने वाली हैं, इसके प्रति आश्वस्त भारतीय जनता नये जोश व नई स्फूर्ति से ओत-प्रोत थी। कमलेश्वर के शब्दों में- ''देश का वैचारिक पुनर्जन्म हुआ। आजादी केवल राजनीतिक मूल्य के रूप में स्वीकृत नहीं हुई थी, बल्कि वचारों की एक नवक्रांति का सपना भी उससे जुड़ा हुआ है।''

इस प्रकार स्वतन्त्र भारत में कहानीकारों की जो नई पीढी तैयार हुई उसने हिन्दी कहानी के वस्तु, शल्प और संचेतना में व्यापक परिवर्तन कए। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद हिन्दी कहानी क्षेत्र में जो उल्लेखनीय वकास हुए, वे हिन्दी कहानी के व भन्न आन्दोलनों की देन हैं। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद हिन्दी कहानी में कई आन्दोलनों का सूत्रपात हुआ। 'नयी कहानी', 'सचेतन कहानी', 'अकहानी', 'सहज कहानी', 'स क्रय कहानी', 'समानान्तर कहानी' और 'जनवादी कहानी' के नाम से समय-समय पर उठने वाले कहानी-आन्दोलनों ने हिन्दी कहानी को नई समृ द्ध, दृष्टि और कलात्मक ऊँचाई भी दी है और संकीर्णताओं और स्वार्थों के कारण उसे क्षति भी पहुँचाई है।

(ग) आन्दोलन

नयी कहानी आन्दोलन

स्वतन्त्रता से पूर्व हिन्दी कहानी में कोई कहानी-आन्दोलन नहीं चला था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद 'नयी कहानी' के रूप में एक ऐसा कहानी आन्दोलन प्रकाश में आया जिसने कहानी के पारम्परिक प्रतिमानों को नकार दिया और अपने मूल्यांकन के लए नई कसौटियाँ निर्धारित की। यह स्वाभा वक भी था क अब नये वचार, नये सपने और नयी राहों का उदय हुआ था। परतन्त्रता की पीड़ा से उभरी भारतीय जनता आजादी के उल्लास में एक नये जोश व नये उत्साह से सराबोर थी। अब नये प्रकार की चुनौतियाँ थी। आजाद हिन्दुस्तान को प्रगति के मार्ग पर अग्रसर करना व सदियों से गुलाम भारतीयों को हीन भावना से उबारकर एक नये आत्म वश्वास से ओत-प्रोत करना। परन्तु इन सपनों और आकांक्षाओं की उम्र बहुत कम थी, भारत-पाक वभाजन के फलस्वरूप हिन्दु-मुस्लिम साम्प्रदायिक उन्माद ने आजादी की मठास को कसैला बना दिया था। मानवता को सरेआम नंगा कया गया, इंसानियत का गला दबा दिया गया और मूल्यों व आदर्शों को मौत के घाट उतार दिया गया था। साम्प्रदायिकता का जो वहशीपन उन दिनों इन नवस्वतन्त्र वभाजित देशों के मध्य सुलग रहा था उसने स्वतन्त्रता के बाद की सारी उम्मीदों को धुआँ-धुआँ कर दिया। ऐसे समय में साहित्यकार जो स्वयं आजादी की बाट जोह रहा था, गहरे तनाव व अवसाद से भर गया। डॉ. वष्णु ओझा लखते हैं- ''इसे अस्वीकार करना असम्भव-सा है क आज की कहानी की भू मका में दो महायुद्ध एवं भारत वभाजनजन्य वभी षका, वषमता तथा संत्रास है। एक सार्वत्रिक टूटन, निरुद्देश्यता, असंगति, मानवीय सम्बन्धों की व्यर्थता, स्त्री-पुरुष-सम्बन्धों की वद्रूपता आदि भी उसकी उपज है।''

इस आन्दोलन के मुख्य कहानीकार राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश और कमलेश्वर थे। नयी कहानी आन्दोलन का मुख्य आग्रह 'परिवेश की वश्वसनीयता', 'अनुभूति की प्रामा णकता' और 'अ भव्यक्ति की ईमानदारी' के प्रति था। यह आन्दोलन कहानी को युग-सत्य से जोड़कर पाठक को समकालीन यथार्थ से यथार्थ रूप में परि चत कराने का ध्येय लेकर बढ़ा था। समय, काल और परिस्थितियां साहित्य को प्रभा वत भी करती हैं और परिवर्तित भी। अब समय बदल चुका था। समयगत परिवर्तन पर टिप्पणी करते हुए डॉ. कुमार कृष्ण लखते हैं- ''कहानियाँ नहीं बदली थी, समय की माँग बदली थी और समय की माँग ने ही अपनी थाती में से नये चुनाव कए थे। कथा-साहित्य में इस बदलते हुए आग्रह को नजरअंदाज नहीं कया जा सकता और यह बदलता हुआ आग्रह ही वह बिन्दु है जहाँ से हिन्दी कहानी एक 'नया मोड़' लेती है, यह नया मोड़ ही 'नयी कहानी' के नाम से अ भहित कया गया।''

स्पष्ट है क स्वतन्त्रता मल जाने पर भारतीय जनमानस में एक नयी चेतना, नये वश्वास और नयी आशा-आकांक्षा का जन्म हुआ था जिसकी अ भव्यक्ति 'नयी कहानी' आन्दोलन की कहानियों में मलती है। 'कहानी' तथा 'कल्पना' जैसी पत्रिकाओं ने नयी कहानी आन्दोलन को वस्तार देने का कार्य कया। 'चीफ की दावत' (भीष्म साहनी), 'जिन्दगी और जोंक' (अमरकान्त), 'राजा निरबं सया', 'कस्बे का आदमी', 'आत्मा की

आवाज' (कमलेश्वर), 'मलबे का मा लक', 'सौदा', 'नये बादल', 'आर्द्रा', 'परमात्मा का कुत्ता' (मोहन राकेश), 'एक कमजोर लड़की की कहानी', 'जहाँ लक्ष्मी कैद है' (राजेन्द्र यादव), 'दादी माँ' (शवप्रसाद संह), 'गदल' (रांघेय राघव), 'बादलों के घेरे', 'डार से बिछुडी' (कृष्णा सोबती), 'साबुन', 'हंसा जाई अकेला' (मार्कण्डेय), 'रस प्रया' (फणीश्वर नाथ रेणु), 'गुल की बन्नो' (धर्मवीर भारती), 'परिन्दे' (निर्मल वर्मा), 'मैं हार गई' (मन्नू भण्डारी), 'वापसी' (उषा प्रयंवदा), 'छु याँ' (रामकुमार), 'बदबू' (शेखर जोशी), आदि कहानियों में कथ्य, शल्प तथा अ भव्यक्ति सभी दृष्टियों से नयेपन का अनुभव होता है।

नयी कहानी आन्दोलन ने हिन्दी कहानी में एक नवीन चेतना को जन्म दिया। यह नयी कहानी की लोक प्रयता तथा रचनात्मकता का ही परिणाम है क सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, रघुवीर सहाय, श्रीकान्त वर्मा जैसे क व कहानी लेखन की ओर आक षत हुए। नयी कहानी ने कथ्यगत परम्परागत ढाँचों को अस्वीकारते हुए नये आयामों की खोज की, वहीं अ भव्यक्ति के स्तर पर नये-नये प्रयोग कए। नयी कहानी ने कहानी के प्लॉट में रेखा चत्र, डायरी, संस्मरण जैसी अनेक वधाओं को समेटा जिससे नयी कहानी में प्रयोगध र्मता, सांकेतिकता आदि गुणों का उदय हुआ। नयी कहानी की भाषा अकृत्रिम है। यह कोशगत अर्थों से कहीं अ धक व्यापक व गहरे अर्थों को ध्वनित करती है। आंच लक शब्दों के प्रयोग के साथ-साथ प्रतीकात्मकता, बिम्बात्मकता आदि नयी भाषा के अतिरिक्त गुण हैं। परन्तु 60 के दशक तक आते-आते यह आन्दोलन अनेक प्रकार के अन्त र्वरोधों में धँस गया। यह आन्दोलन वैचारिक प्रतिबद्धता पर कायम रहने में असफल रहा और पश्चिम के आकर्षण से स्वयं को बचा पाने में नाकाम रहते हुए बुजुआर् आधुनिकतावाद की वकालत करने लगा। व्यक्तिवादी प्रवृत्तियाँ अ धक स क्रय हो गई और उसका व्यापक फलक समटकर स्त्री-पुरुष सम्बन्धों की अ भव्यक्ति रह गया। इस प्रकार यह आन्दोलन बिखर गया और हिन्दी कहानी में एक नये आन्दोलन अकहानी आन्दोलन का जन्म हुआ।

अकहानी आन्दोलन

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारतीय जनमानस द्वारा देखे गए तमाम सपने व उनकी आकांक्षाएँ दम तोड़ चुकी थी। सन् 1962 में एक तरफ तो 'हिन्दी-चीनी, भाई-भाई' के नारे लगाए जा रहे थे तो दूसरी ओर भारत पर वश्वासघाती चीनी आक्रमण ने भारतीय जनता में मोहभंग की स्थिति को अत्यन्त भयावह बना दिया। अब तक भारत-पाक वभाजन के घाव व आन्तरिक कलह के जख्म भरे नहीं थे क चीनी आक्रमण ने भारतीय जनता के मनो-मस्तिष्क को झकझोर दिया। इस प्रकार अकहानी एक तरफ जहाँ तात्कालीन सामाजिक, राजनीतिक व आ र्थक वसंगतियों का परिणाम था तो दूसरी ओर नयी कहानी की जड़ता को तोड़ने का प्रयास था। ऐसे समय में हिन्दी कहानी जगत में एक नवीन कहानी आन्दोलन 'अकहानी आन्दोलन' का जन्म हुआ। यह आन्दोलन तात्कालीन मूल्यों तथा कथा शल्प दोनों के अस्वीकार का आन्दोलन है। यह आन्दोलन पेरिस के 'एण्टी स्टोरी' का अनुकरण है और इस आन्दोलन पर अस्तित्ववादी चन्तक सार्त्र और कामू के वचारदर्शन का प्रभाव है।

अकहानी में सम्बन्धों व मूल्यों के बिखराव को अ भव्यक्ति मली है। अकहानी में सम्बन्धों के टूटने का ऐसा पीड़ाबोध है जो उसे पूर्ववर्ती कहानी से अलग करता है। स्त्री-पुरुष सम्बन्धों के परिवर्तित रूप को अ भव्यक्त करने के कौशल को डॉ. अशोक भाटिया इस आन्दोलन की उपलब्धि भी मानते हैं और सीमा भी। वे कहते हैं- ''इस आन्दोलन की उपलब्धि यह रही क काम-सम्बन्धों का इन्होंने वर्जनाहीन तथा सहज वर्णन करके हिन्दी कहानी में एक उपे क्षत पक्ष को समृद्ध कया। कन्तु उन्मुक्त काम-सम्बन्धों के नाम पर इन्होंने सभी मर्यादाओं और श्लीलता की सीमाओं को तोड़ दिया। समलैं गक सम्बन्ध, अप्राकृतिक मैथुन आदि का वस्तृत वर्णन इसका प्रमाण है।''

भारतीय जीवन मूल्यों व परम्पराओं का तिरस्कार अकहानी में मलता है। अकहानी भारतीय पारिवारिक व सामाजिक व्यवस्था को भी अस्वीकार करती है। इस सन्दर्भ में श्री जयेन्द्र त्रिवेदी लखते हैं-''सभी प्रकार के मूल्यों को अस्वीकार करना अकहानी का प्रमुख उद्देश्य था। अकहानी का 'अ' मात्र उपसर्ग न रहकर एक जीवन मूल्य माना गया जिसका हेतु पारिवारिक, सामाजिक, नैतिक और साहित्यिक मूल्यों का वघटन करना था।''

अकहानी में संवेदनाओं और भावुकता के लए कोई स्थान नहीं है। ''अकहानी स्त्री के सतीत्व में वश्वास नहीं करती तथा ववाह संस्था की पतिव्रता के समक्ष भी प्रश्न चह्न लगाती है। दाम्पत्य जीवन में सतीत्व, पतिव्रता धर्म तथा एकपत्नीत्व जैसे मूल्य यहाँ आकर बिखर गये हैं। प्रेम का परम्परागत अर्थ यहाँ शून्य हो गया है और स्त्री-पुरुष के बीच केवल शारीरिक सम्बन्ध मात्र रह गये हैं।''11 अकहानी शल्प व भाषा के स्तर पर भी सभी प्रकार के परम्परागत उपकरणों का निषेध करती है। शल्प की दृष्टि से अकहानी फैंटेसी, डायरी, निबन्ध, संस्मरण आदि वधाओं के निकट है।

'झाड़ी', 'शवयात्रा', (श्रीकांत वर्मा), ' सर्फ एक दिन', 'अकहानी', 'बड़े शहर का आदमी', 'एक डरी हुई औरत' (रवीन्द्र का लया), 'तरतीब', 'छुटकारा' (ममता का लया), ' पता', 'फेंस के इधर-उधर' (ज्ञानरंजन), 'वे दोनों' (वजयमोहन संह), 'रक्तपात', 'आइसबर्ग', 'कबन्ध' (दूधनाथ संह), 'आदमी' (प्रयाग शुक्ल), 'एक पति के नोट्स', 'फुं सया' (महेन्द्र भल्ला), 'मरी हुई चीज', 'निर्मम', 'बगैर तराशे हुए' (सुधा अरोड़ा), 'सुबह का डर', 'लोग बिस्तरों पर' (काशीनाथ संह), ' पता-दर- पता' (रमेश वक्षी), 'शीर्षकहीन' (गंगाप्रसाद वमल) जैसी कहानियों में अकहानी आन्दोलन की प्रवृत्तियों को देखा जा सकता है। अकहानी ने परम्परागत कथ्य व शल्प को छोड़कर नये-नये प्रयोगों से हिन्दी कहानी के वकास को गति दी है। परन्तु इस आन्दोलन का अनास्थावादी दृष्टिकोण व पाश्चात्य वचारकों (कामू, काफ्का, सार्त्र) के वचारों को आधार बनाकर सोची गई स्थितियों-परिस्थितियों पर आधारित कृत्रिम कथा- वधान सबसे बड़ी सीमा है। अकहानी भारतीय समाज की उपज नहीं थी। इस प्रकार इस आन्दोलन की सामाजिक स्वीकार्यता अ धक नहीं थी और यह अपने ही दायरों में समट कर रह गया।

सचेतन कहानी आन्दोलन

सन् 1964 में डॉ. महीप संह ने 'आधार' पत्रिका का 'सचेतन कहानी वशेषांक' निकाल कर हिन्दी कहानी में एक नये आन्दोलन का सूत्रपात कया जिसे 'सचेतन कहानी' आन्दोलन का नाम दिया गया। इस आन्दोलन की मुख्य वशेषता यह है क इसने सचेत रूप से जीवन में स क्रयता, आशा, आस्था और संघर्ष का भाव संचारित करने पर बल दिया। नयी कहानी आन्दोलन की प्रति क्रया में शुरू कया गया यह कहानी आन्दोलन अनास्था, कुण्ठा, अवसाद व निराशा के वातावरण से निकलने की छटपटाहट और कुछ नयी आशाओं और उम्मीदों के साथ जीवन को अनुभूत करने पर बल देता है। डॉ. हेतु भारद्वाज इस सन्दर्भ में कहते हैं क ''सचेतन कहानी उस स्वस्थ दृष्टि से सम्पन्न कहानी है जो जीवन से नहीं, जीवन की ओर भागती है। इसमें नैराश्य, अनास्था और बौ द्धक तटस्थता का प्रत्याख्यान कया जाता है और मृत्यु-भय, व्यर्थता एवं आत्मपराभूत चेतना का परिहार भी। सचेतन कहानी में आत्म-सजगता है और संघर्षेच्छा भी। वह व्यक्ति और समाज की टूटती आस्थाओं के बीच नये मूल्यों के निर्माण का स्वर मुखरित करती है।''

सचेतन कहानी में भी स्त्री-पुरुष सम्बन्धों का चत्रण पर्याप्त मात्रा में हुआ; परन्तु इधर के कहानीकारां का दृष्टिकोण अकहानी वाला दृष्टिकोण नहीं था। यह कहानी न तो सेक्स की अन्धी ग लयों में भटकती है और न ही भय या कुण्ठा से ग्रस्त है। सचेतन कहानी के नारी पात्र अपनी अस्मिता के लए संघर्षशील हैं। सचेतन कहानी

आन्दोलन मुख्यतः वैचारिक आन्दोलन था, शल्प के सन्दर्भ में कसी वशेष प्रकार का आग्रह-दुराग्रह इसमें नहीं है। सचेतन कहानी नयी कहानी और अकहानी के समान शल्प के बोझ तले न दबकर सहज अनुभवों को सहजता से अ भव्यक्त करने पर बल देती है। सचेतन कहानीकारों का मानना है क सफल कहानी वही है जिसका कथ्य पाठकों तक सहजता से संप्रे षत हो जाए। परन्तु यह आन्दोलन कथ्य और शल्प दोनों ही स्तरों पर कहानी को कोई नवीनता दे पाने में असमर्थ रहा और महीप संह व उनके कुछ साथी कहानीकारों के मध्य ही सी मत रह गया। इस प्रकार यह आन्दोलन खत्म हो गया।

सचेतन कहानी आन्दोलन को गति देने वाले कहानीकारों में महीप संह के अतिरिक्त मनहर चौहान, कुलदीप बग्गा, नरेन्द्र कोहली, वेदराही, श्रवण कुमार, योगेश गुप्त, हेतु भारद्वाज, रामदरश मश्र, जगदीश चतुर्वेदी, धर्मेन्द्र गुप्त, सुरेन्द्र अरोड़ा व हृदयेश आदि प्रमुख हैं। महीप संह की 'उजाले का उल्लू', 'स्वराघात', तथा 'धुंधले कोहरे', जगदीश चतुर्वेदी की 'अध खले गुलाब', मनहर चौहान की 'बीस सुबहों के बाद', सुरेन्द्र अरोड़ा की 'बर्फ', रामकुमार भ्रमर की 'लौ पर रखी हुई हथेली', वेदराही की 'दरार' तथा सुखवीर की 'दीवारें और उड़ने वाला घोड़ा' जैसी कहानियाँ 'सचेतन कहानी' का स्वरूप स्पष्ट करती हैं।

सहज कहानी आन्दोलन

सन् 1968 में 'नयी कहानियाँ' पत्रिका का स्वामीत्व श्री अमृतराय ने खरीद लया तथा उन्होंने अपने सम्पादन में इसे इलाहाबाद से निकालना शुरू कया। इस पत्रिका के सम्पादकीय 'सहज कहानी' शीर्षक के अन्तर्गत छपते थे। इन सम्पादकीयों के शीर्षक तथा अमृतराय के कहानी सम्बन्धी वचारों से ही सहज कहानी आन्दोलन का प्रारम्भ माना जाता है। आडम्बरों से मुक्त, बनावट से परे तथा ओढी हुई वैचारिकता से आजाद कहानी ही सहज कहानी है। सहज कहानी के वषय में अमृतराय द्वारा लखे सम्पादकीयों में सहज कहानी के लए आवश्यक जिन गुणों का उल्लेख मलता है उनमें अमृतराय कहानी में कथारस की अनिवार्यता पर बले देते हैं, सहज कथानक सहज शल्प में अ भव्यक्त होना चाहिए और कहानी में सरसता, भावुकता व संवेदना का गुण होना चाहिए। अमृतराय स्पष्ट शब्दों में कहते हैं-''नयी कहानी की खोज में सहज कहानी खो गयी।''14 वे कहानी में कहानीपन को जरूरी मानते हैं और नयी कहानी और अकहानी ने कथ्य और शल्प के स्तर पर जो अतिरिक्त उत्तेजना व जल्दबाजी दिखाई उसका वे वरोध करते हैं। सहज कहानी आन्दोलन अमृतराय तथा उनके द्वारा 'नयी कहानियाँ' में लखी गई टिप्प णयों तक ही सी मत रहा। उन्होंने सहज कहानी का शास्त्र तो प्रस्तुत कया पर उनके वचार केवल वैचारिक स्तर पर ही रह गये, अपनी कल्पना व अपने दृष्टिकोण को धरातल देने में वे असमर्थ रहे। अतः 'नयी कहानियाँ' पत्रिका के बन्द होने के साथ-साथ इस आन्दोलन का भी समापन हो गया। स्वयं अमृतराय के अलावा सुधा अरोड़ा ने भी इस आन्दोलन का समर्थन कया।

समानान्तर कहानी आन्दोलन

अक्टूबर, 1974 के 'सारिका' के अंक से कमलेश्वर द्वारा समानान्तर कहानी वशेषांकां की शृंखला के प्रकाशन से यह कहानी आन्दोलन अस्तित्व में आया। समानान्तर कहानी का केन्द्रीय बिन्दु 'आम आदमी' है। इस आन्दोलन के प्रस्तोता कमलेश्वर का मानना है क आम आदमी की जिन्दगी के व वध पहलुओं को, चाहे वे कसी भी रूप में हों, हम अपनी कहानियों में निरू पत करते हैं और उसके साथ ही जिन्दगी को इस कदर सड़ा देने वाली पूँजीवादी और साम्राज्यवादी ताकतों के खलाफ निरन्तर जूझते रहना कर्त्तव्य मानते हैं। इस प्रकार इस कहानी आन्दोलन में आम आदमी के संघर्ष की अ भव्यक्ति है और हर स्थिति में वही नायक भी है। पूरी कहानी का ताना-बाना उसी के इर्द- गर्द बुना जाता है तथा वह अपनी पूरी चेतना व ऊर्जा के साथ युगीन वसंगतियों के वरुद्ध डटकर

मुकाबला करने को उद्यत दिखाई देता है। डॉ. हेतु भारद्वाज के शब्दों में- ''समानान्तर कहानी जीवन के स्पन्दन के साथ चलने वाली रचनात्मक वधा है और वह अपनी पूरी रचनात्मक शक्ति के साथ आम आदमी के नायकत्व को स्था पत कर भ्रष्ट राजनीतिक और चतुर पूँजीवादी व्यवस्था से संघर्ष कर सामने आ गयी है।''

समानान्तर कहानी सामन्तवादी मूल्यों को अस्वीकार करते हुए नये मूल्यों की स्थापना का बीड़ा उठाती है। वह अपने केन्द्रीय पात्र 'आम आदमी' को इतना सशक्त व सक्षम बना देना चाहती है क वह दैत्याकार व्यवस्था से न केवल संघर्ष करने का साहस जुटा पाये अ पतु निरंकुश व्यवस्था को अपने तीखे प्रहारों से छिन्न- भन्न भी कर पाये। ''समानान्तर कहानी तटस्थता और निरपेक्षता को पीछे छोड़ संबद्धता की बात करती है, वह मूल्यों को व्यवहार में लाये जाने के प्रति सजग है। उन्हें कार्यान्वित भी करना चाहती है। इस दृष्टि से आज का समय इतना भयावह है, क्यों क सामान्य व्यक्ति इतना असहाय है क वह भ्रष्ट नैतिकता का खुलकर वरोध नहीं कर सकता। जब तक सामान्य जन में अनैतिक को अस्वीकार करने की शक्ति नहीं आती तब तक नये मूल्य स्था पत नहीं हो सकते। इस दिशा में समानान्तर कहानी स क्रय है।''

इस प्रकार इस आन्दोलन में वैचारिक या कथ्य के स्तर पर कोई अतिरिक्त वशेषता प्रतीत नहीं होती और कमलेश्वर द्वारा 'सारिका' का सम्पादन छोड़ने के साथ ही यह कहानी आन्दोलन समाप्तप्राय हो गया। 'मानसरोवर के हंस', 'इतने अच्छे दिन', 'रातें' (कमलेश्वर), 'एक चालू आदमी' (दिनेश पालीवाल), 'आदमी' (आशीष सन्हा), 'हरिजन सेवक', 'लहू पुकारे आदमी' (मधुकर संह), 'तमाशा' (स्वदेश दीपक), 'अंधे कुएँ का रास्ता' (अरुण मश्र), 'चौथा आश्चर्य', (जवाहर संह), 'यन्त्र पुरुष' (सुरेश सेठ), 'सुरंग में पहली सुबह' (बसंत कुमार) आदि कहानियाँ समानान्तर कहानी आन्दोलन की प्रतिनि ध कहानियाँ हैं।

स क्रय कहानी आन्दोलन

पाश्चात्य शब्द 'एक्टिव स्टोरी' के अनुकरण पर राकेश वत्स द्वारा सम्पादित 'मंच' पत्रिका के मार्च 1978 अंक को 'स क्रय कहानी वशेषांक' के रूप में निकाला गया। इस वशेषांक के प्रकाशन से ही स क्रय कहानी आन्दोलन का जन्म माना जाता है। स क्रय कहानी का सर्वा धक बल स क्रयता पर है। यह स क्रयता पात्रों तथा वचारों दोनों स्तरों पर है। इस आन्दोलन की कहानियाँ अपने पात्रों को शोषक-शक्तियों के वरुद्ध खड़ा होने का न केवल हौंसला देती हैं अ पतु उनके संघर्ष में सहयोग भी करती हैं। राकेश वत्स ने 'स क्रय कहानी की भू मका' में स क्रय कहानी की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए लखा है- ''स क्रय कहानी का सीधा और स्पष्ट मतलब है- 'चेतनात्मक ऊर्जा और जीवन्तता की कहानी, जो आदमी को बेबसी, निहत्थेपन और नपुंसकता से निजात दिलाकर स्वयं अपने अन्दर की कमजोरियों के खलाफ खड़ा होने के लए तैयार करने की जिम्मेवारी अपने सर लेती है।''

स क्रय कहानी आन्दोलन व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों का वरोध करते हुए सामूहिक मानवीय मूल्यां की स्थापना पर बल देता है। यहाँ स्वहित को परहित से जोड़कर देखने की प्रवृत्ति है अर्थात् यह कहानी व्यक्तिगत स्वार्थों और लाभों को समाजगत लाभों में बदलने की नीयत रखती है। स क्रय कहानी शो षत व पी डत वर्ग को संगठित कर शोषक वर्ग के प्रति संघर्ष पर बल देती है। जनसमर्थक मूल्यों तथा समानता की स्थापना इस कहानी आन्दोलन का मुख्य ध्येय है। 'उसका फैसला' (सुरेन्द्र सुकुमार), 'जंगली जुगरा फया' (रमेश बत्तरा), 'पहली जीत' (वकेश निझावन), 'आ खरी मोड़' (कुमार संभव), 'काले पेड़' (राकेश वत्स), 'एक न एक दिन' (नवेन्दु), 'लोग हा शये पर' (धीरेन्द्र आस्थाना) आदि कहानियों में स क्रय कहानी आन्दोलन की प्रवृत्तियों को देखा जा सकता है। स क्रय कहानी आन्दोलन कहानी की कलात्मकता पर कोई बात नहीं करता, वह मात्र कथ्य पर जोर देकर चुप हो

जाता है। स क्रय कहानी आन्दोलन अपना कोई व्यक्तिगत आधार बना पाने में असमर्थ रहा क्यों क इसकी प्रवृत्तियाँ समानान्तर व जनवादी कहानी आन्दोलन का मश्रण-सा प्रतीत होती हैं।

जनवादी कहानी आन्दोलन

सन् 1982 में दिल्ली में 'जनवादी लेखक संघ' की स्थापना के साथ ही हिन्दी कहानी में जनवादी कहानी आन्दोलन का सूत्रपात माना जाता है। 13-14 फरवरी, 1982 को दिल्ली में जनवादी लेखक संघ का प्रथम राष्ट्रीय अ धवेशन हुआ। इस अ धवेशन के पश्चात् जनवादी कहानी पर 'कलम' (कलकत्ता), 'कथन' (दिल्ली), 'उत्तरगाथा' (मथुरा-दिल्ली), 'उत्तरार्ध' (मथुरा), 'कंक' (रतलाम) जैसी पत्रिकाओं में व्यापक रूप से चर्चा प्रारंभ हो गई। जनवादी कहानी आन्दोलन की वैचारिकता मार्क्सवादी वचारधारा पर आधारित है। इस कहानी आन्दोलन में सामाजिक वसंगतियों के प्रति तीव्र आक्रोश है। श्रमजीवी वर्ग के प्रति सहानुभूति, शोषक व पूँजीपति वर्ग के प्रति गुस्सा व परम्परागत मूल्यों के प्रति अनास्था का भाव इस आन्दोलन की मुख्य प्रवृत्तियों में है।

जनवादी कहानी खोखले आदर्शों में वश्वास नहीं रखती, वह जीवन के यथार्थ चत्रांकन पर बल देती है। सामाजिक बदलाव की प्र क्रया से सही तौर पर जुड़ने व शोषण, अन्याय तथा उत्पीड़न के खलाफ खड़ा होने के प्रति प्रतिबद्ध यह कहानी समस्याओं को जमीनी स्तर पर उठाकर उनके समाधान के लए प्रयत्नशील है। मजदूर और कसान जनवादी कहानियों के केन्द्रीय पात्र हैं। ''जनवादी कहानी कसान-मजदूर के संघर्ष की कहानी है तथा वह इस संघर्ष को बहुत सूक्ष्मता के साथ उभारती है। जनवादी कहानी जीवन के यथार्थ के सन्दर्भ में सत्य की पराजय दिखाकर भी सत्य की ओर आक र्षत करने का कार्य करती है।''

इस कहानी का शल्प पक्ष की अपेक्षा वैचारिक पक्ष पर अ धक बल है। जनवादी कहानी सीधी-सादी व लोकजीवन से जुड़ी भाषा तथा सामान्य भाषा के मुहावरों का प्रयोग करती है। उसका मानना है क कथ्य का अपना शल्प होता है। चारों ओर जो जीवन बिखरा हुआ है, वही कहानी का मसाला है। पात्रों की कमी नहीं है। शल्प के लए परेशान होने की जरूरत नहीं है। कथ्य का अपना शल्प होता है, उसी को रखते जाओ। कसी प्रकार का चमत्कार दिखाना कहानी का कार्य नहीं है। परन्तु जनवादी कहानी की वषय-वस्तु एक सी मत दायरे तक समट कर रह गई, जीवन के व्यापक अनुभवों के चत्रण का इसमें अभाव है। दूसरा स्वयं को जनवादी कहलाने के उत्साह में कुछ कहानीकार सोची-समझी स्थितियों पर कहानियाँ लखने लगे जिससे इस आन्दोलन को क्षति पहुँची।

जनवादी कहानी आन्दोलन को गति देने वाले कथाकारों में 'सुधीर घोषाल', (काशीनाथ संह), 'आस्मां कैसे-कैसे', 'सूरज कब निकलेगा', (स्वयंप्रकाश), 'सुबह-सुबह', 'अब यही होगा', (हेतु भारद्वाज), 'दिल्ली पहुँचना है', 'मछ लयां' (असगर वजाहत), 'मौसा जी', 'टेपचू' (उदय प्रकाश), 'राजा का चौक', 'काले अंधेरे की मौत' (न मता संह), 'कसाईबाड़ा', (शवमूर्ति), 'बीच के लोग', (मार्कण्डेय), 'अपराध', (संजीव), 'देवी संह कौन', 'कल्प वृक्ष' (रमेश उपाध्याय) आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

उपर्युक्त आन्दोलनों के अध्ययन के पश्चात निष्कर्षतः हम कह सकते हैं क थोड़े हेर-फेर के साथ सभी कहानी आन्दोलन, कहानी के वकास की ही कामना करते हैं। इस प्रकार बीसवीं शताब्दी के प्रथम वर्ष में जन्मीं हिन्दी कहानी इक्कीसवीं सदी में अपने सशक्त, समृद्ध व प्रौढ़ रूप में प्रवेश करती है।

इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कहानी

बीसवीं सदी के प्रथम वर्ष में जन्मीं हिन्दी कहानी एक पूरी सदी जिसमें भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम, सदियों के संघर्ष के पश्चात् भारत की खं डत आजादी, भारत-पाक वभाजन की त्रासदी, आजादी के बाद भारतीय

जनमानस की आशाओं और आकांक्षाओं का दमन व पा कस्तान तथा चीन के आक्रमणों की वभी षका, पाश्चात्यीकरण के फलस्वरूप भारतीय पारिवारिक व सामाजिक ढांचे के वध्वंश आदि अनेक प्रकार के अनुभवों को स्वयं में समेटे इक्कीसवीं सदी के प्रगतिशील वातावरण में प्रवेश करती है।

यद्य प इक्कीसवीं सदी की परिस्थितियाँ भी बीसवीं सदी की परिस्थितियों से ज्यादा अलग नहीं है। फर भी सूचना, संचार व वज्ञान-तकनीक के वकास ने वचार और व्यवहार के स्तर पर अनेक परिवर्तन कए हैं। इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कहानी अत्याधुनिक तकनीकों से लैस कहानी है। कथ्य और शल्प दोनों में ही आधुनिक शै लयों व वचारों का प्रभाव इस कहानी पर दिखाई देता है। इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कहानी में कई प्रकार की वैचारिकताएं एक साथ चलती हैं जिनमें अन्त वरोधों के होते हुए अन्तर्सम्बन्ध भी हैं। बीसवीं सदी के अन्त से कुछ समय पूर्व हिन्दी कहानी जिन वषयों को लेकर गंभीर थी, उनका सघन व वस्तृत स्वरूप इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कहानियों में मलता है।

बीसवीं शताब्दी में जो समस्याएँ अपने भ्रूण रूप में भारतीय सामाजिक, राजनीतिक, धा र्मक, सांस्कृतिक तथा आ र्थक परिवेश को वच लत कए हुए थी, उन्होंने इक्कीसवीं सदी में आधुनिक उपकरणों की मदद से अपनी ताकत में इजाफा कर अनेक नई चुनौतियों को जन्म दिया। इक्कीसवीं सदी के कहानीकार को भी उसी अनुपात में 'अपडेट' होने की आवश्यकता थी और इन वसंगतियों की सघनता व स्वरूप को ध्यान में रखते हुए अपने वैचारिक व शल्पगत ह थयारों को तैयार करना था।

इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कहानी में जो वमर्श मुख्यतः उभर आये हैं और जिन्होंने कहानी को ह थयार के रूप में इस्तेमाल कया है। उनमें स्त्री- वमर्श, द लत- वमर्श तथा आदिवासी- वमर्श मुख्य हैं। द लत रचनाकार स्वानुभूति और सहानुभूति में अन्तर करते हैं। वे सवर्ण लेखकों की द लत संदर्भों से जुड़ी कहानियों को द लत लेखन में शा मल नहीं मानते। यहाँ तक की वे प्रेमचन्द, निराला और नागार्जुन के साहित्य को भी द लत- वमर्श के अन्दर नहीं मानते। उनका मानना है क उनके पास द लत पीड़ा की स्वानुभूति नहीं है क्यों क वे नहीं जानते क द लत का दर्द क्या होता है। द लत- वमर्श पर इक्कीसवीं सदी में अनेक द लत रचनाकार अनुभूति की प्रामा णकता के साथ कहानी लेखन कर रहे हैं जो न केवल अपनी पीड़ा का ही मा र्मक चत्रण करते हैं अ पतु अपने समाज की कमजोरियों को रेखां कत कर उनसे उभरने के लए भी प्रयत्नशील दिखते हैं। द लत रचनाकारों में ओमप्रकाश वाल्मी क, मोहनदास नै मशराय, श्यौराज संह बेचैन, सूरजपाल चौहान, व पन बिहारी, राजेन्द्र बड़गूजर आदि के साथ-साथ सुशीला टाकभौरे व रजत रानी 'मीनू' आदि महिला कहानीकार स क्रय हैं। द लत वमर्श को 'हंस' (राजेन्द्र यादव), 'युद्धरत आम आदमी' (रम णका गुप्ता), 'अपेक्षा' (तेज संह), 'द लत साहित्य' (जयप्रकाश कर्दम) तथा 'बयान' (मोहनदास नै मशराय) आदि पत्रिकाएँ गति दे रही हैं।

यदि इक्कीसवीं सदी की कहानी के परिदृश्य की पृष्ठभू म पर वचार करें तो बढ़ता हुआ आतंकवाद, भूमंडलीकरण और बाजारवाद का आक्रमण, उपभोक्ता संस्कृति का प्रसार, पाश्चात्य जीवन मूल्यों का आकर्षण, राजनीतिक दलों का भ्रष्टाचार, राजनीति का अपराधीकरण, सांप्रदायिक दंगे, धा र्मक क रता, मी डया और जनसंचार माध्यमों का दुरुपयोग, द लत और नारियों पर अत्याचार, जातिवाद का आतंक, आ र्थक असन्तुलन से उपजा आक्रोश, श क्षत बेरोजगारी तथा बुनियादी जरूरतों की अनुपलब्धता आदि ऐसी स्थितियाँ हैं जो इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कहानी की जमीन तैयार करती है। और यह निसंकोच भाव से कहा जा सकता है क इक्कीसवीं सदी की कहानी इन स्थितियों पर पूरे बल से प्रहार करने में सक्षम हैं।

निष्कर्षतः वर्तमान सदी की हिन्दी कहानी कसी वाद और वचारधारा में न फंसकर व भन्न वमर्शों में स्वयं को अ भव्यक्त कर रही है। इस कहानी के सरोकार वस्तृत हैं और हमारे समय के सभी ज्वलन्त मुद्दों पर वह निष्पक्ष और तटस्थ दृष्टि से अपना पक्ष रखती है।

सहायक सूची :

1. हिन्दी कहानी का इतिहास– डॉ0 गोपाल राय
2. हिन्दी कहानी का उद्भव एवं विकास– देवी शंकर अवस्थी
3. हिन्दी कहानियों का शिल्प–विधान– डॉ0 अशोक अस्थाना
4. हिन्दी गद्य साहित्य का इतिहास– डॉ0 रामचन्द्र तिवारी

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और उच्च शिक्षा

डॉ. लाल सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर,
विधि विभाग, श्री वार्ष्णेय कॉलेज, अलीगढ़

सारांश (Abstract):

भारत एक विशाल जनसंख्या वाला विशाल देश है, जो अनेकता में एकता को बांधे हुये है। जिसका मुख्य श्रेय हमारी शिक्षा पद्धति एवं संस्कृति को जाता है। इसलिए शिक्षा हर एक राष्ट्र और समाज में एक समान और न्यायपूर्ण विकास को बढ़ावा देने के लिए मौलिक युक्ति है। सामाजिक एवं आर्थिक विकास, सामाजिक न्याय और समानता, वैज्ञानिक उन्नति, राष्ट्रीय अखंडता और सांस्कृतिक धरोहरों के संरक्षण के मामले में वैश्विक स्तर पर भारत की निरंतर प्रगति और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिए सार्वभौमिक पहुंच प्रदान करना महत्वपूर्ण है। सम्पूर्ण दुनिया की भलाई के लिए हमारे देश की प्रतिभाओं और संसाधनों को और अधिकतम समृद्ध, विकसित करने के लिए सार्वभौमिक उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा सबसे अच्छा माध्यम एवं महत्वपूर्ण साधन है। आने वाले अगले दशक में भारत के युवाओं की दुनिया में सबसे अधिक संख्या होगी। इसलिए उनको उच्च गुणवत्ता वाले शैक्षिक अवसर प्रदान करने की हमारी सर्वप्रथम जिम्मेदारी होनी चाहिए, क्योंकि ये ही हमारे देश के भविष्य का निर्धारण करेंगें।

प्रस्तावनाः

आज सम्पूर्ण दुनिया ज्ञान परिदृश्य के सम्बंध में तेजी से बदलाव के दौर से गुजर रही है। 21वीं सदी की पहली शिक्षा नीति को 29 जुलाई 2020 को मा. प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के नेतृत्व वाली भारत सरकार ने 34 वर्षों के लंबे समय से प्रतीक्षित राष्ट्रीय शिक्षा नीति (National Education Policy) को मंजूरी दी है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 का उद्देश्य पूरे देश में स्कूली शिक्षा और उच्च शिक्षा दोनों के लिए एक व्यापक धारणा और

ढांचा तैयार करना है। यह नई शिक्षा प्रणाली शिक्षा के विनियमन और शासन सहित शैक्षिक संरचना के सभी संबन्धित पहलुओं के संशोधन एवं पुनर्निर्माण करने का प्रस्ताव देती है। उक्त प्रस्तावित शिक्षा प्रणाली भारत की लगभग समस्त परंपराओं और मूल्यों पर आधारित है और साथ ही सतत विकास के लक्ष्यों सहित 21 वीं सदी की शिक्षा के वांछित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है। जबकि आज की दुनिया में तेजी से बदलते रोजगार परिदृश्य और वैश्विकीकरण की प्रतिस्पर्धा में यह बहुत ही महत्वपूर्ण होता जा रहा है कि बच्चे न केवल सीखते रहें, बल्कि अधिक से अधिक सीखना है। इस प्रकार शिक्षा पद्धति ऐसी होनी चाहिए कि कैसे गंभीर रूप से सोचें और समस्याओं का शीघ्रतम निदान करें। शिक्षा को अधिक अनुभवनात्मक, खोज–उन्मुख, समग्र, एकीकृत, छात्र संबन्धित, चर्चा–आधारित बनाने के लिए शिक्षाशास्त्र को अधिक से अधिक विकसित करना होगा। छात्रों की क्षमताओं को अधिक से अधिक विकसित करने के लिए पाठ्यक्रम में विज्ञान और गणित के अलावा बुनियादी भाषाएं, साहित्य, संस्कृति और मूल्य तथा कला, शिल्प, मानविकी, खेल और स्वास्थ्य शामिल कर सम्पूर्ण चरित्र एवं व्यक्तित्व का निर्माण करना चाहिए। यही एक जरिया है जिससे एक अच्छे राष्ट्र का निर्माण संभव होगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 का उद्देश्यः राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के द्वारा एक ऐसी केंद्रित शिक्षा प्रणाली की कल्पना की जाती है, जो हमारे राष्ट्र के विकास में सीधे तौर पर योगदान दे सके। साथ ही उन्हें समाज में एक उच्च श्रेणी की शिक्षा देकर एक समान और जीवंत ज्ञान को स्थायी बनाती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के मौलिक सिद्धांतः

- शैक्षिक और गैर–शैक्षिक दोनों क्षेत्रों में हर एक छात्र के सम्पूर्ण विकास को बढ़ावा देने के लिए शिक्षकों के साथ–साथ माता–पिता को संवेदनशील बनाकर प्रत्येक छात्र की अद्वितीय क्षमताओं को पहचानना और उनको बढ़ावा देना।
- प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और स्कूली शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक शिक्षा के सभी स्तरों पर पाठ्यक्रम में तालमेल
- शिक्षण और सीखने में बहुभाषावाद की शक्ति को बढ़ावा देना।

- रटकर सीखने और परीक्षा के लिए सीखने के बजाय वैचारिक समझ पर जोर देना।
- छात्रों के पास अपने सीखने के लिए कार्यक्रमों को चुनने की क्षमता हो, जिससे वे अपनी प्रतिभा और रुचि के अनुसार अपने जीवन में अपना रास्ता खुद चुन सकें।
- तार्किक निर्णय लेने और नवाचार को प्रोत्साहित करने के लिए रचनात्मकता और महत्वपूर्ण सोच।
- जीवन कौशल जैसे संचार, सहयोग, टीम वर्क।
- यह सुनिश्चित करने के लिए कि सभी छात्र शिक्षा प्रणाली में फलने–फूलने में सक्षम हैं, सभी शैक्षिक निर्णयों की आधारशिला के रूप में पूर्ण समानता और समावेशन।
- उत्कृष्ट शिक्षा और विकास के लिए मूल आवश्यकता के रूप में उत्कृष्ट अनुसंधान।
- कला और विज्ञान के बीच व्यावसायिक, नैतिकता और मानवीय और संवैधानिक मूल्य, स्वच्छता, शिष्टाचार, लोकतांत्रिक भावना, सेवा की भावना, सार्वजनिक संपत्ति के लिए सम्मान करना।
- ज्ञान की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने के लिए एक बहु–विषयक दुनिया के लिए विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, कला, मानविकी और खेल में बहुविषयकता।
- सतत अनुसंधान और शैक्षिक विशेषज्ञों द्वारा नियमित मूल्यांकन के आधार पर प्रगति की निरंतर समीक्षा इत्यादि।

चॉइस बेस्ड क्रेडिट सिस्टम आधारित नीतिः

शिक्षा पद्धति को ऐसा होना चाहिए कि वो नागरिकों को एक सार्थक और संतोषजनक जीवन जीने मंक सक्षम बना सके। किसी भी समाज अथवा व्यक्ति की व्यक्तिगत उपलब्धि, उन्नति, और समाज में रचनात्मक योगदान गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के द्वारा ही संभव हो सकता है, इसलिए प्राथमिक विद्यालय से लेकर उच्च शिक्षा तक सीखने के प्रत्येक चरण में कौशल और मूल्यों को शामिल करना आवश्यक है। जिसके सुधार में

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 द्वारा कई महत्वपूर्ण सुझाव पेश किये हैं। उच्च शिक्षा के महत्व को बचाने के लिए उच्च शिक्षा संस्थानों (Higher Education Institute) को बहु–विषयक विश्वविद्यालयों समूहों में बदलना राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 की प्रमुख सिफारिश है। यह कदम प्राचीन भारतीय विश्वविद्यालयों, तक्षशिला, नालंदा, और विक्रमशिला को संदर्भित करता है, जिसमें भारत और दुनिया के हजारों छात्र एक जीवंत बहु–विषयक वातावरण में अध्ययन करते थे। कुशल और सरल मानव बनाने के लिए महान भारतीय परंपरा के मूल्य को वापस पाने की दिशा में यह परिवर्तन अत्यंत ही महत्वपूर्ण है। उपयुक्त संसाधन, प्रोत्साहन और संरचनाओं के माध्यम से उच्च शिक्षा संस्थानों को उनकी बेहतरी, अभ्यास के विभिन्न क्षेत्रों में योगदान, सामुदायिक सेवा और भागीदारी, उच्च शिक्षा प्रणाली के लिए संकाय विकास आदि में भी सहायता करेंगे।

संस्थानों और शिक्षकों को पाठ्यक्रम और शिक्षाशास्त्र को डिजाइन करने की स्वायत्तता होगी जो सभी छात्रों के लिए एक उत्साहजनक और सीखने का अनुभव सुनिश्चित कर चॉइस बेस्ड क्रेडिट सिस्टम (Choice Based Credit System) व्यवस्था देता है। सभी मूल्यांकन प्रणालियों को भी उच्च शिक्षा संस्थानों द्वारा निर्धारित किया जाएगा, जिसमें वे भी शामिल हैं जो अंतिम प्रमाणीकरण की ओर ले जाते हैं।

शिक्षार्थियों के सुधार की मुख्य प्रणालीः

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 का समग्र जोर शिक्षा प्रणाली को वास्तविक समझ की ओर ले जाकर सीखना–सीखना है, और काफी हद तक विद्यमान रटने वाली पद्धति से दूर ले जाना है। शिक्षा का उद्देश्य न केवल संज्ञानात्मक विकास होता है, बल्कि चरित्र का निर्माण होता है। इन महत्वपूर्ण लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए पाठ्यक्रम और शिक्षाशास्त्र के सभी पहलुओं को फिर से उन्मुख और नया रूप दिया जाएगा। प्राथमिक विद्यालय से लेकर उच्च शिक्षा तक सीखने के प्रत्येक चरण में एकीकरण और समावेशन के लिए सभी क्षेत्रों में कौशल और मूल्यों के विशिष्ट वर्गों की पहचान की जाएगी। एनसीईआरटी इन आवश्यक कौशल सेटों की पहचान करेगा और प्रारंभिक बचपन और स्कूली शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या ढांचे में शामिल करेगा। एनसीईआरटी, एससीईआरटी, स्कूलों और

शिक्षकों द्वारा पाठ्यचर्या और शिक्षाशास्त्र में उपयुक्त परिवर्तनों के माध्यम से स्कूल बैग और पाठ्यपुस्तकों के वजन को कम करने के लिए ठोस प्रयास किए जाएंगे, जिन्हें छात्रों को दैनिक आधार पर स्कूल ले जाना होता है। हमारी स्कूली शिक्षा प्रणाली की संस्कृति में मूल्यांकन का उद्देश्य मुख्य रूप से रटने के कौशल का परीक्षण करने वाले एक से स्थानांतरित हो जाएगा जो अधिक रचनात्मक है, अधिक योग्यता–आधारित है, हमारे छात्रों के लिए सीखने और विकास को बढ़ावा देता है। साथ ही साथ बोर्ड परीक्षाओं को भी सरल बनाया जाएगा। जो छात्र नियमित रूप से स्कूल की कक्षा में भाग ले रहा है और हर सम्भव प्रयास कर रहा है, वह बिना अतिरिक्त प्रयास के बोर्ड परीक्षा पास कर सकेगा अर्थात उन्हे महीनों की कोचिंग से निजात मिलेगी। और रटने वाली पद्धति से भी छुटकारा मिल सकेगा।

उच्च शिक्षण संस्थानों का समेकन एवं पुनर्गठनः

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के तहत उच्च शिक्षा में इसका मुख्य जोर उच्च शिक्षा संस्थानों को बड़े बहु–विषयक विश्वविद्यालयों, कॉलेजों और उच्च शिक्षा संस्थान समूहों में बदलकर उच्च शिक्षा के विखंडन को समाप्त करना है, जिनमें से प्रत्येक संस्थान का लक्ष्य 3,000 या उससे अधिक छात्र होंगे। यह सोचा गया है कि समय के साथ सभी स्थापित एचईआई और नए एचईआई अनुसंधान विश्वविद्यालयों, शिक्षण विश्वविद्यालयों और स्वायत्त डिग्री देने वाले कॉलेजों में विकसित होंगे। इस सम्बंध में उच्च शिक्षा के लिए नए संस्थागत ढांचे को स्थापित करने के लिए मौजूदा एचईआई को तर्कसंगत बनाने की आवश्यकता होगी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के तहत 2040 तक सभी उच्च शिक्षा संस्थान बहु–विषयक संस्थान बन जाएंगे और बुनियादी ढांचे और संसाधनों के अधिकतम उपयोग के लिए हजारों कि संख्या में छात्रों का नामांकन होने लगेगा। सभी उच्च शिक्षा संस्थानों को सबसे पहले बहुविषयक योजना बनानी होगी और उसी क्रम में धीरे–धीरे छात्र शक्ति बढ़ानी होगी।

शिक्षा के व्यावसायीकरण पर अंकुश लगानाः

सामान्यतः किसी भी चीज का व्यावसायीकरण उस प्रक्रिया के रूप में बताया जाता है जिसके द्वारा उस वस्तु को सामान्य बाजार में लाया जाता है। इसी संदर्भ में यदि हम बात करें तो शिक्षा का व्यावसायीकरण सामने आता है, क्योंकि जब मानविकी की प्रधानता फीकी पढ़ जाती है और उपभोक्ताओं (छात्रों) की ओर ध्यान बढ़ जाता है। तब हम कह सकते हैं कि शिक्षा व्यवसायोन्मुखी होने की ओर अग्रसर है। शिक्षा का यही व्यवसायीकरण शिक्षण संस्थानों को उचित मूल्य पर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने के लिए प्रतिस्पर्धा की ओर ले जाता है, जहाँ इसकी दिशा उन छात्रों और शिक्षकों के ऊपर निर्भर करती है। समान्यतः शिक्षा के इस व्यावसायीकरण का सबसे प्रमुख कारण लोगों द्वारा लगाया गया धन होता है, क्योंकि भारत में यह मानसिकता बहुत स्पष्ट है कि जिस भी शिक्षण संस्थान की लोकप्रियता अधिक होती है, वही अच्छी शिक्षा प्रदान कर सकता है। लेकिन शिक्षण अनस्थानों की समस्या यहीं खत्म नहीं होती है। आज भारत वैश्विक स्तर पर उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा देने के क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा का सामना कर रहा है। ऐसे में अधिकांश स्कूलों द्वारा अपनी लोकप्रियता हासिल करने के लिए फीस वृद्धि को अपना हथियार बनाया है क्योंकि इनके इस कृत्य पर सरकार अंकुश लगाने में असहाय दिखती है, इसका मुख्य कारण सरकार के पास अपर्याप्त धन का होना है। भारत में शिक्षा के व्यावसायीकरण का एक अन्य कारण जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि है। भारत में माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों की संख्या में हर साल भारी वृद्धि हो रही है, इस प्रकार यह लाभ कमाने के एजेंडे के साथ शैक्षणिक संस्थानों के लिए एक अच्छा अवसर प्रदान करता है। सरकार प्राथमिक शिक्षा देने के लिए प्रतिबद्ध है। यद्यपि शिक्षा का व्यावसायीकरण दुनिया में विभिन्न कठिनाइयों का सामना करने में सहायता करता है। शिक्षा का व्यावसायीकरण छात्रों को विभिन्न नयी—नयी जानकारी प्राप्त करने में मदद करता है। इसके लिए, कई शैक्षिक संगठनों ने दुनिया भर में नई कठिनाइयों को दूर करने के लिए पाठ्यक्रम और शैक्षिक योजना में बदलाव किया है। उच्च शिक्षा के व्यावसायीकरण को रोकने के लिए सरकार ने कई उपाय किए हैं। जिसमें यूजीसी ने निजी विश्वविद्यालयों की स्थापना और

मानकों में विभिन्न प्रावधान दिये हैं। यूजीसी ने डीम्ड–टू–बी विश्वविद्यालय के सम्बंध में भी प्रावधान जारी किए हैं। केंद्रीय, राज्य, निजी एवं डीम्ड विश्वविद्यालय इत्यादि के संचालन के लिए यूजीसी समय–समय पर विभिन्न नियम बनाता रहता है। आज आवश्यक हो गया है कि शिक्षा व्यवसायीकरण पर अंकुश लगाना चाहिए।

निष्कर्षः

भारत एक विशाल जनसंख्या वाला विशाल देश है, जो अनेकता में एकता को बांधे हुये है, जिसका मुख्य श्रेय हमारी शिक्षा पद्धति एवं संस्कृति को जाता है। इसलिए शिक्षा हर एक राष्ट्र और समाज में एक समान और न्यायपूर्ण विकास को बढ़ावा देने के लिए मौलिक युक्ति है। आज सम्पूर्ण दुनिया ज्ञान परिदृश्य के सम्बंध में तेजी से बदलाव के दौर से गुजर रही है। 21वीं सदी की पहली शिक्षा नीति को 29 जुलाई 2020 को मा. प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के नेतृत्व वाली भारत सरकार ने 34 वर्षों के लंबे समय से प्रतीक्षित राष्ट्रीय शिक्षा नीति (National Education Policy) को मंजूरी दी है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 का उद्देश्य पूरे देश में स्कूली शिक्षा और उच्च्च शिक्षा दोनों के लिए एक व्यापक धारणा और ढांचा तैयार करना है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 का समग्र जोर शिक्षा प्रणाली को वास्तविक समझ की ओर ले जाकर सीखना–सिखाना है, और काफी हद तक विद्यमान रटने वाली पद्धति से दूर ले जाना है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के द्वारा एक ऐसी केंद्रित शिक्षा प्रणाली की कल्पना की जाती है, जो हमारे राष्ट्र के विकास में सीधे तौर पर योगदान दे सके। हम एक विविधता वाले देश में रहते हैं जहां हर दस–पंद्रह किलोमीटर पर भाषा–बोली बदल जाती है। जहां लोग अपने अनूठे रीति–रिवाजों को खुले तौर पर व्यक्त करते हैं और निश्चित रूप से इस देश की विविधता को जोड़े रहते हैं। इस परिदृश्य में नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 देश एवं समाज के लिए एक मील का पत्थर साबित होगी।

संदर्भ ग्रंथः–

- https//www.sentinelassamcom/editorial/nep&2020&and&higher&education &543483
- https://www.educationworld.in/nep-2020-school-education-holistic-development-of-learners/
- https://www.education.gov.in
- रोज ए 2020, राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 और उच्च शिक्षा भारत पर इसका प्रभाव, जर्नल ऑफ कॉमर्स एण्ड मैनेजमेंट थोट।
- **https://niepid.nic.in/nep**_2020
- https://ruralindiaonline.org/en/library/resource/national-education-policy-2020
- मारुथवाना, एम.2020, माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों के बीच नई शिक्षा नीति 2020 पर जागरूकता पर एक अध्ययन, शानलैक्स एजुकेशनल जर्नल।
- **https://en.m.wikipedia.org**

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन

शोध निर्देशक
प्रो0 एन. एल. मिश्र
अधिष्ठाता, कला संकाय
महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय,
चित्रकूट, जिला–सतना (म0प्र0)

शोधकर्ता
चन्द्र प्रकाश मणि त्रिपाठी
शोधछात्र (शिक्षाशास्त्र)
कला संकाय
लोक शिक्षा एवं जनसंचार विभाग
महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय
विश्वविद्यालय, चित्रकूट, जिला–सतना
(म0प्र0) पिन–485334

सारांश

प्रस्तुत अध्ययन का शीर्षक **''सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन''** है। जिसके अन्तर्गत लिंग के आधार पर शिक्षकों में शैक्षिक तनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण का सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के शिक्षकों की तुलना की गयी है। प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। जनसंख्या के रूप में प्रयागराज जनपद के सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों को जनसंख्या माना गया है। न्यादर्श के रूप में 100 शिक्षकों जिसमें सामान्य विद्यालयों से 50 शिक्षक (25 पुरुष एवं 25 महिला) एवं दिव्यांग विद्यालयों से 50 शिक्षक (25 पुरुष एवं 25 महिला) अर्थात् कुल 100 शिक्षकों का चयन यादृच्छिक विधि से किया गया है। उपकरण के रूप में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण के अध्ययन प्रपत्र का स्वनिर्माण किया गया है जिसमें कुल 52 प्रश्नों का निर्माण किया और विषय विशेषज्ञों की सलाह व विचार विमर्श के बाद उसमें से 44 कथनों को चुना गया और अपने अध्ययन प्रपत्र में शामिल किया। प्रत्येक कथन तीन बिन्दु 'सहमत', 'अनिश्चित' एवं असहमत पर निर्मित है। आँकड़ों के विश्लेषण के मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–अनुपात सांख्यिकी विधियों का प्रयोग किया गया है। अध्ययन के निष्कर्ष में सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर पाया गया अर्थात् दिव्यांग विद्यालयों के शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण सामान्य विद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों की अपेक्षा उच्च पायी गयी।

की–वर्ड – सामान्य, दिव्यांग विद्यालय, शैक्षिक तकनीकी, दृष्टिकोण

प्रस्तावना

शिक्षा जीवन का अभिन्न अंग है। यह मानव जीवन को श्रेष्ठ बनाने का महत्वपूर्ण साधन है। इसके द्वारा मानव की योग्यताओं का अधिकतम विकास सर्वाधिक सरल, सुव्यवस्थित एवं प्रभावी ढंग से किया जा सकता है। यह एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा एक समूचा समाज अपनी महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति करता है।

यह कथन पूर्णतः सत्य के समीप है कि आज का समाज तकनीकी पर आधारित है। वर्तमान युग में तकनीकी के प्रयोग ने हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है, वहीं दूसरी ओर शिक्षा का क्षेत्र उसके सीधे प्रभाव में है। उसके द्वारा विकसित अनेकों उपकरण सहायक सामग्री का काम देते हैं। अनेक षोधकर्ता अपने षोधों के द्वारा इस निश्कर्श पर पहुँचे हैं कि शैक्षिक तकनीकी के अन्तर्गत विकसित सहायक सामग्री की सहायता से शिक्षण कार्य करने से शिक्षण अधिक प्रभावी एवं बोधगम्य होता है।

वर्तमान युग तकनीकी का युग है। जीवन का षायद ही कोई पहलू होगा जो इसके प्रभाव से अछूता हो। शिक्षा में तकनीकी की विविध उपयोगिता को देखते हुए आज अधिकतर विद्यालय तकनीकी शिक्षा की ओर उन्मुख हो रहे हैं। चूँकि शिक्षा में तकनीकी के प्रयोग से शिक्षण की गुणवत्ता और विद्यार्थी की उपलब्धि स्तर में सुधार लाया जा सकता है।

शैक्षिक तकनीकी एक ऐसी प्रविधि का विज्ञान है जिसके द्वारा शिक्षा के उद्देष्यों को प्राप्त किया जा सकता है। इसका क्षेत्र केवल उद्देष्यों को निर्धारित करने तक ही सीमित नही हैं, अपितु यह उद्देष्यों को व्यावहारिक रूप में परिभाशित करने में सहायक है। शैक्षिक तकनीकी कोई शिक्षण पद्धति नही है वरन् यह एक ऐसा विज्ञान है जिसके आधार पर शिक्षा के विषिश्ट उद्देष्यों की अधिकतम प्राप्ति के लिये विभिन्न आव्यूह का निर्धारण तथा विकास किया जा सकता है।

शैक्षिक तकनीकी में मुख्य दो बिन्दु निहित हैं–

1. शिक्षण उद्देष्यों की प्राप्ति करना।
2. शिक्षण की क्रियाओं का यांत्रिकीकरण करना।

'शैक्षिक तकनीकी' शिक्षण उद्देष्यों को व्यावहारिक रूप देते हुए विभिन्न विधियों एवं प्रविधियों को जन्म देती है। शैक्षिक तकनीकी का दूसरा अर्थ है– शिक्षण की क्रियाओं का यांत्रिकरण करना। शिक्षण की प्रक्रिया में मषीनों का प्रयोग अधिक तेजी से बढ़ रहा है। यदि शिक्षा तकनीकी के आविर्भाव का इतिहास लिखा जाये तो व्यक्तियों की धारणा है कि इसके इतिहास का प्रारम्भ छापने की मशीनों मुद्रण से मानना चाहिये। जैसे–जैसे वैज्ञानिक युग में मषीनों का आविष्कार हुआ, वैसे–वैसे उनका प्रयोग शिक्षा के क्षेत्र में भी किया जाने लगा।

कुछ शिक्षाशास्त्री शिक्षा के उददेदयों को व्यावहारिक रूप में लिखना और उनकी प्राप्ति हेतु दृष्य–श्रव्य उपकरणों का प्रयोग करने को ही 'शैक्षिक तकनीकी' कहते हैं, जबकि कुछ शिक्षाशास्त्री शिक्षण मषीनों तथा अभिक्रमित अनुदेशन को ही शैक्षिक तकनीकी स्वीकार करते हैं। अतः शैक्षिक तकनीकी की अनेक परिभाषाएँ दी गई हैं, जो निम्नवत् हैं–

'लेंथ' महोदय ने 'शैक्षिक तकनीकी' की व्यापक परिभाषा दी है। उनके अनुसार– ''अधिगम तथा अधिगम की परिस्थितियों के वैज्ञानिक ज्ञान का प्रयोग जब शिक्षा तथा प्रशिक्षण के सुधारने तथा प्रभावषाली बनाने में किया जाता है, तब उसे शैक्षिक तकनीकी कहते हैं।''

राबर्ट एम0 गेने–''शिक्षा तकनीकी से तात्पर्य है कि व्यावहारिक ज्ञान भी सहायता से सुनियोजित प्रविधियों का विकास करना, जिससे विद्यालयों की शैक्षिक प्रणाली के परीक्षण तथा शिक्षा कार्य की व्यवस्था की जा सके।''

सम्पूर्ण विष्व में शिक्षा में तकनीकी के प्रयोग के महत्व को स्वीकार किया जा रहा है। अतः विद्यालय स्तर पर यह जानना समाचीन होगा कि भारतीय समाज विषेशकर विद्यालयों में

अध्यापनरत् शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रति जागृति का स्तर क्या है? यदि उनकी अभिरूचि में सकारात्मकता के दर्षन होते हैं तो समय के साथ–साथ भविश्य में शिक्षण प्रक्रिया में सभी स्तर पर इसका प्रयोग अधिक से अधिक किया जा सकेगा।

व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का एक महत्वपूर्ण पक्ष उसकी अभिवृत्तियाँ हैं। विभिन्न वस्तुओं, व्यक्तियों, स्थितियों, योजनाओं आदि के प्रति व्यक्ति विषेश के विचार एवं पूर्ण धारणाएँ ही उस व्यक्ति की अभिवृत्तियों का निर्धारण करती हैं। विषिश्ट परिस्थितियों में शिक्षण अधिगम का प्रभाव प्रत्येक शिक्षकों पर तदनुरूप पड़ता है, जिस कारण उनकी अभिवृत्ति सार्थक रूप से प्रभावित होगी।

यह आवश्यक होता है कि विद्यालय में अध्यापनरत् शिक्षकों की अभिवृत्ति को शैक्षिक तकनीकी के संदर्भ में षोध के द्वारा जाना जाये। यद्यपि पूर्व में अभिवृत्ति पर आधारित कुछ षोध कार्य किये गये हैं। कुछ षोध तकनीकी शिक्षा के पाठ्यक्रम, कम्प्यूटर शिक्षा के प्रति छात्रों का दृष्टिकोण व सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों के तकनीकी के संदर्भ मे किया गया है।

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में शिक्षकों के तकनीकी शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण का सकारात्मक होना आवश्यक है जिससे उनके शिक्षण कार्यों से विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि में सकारात्मक प्रभाव पड़ सके। जिसका समर्थन पूर्व में किये गये शोध कार्यों के आधार पर किया जा सकता है। **गुप्ता, पाण्डेय एवं माथुर (2007)** ने अध्ययन में पाया कि शिक्षक प्रशिक्षण उद्देश्य एवं उपलब्धियॉ प्रसारण से 85 प्रतिशत शिक्षकों को विद्यार्थियों के उपलब्धि स्तर को बढ़ाने में मदद मिली है। **बुलेन्त कवास एवं अन्य (2009),** ने अध्ययन में इंगित किया कि विज्ञान शिक्षकों का सूचना एवं संचार तकनीकी के क्षेत्र में धनात्मक अभिवृत्ति है जबकि सूचना एवं संचार तकनीकी के परिप्रेक्ष्य में शिक्षकों की अभिवृत्ति का लिंग से कोई लेना–देना नहीं है, फिर भी उम्र, घर पर कम्प्यूटर होना एवं अनुभव से शिक्षकों की अभिवृत्ति में खासा फर्क आता है। **जायसवाल एवं अन्य (2012). ने अध्ययन में पाया कि** सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के रूप मे उभरते हुए सबसे बड़े उपकरण का उपयोग शिक्षण अधिगम प्रक्रिया सहित शिक्षक शिक्षा में करना अत्यंत आवष्यक हो। **कौर (2012) ने अध्ययन में इंगित किया कि** शिक्षक शिक्षा की दिषा में गुणवत्ता लाने के लिये सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी, दूरवर्ती अधिगम तथा सेवाकालीन कार्यक्रमों की भूमिका को महत्वपूर्ण बताया है। **चौधरी एवं वर्मा (2012)** द्वारा अध्ययन में इंगित किया किया गया कि सूचना एवं संचार तकनीकी को परम्परागत प्रशिक्षण एवं सेवाकालीन प्रशिक्षण के साथ में रखते हुए प्रशिक्षण की नई व्यवस्था लाना महत्वपूर्ण है। **राठौड़, अनामिका (2014)** ने अध्ययन में इंगित किया कि शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण दक्षता पर सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी का प्रभाव पड़ता है। **खण्डेलवाल, मधु (2018)** ने निष्कर्ष में पाया कि सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी के परिणाम आज शिक्षा के क्षेत्र में सकारात्मक रूप से प्रभावशाली परिवर्तन होते है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी को अति–आवश्यक मानकर इसका विकास विभिन्न देशों में लगातार किया जा रहा है। शैक्षिक प्रौद्योगिकी का प्रमुख उद्देश्य शिक्षण व अधिगम में आधुनिक विधियों व प्रौद्योगिकी का क्रमबद्ध प्रयोग करना है। यह शिक्षक की परम्परागत तथा उभरती हुई भूमिकाओं का मेल करवाती है। अतः वर्तमान शिक्षा के क्षेत्र में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का प्रभावशाली ढंग से प्रयोग कर शिक्षा की प्रगति में अपेक्षित रूप से बदलाव किया जा सकता है।

उपर्युक्त शोध अध्ययन के आधार पर आवष्यक होता है कि विद्यालय में अध्यापनरत् शिक्षकों की अभिवृत्ति को शैक्षिक तकनीकी के संदर्भ में षोध के द्वारा जाना जाये। यद्यपि पूर्व में

अभिवृत्ति पर आधारित कुछ षोध कार्य किये गये हैं। कुछ षोध तकनीकी शिक्षा के पाठ्यक्रम, कम्प्यूटर शिक्षा के प्रति छात्रों का दृष्टिकोण व सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों के तकनीकी के संदर्भ मे किया गया है।

समस्या कथन–

''सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन''।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित उद्देश्यों का अध्ययन किया गया है–

1. सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन करना।
2. सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के पुरुष शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन करना।
3. सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के महिला शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित शून्य परिकल्पनाओं का परीक्षण किया गया है–

1. सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर नहीं है।
2. सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के पुरुष शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर नहीं है।
3. सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के महिला शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर नहीं है।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। जनसंख्या के रूप में प्रयागराज जनपद के सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों को जनसंख्या माना गया है। न्यादर्श के रूप में 100 शिक्षकों जिसमें सामान्य विद्यालयों से 50 शिक्षक (25 पुरुष एवं 25 महिला) एवं दिव्यांग विद्यालयों से 50 शिक्षक (25 पुरुष एवं 25 महिला) अर्थात् कुल 100 शिक्षकों का चयन यादृच्छिक विधि से किया गया है। उपकरण के रूप में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण के अध्ययन प्रपत्र का स्वनिर्माण किया गया है जिसमें कुल 52 प्रश्नों का निर्माण किया और विषय विशेषज्ञों की सलाह व विचार विमर्श के बाद उसमें से 44 कथनों को चुना गया और अपने अध्ययन प्रपत्र में शामिल किया। प्रत्येक कथन तीन बिन्दु 'सहमत', 'अनिश्चित' एवं असहमत पर निर्मित है। आँकड़ों के विश्लेषण के मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–अनुपात सांख्यिकी विधियों का प्रयोग किया गया है।

परिकल्पनाओं का विश्लेषण एवं व्याख्या :

1. सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण की तुलना–

H_1 सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर है।

H_{01} सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर नहीं है।

सारणी सं0 1

सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–मान

क्र0 सं0	न्यादर्श	संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	मध्यमान का अन्तर	प्रमाणिक त्रुटि	टी–मान	सारणी मान
1.	सामान्य विद्यालय	50	51.24	13.70	14.46	2.96	4.89*	1.98 df=98
2.	दिव्यांग विद्यालय	50	65.70	15.87				

*0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक

व्याख्या–

उपर्युक्त सारणी सं0 1 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण का मध्यमान क्रमशः 51.24 एवं 65.70 तथा मानक विचलन क्रमशः 13.70 एवं 15.87 है। परिगणित टी–अनुपात का मान 4.89 है। मुक्तांश 98 तथा 0.05 सार्थकता स्तर पर टी–अनुपात का सारणी मान 1.98 है अर्थात् परिगणित टी–अनुपात सारणी मान से अधिक है, अतः कहा जा सकता है कि 0.05 सार्थकता स्तर पर शून्य परिकल्पना निरस्त की जाती है।

प्रस्तुत उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्राकल्पित किया गया था कि *सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर है* जो कि सार्थकता स्तर 0.05 पर स्वीकृत की जाती है तथा शून्य परिकल्पना *सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर नही है,* निरस्त की जाती है तथा परिणामतः कहा जा सकता है कि दिव्यांग विद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों की शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण सामान्य विद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों की अपेक्षा उच्च पायी गयी अर्थात् दोनों में सार्थक अन्तर पाया गया।

आरेख सं0 1

सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों के शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण के मध्यमानों का आरेखीय चित्र

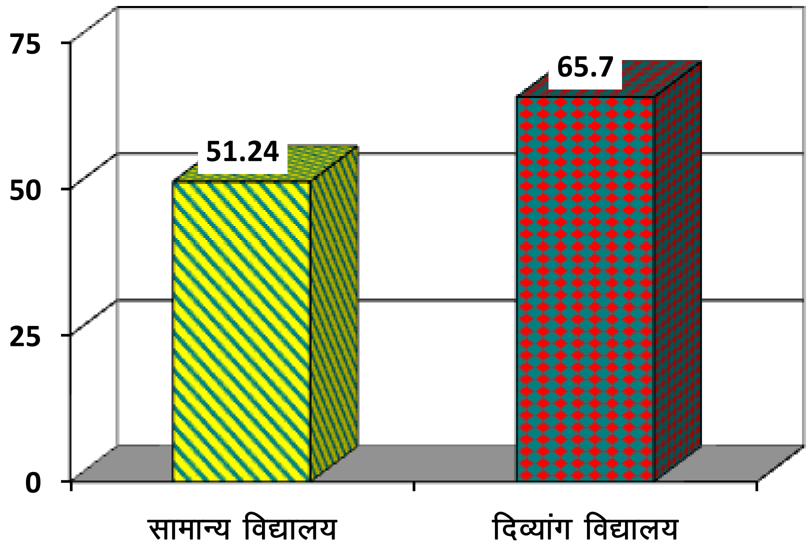

2. सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के पुरुष शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण की तुलना–

H_2 सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के पुरुष शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर है।

H_{02} सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के पुरुष शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर नहीं है।

सारणी सं0 2

सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के पुरुष शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–मान

क्र0 सं0	न्यादर्श	संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	मध्यमान का अन्तर	प्रमाणिक त्रुटि	टी–मान	सारणी मान
1.	सामान्य विद्यालय	25	51.44	15.31	19.64	4.39	4.47*	2.01 df=48
2.	दिव्यांग विद्यालय	25	71.08	15.71				

*0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक

व्याख्या– उपर्युक्त सारणी सं0 2 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के पुरुष शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण का मध्यमान क्रमशः 51.44 एवं 71.08 तथा मानक विचलन क्रमशः 15.31 एवं 15.71 है। परिगणित टी–अनुपात का मान 4.47 है। मुक्तांश 48 तथा 0.05 सार्थकता स्तर पर टी–अनुपात का सारणी मान 2.01 है अर्थात् परिगणित टी–अनुपात सारणी मान से अधिक है, अतः कहा जा सकता है कि 0.05 सार्थकता स्तर पर शून्य परिकल्पना निरस्त की जाती है।

प्रस्तुत उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्राकल्पित किया गया था कि *सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के पुरुष शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर है* जो कि सार्थकता स्तर 0.05 पर स्वीकृत की जाती है तथा शून्य परिकल्पना *सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के पुरुष शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर नही है,* निरस्त की जाती है तथा परिणामतः कहा जा सकता है कि दिव्यांग विद्यालयों में अध्यापनरत् पुरुष शिक्षकों की शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण सामान्य विद्यालयों में अध्यापनरत् पुरुष शिक्षकों की अपेक्षा उच्च पायी गयी अर्थात् दोनों में सार्थक अन्तर पाया गया।

आरेख सं0 2

सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों में अध्यापनरत् पुरुष शिक्षकों के शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण के मध्यमानों का आरेखीय चित्र

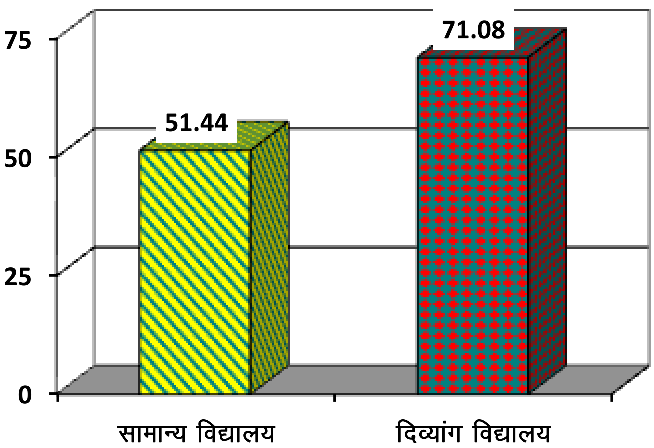

3. **सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के महिला शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण की तुलना–**

H_3 **सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के महिला शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर है।**

H_{03} **सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के महिला शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर नहीं है।**

सारणी सं0 3
सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के महिला शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–मान

क्र0 सं0	न्यादर्श	संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	मध्यमान का अन्तर	प्रमाणिक त्रुटि	टी–मान	सारणी मान
1.	सामान्य विद्यालय	25	51.04	12.21	9.28	3.78	2.46*	2.01 df=48
2.	दिव्यांग विद्यालय	25	60.32	14.42				

*0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक

व्याख्या–

उपर्युक्त सारणी सं0 3 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के महिला शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण का मध्यमान क्रमशः 51.04एवं 60.32 तथा मानक विचलन क्रमशः 12.21 एवं 14.42 है। परिगणित टी–अनुपात का मान 2.46 है। मुक्तांश 48 तथा 0.05 सार्थकता स्तर पर टी–अनुपात का सारणी मान 2.01 है अर्थात् परिगणित टी–अनुपात सारणी मान से अधिक है, अतः कहा जा सकता है कि 0.05 सार्थकता स्तर पर शून्य परिकल्पना निरस्त की जाती है।

प्रस्तुत उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्राकल्पित किया गया था कि *सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के महिला शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर है* जो कि सार्थकता स्तर 0.05 पर स्वीकृत की जाती है तथा शून्य परिकल्पना *सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों के महिला शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर नही है,* निरस्त की जाती है तथा परिणामतः कहा जा सकता है कि दिव्यांग विद्यालयों में अध्यापनरत् महिला शिक्षकों की शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण सामान्य विद्यालयों में अध्यापनरत् महिला शिक्षकों की अपेक्षा उच्च पायी गयी अर्थात् दोनों में सार्थक अन्तर पाया गया।

आरेख सं0 3
सामान्य एवं दिव्यांग विद्यालयों में अध्यापनरत् महिला शिक्षकों के शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण के मध्यमानों का आरेखीय चित्र

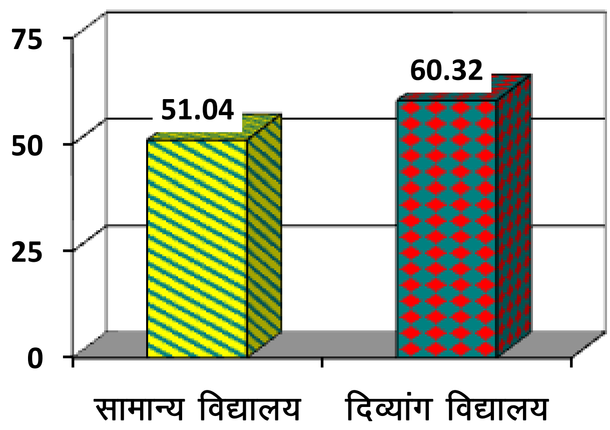

निष्कर्ष–

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुये–

1. दिव्यांग विद्यालय में अध्यापनरत् शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण सामान्य विद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों की अपेक्षा उच्च है।
2. दिव्यांग विद्यालय में अध्यापनरत् पुरुष शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण सामान्य विद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों की अपेक्षा उच्च है।
3. दिव्यांग विद्यालय में अध्यापनरत् महिला शिक्षकों में शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण सामान्य विद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों की अपेक्षा उच्च है।

सुझाव

शिक्षा व्यवस्था में शैक्षिक तकनीकी की सुविधा उपलब्ध होने के बावजूद भी नियमित शिक्षा की अपेक्षा इसको स्वीकार करने वालों की संख्या काफी सीमित है। शिक्षा में तकनीकी के प्रयोग के प्रति शिक्षकों का दृष्टिकोण जानने पर यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि शिक्षा में शैक्षिक तकनीकी काफी उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

सन्दर्भ सूची

- खण्डेलवाल, मधु (2018). शिक्षा का बदलता स्वरूप (सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के विशेष संदर्भ में), इन्सपिरया– जर्नल ऑफ मॉर्डन मैनेजमेण्ट एण्ड इण्टरपेन्युरशिप, वॉल्यूम–08, नं0 01, पृ0 586–587
- गुप्ता, पाण्डेय एवं माथुर (2007). सूचना एवं संप्रेषण तकनीकी समर्पित शिक्षक शिक्षा कार्यक्रमों की समीक्षा, पी–एच.डी. शोध प्रबन्ध, रीवां : अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय।
- राठौड़, अनामिका (2014). माध्यमिक स्तर के शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण दक्षता पर सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के प्रभाव का अध्ययन', भारतीय शिक्षा शोध पत्रिका, 33;2, जुलाई– दिसम्बर. 2014
- Bulent CAVAS, Pinar CAVAS, Bahar, KARAOELAN & Tarik Kisla (April 2009), A Study on Science Teachers' Attitude Toward Information and Communication Technology in Education, TOJET (Turkish Online Journal of Educational Technology) ISSN-1303-6521, Vol. 8, Issue-2
- Jaiswal, *Ekta and other (2012): Importanet of Computer in Distance education and professional Development of Teachers*, Souvenir, Intenational Seminar by the Learning Community on professional Development of Teachers, Nov 17-18.
- Kaur, Dharminderjeet (2012): Innovative melhods and Quality Assurance in Teacher Education, Souvenir, International Seminar by The Learning Community, on professional Development of Teachers, Nov, 17-18.
- Chaudhary, Jagdish and Verma, Rakesh kumar (2012): *ICT- Intigration in Teacher Education*, Sounir International, on professional Development of Teachers, Nov, 17-18

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

किशोर बाल अपराध को रोकने में विद्यालयों की भूमिका

डॉ0 सुनीता गुप्ता
अध्यक्ष (शिक्षा–संकाय)
राजा श्रीकृष्ण दत्त पी0जी0 कालेज,
जौनपुर (उ0प्र0)

सारांश

बाल अपराधियों को सुधारने से सम्बन्धित संस्थागत व्यवस्था को विकसित करने में आज भारत भी अन्य प्रगतिशील देशों से पीछे नही है। पर भारतीय समाज में कुछ अन्य समस्या जैसे– अति जनसंख्या, बेरोजगारी, भूखमरी आदि इतनी अधिक गम्भीर है कि इनसे ही निपटना सरकार के लिए अत्यंन्त कठिन हो रहा है और इन समस्याओं की विस्फोटक स्थिति बने रहते हुए बाल अपराधियों को सुधारने का कार्यक्रम कभी भी सफल नही हो सकता क्योकि बाल–अपराध भी इन्ही सामाजिक समस्याओं की बहुत कुछ उपज है। द्वितीयतः सार्वजनिक जीवन के हर क्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार और निष्ठावन अधिकारियों व नेतृत्व का अभाव सुधार कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन के पथ पर एक बहुत बड़ी बाधा है। फिर भी हमें निराश नही होना है और सबको मिलकर राष्ट्र के भावी नागरिकों को पतन के पथ से निकालना है।

मुख्य शब्द– किशोर बाल, अपराध, विद्यालय, भूमिका

भूमिका–

आधुनिक युग के बदलते हुए परिवेश में युवकों के विचारों और व्यवहार पर अनेक कारकों का प्रभाव पड़ा है। इनमें से कुछ हैं जो कि अपराध की ओर प्रेरित करते हैं। शिक्षा का विस्तार, बढ़ती बेरोजगारी, युवकों के योग्यता की उपेक्षा करते हुए सरकार की आरक्षण नीति, माता–पिता द्वारा समुचित ध्यान न देना एवं मार्ग दर्शन का अभाव, प्रचार माध्यमों का अवांछित प्रभाव, शैक्षिक संस्थाओं द्वारा मूलपरक शिक्षा देने में असफलता व्यवहार की विशिष्ट स्वरूप वाले परिवार के संरक्षण को छोड़ने और बढ़ते हुए प्रभाव इत्यादि कारण हैं।

किशोर अवस्था के बाद असमाजिक प्रवृत्तियों वाले व्यक्तियों का साथ तथा उसकी मित्रता युवाओं को विचलित जीवन की ओर ले जाते हैं। युवा अपराधी अपने आयु समूह के व्यक्तियों से अपराधिता में कोई सीखने का अनुभव अर्जित नहीं करते न ही वे सदैव अपने साथियों के तौर तरीकों के अनुपालन की इच्छा ही रखते हैं। युवा अपराधी अपनी शक्ति के पुनः स्फूर्तिकरण के लिए अपने साथियों द्वारा प्रदत्त असमाजिक तरीकों का भी उपयोग नहीं करते। इस प्रकार यह संकेत मिलता है कि अधिकतर मामलों में लगभग साथी समूह लगभग 95 प्रतिशत साथी समूह युवा अपराधिता के कारण नहीं होते बल्कि वे मित्रों का साथ देने के तथा मित्रों के बहकावे में आकर अपराध कर बैठते हैं।

वर्तमान में बाल या किशोर आपराधिता एक गंभीर समस्या बनी हुई है। किशोर आपराधिता से संबंधित ऑकड़े बड़ी ही चिंताजनक स्थिति को व्यक्त कर रहे है। बालक देश का

भविष्य होते है। यदि किशोर किशोरावस्था में ही भटक गए तो देश कहां जाएगा यह सोचा जा सकता है। युवाओं में जोश होता है पर कई बार अविवेकहीन निर्णयों या मानसिक अपरिपक्वता के कारण ये अपराध कर बैठते हैं। कई बार वे आपराधिक क्रियाओं के परिणामों को भी नहीं समझ पाते। अतः इनके उचित देखभाल की महती आवश्यकता है।

किशोरावस्था में बालकों के व्यक्तित्व का समुचित विकास करने के लिए यह आवश्यक है कि उनकी आवश्यकताएँ क्या है? कैसी है? तथा और अन्य समस्याओं से परिचित होकर उनकी संतुष्टि और निराकरण के लिए यथा संभव प्रयत्न किये जाये और यह कार्य उतना आसान नहीं है, जितना ऊपर से दिखाई पड़ता है। इसलिए जरूरी है कि विद्यालयों के इस कार्य में माता–पिता व परिवार के अन्य सहयोगी सदस्य तथा बालक के अन्य शुभ चिन्तक लोगों को विद्यालयों की भूमिकाओं में सहयोग करना चाहिए। इस प्रकार से जब परिवार के सदस्यों द्वारा बालक की कमियों का पता चलेगा तो विद्यालय उन प्रकार के बालक की गतिविधियों पर ध्यान देता है तथा इस प्रकार के गतिविधियों पर ध्यान देने के बाद उसके लिए क्या किया जाए, इसके कुछ निम्न सुझाव उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं–

शिक्षकों को किशोर मनोविज्ञान का समुचित ज्ञान–

किशोर बालक का मन तथा प्रौढ़ मन में बहुत कुछ भिन्न होता है अतः किशोरों के व्यवहार को ठीक प्रकार से समझने के लिए शिक्षकों को किशोर मनोविज्ञान का ज्ञान होना अति आवश्यक है। यदि इन्हें उचित ज्ञान नहीं होगा तो शिक्षक बालकों उचित शिक्षा नहीं दे पायेगा।

- किशोर बालक की आवश्यकता क्या है इसके बारे में जानकारी प्राप्त करना।
- इनके वृद्धि और विकास के विभिन्न पहलुओं का ध्यान देना।
- समायोजन की क्षमता विकसित करना।
- किशोर बालक क्या चाहते हैं, उनके साथ कैसा व्यवहार किया जाय इसका भी ध्यान देना चाहिए।
- उन्हें भ्रान्तियों, मानसिक तनावों, कुंठाओं, चिन्ताओं और विकारों का शिकार होने से बचाने की कोशिश करना।
- इसमें केवल अध्यापक ही नहीं माता–पिता तथा समाज के अन्य उत्तरदायी व्यक्ति किशोर मनोविज्ञान का अध्ययन कर किशोर बालकों का सहयोग कर सकते हैं।

विद्यालय द्वारा समुचित वृद्धि एवं विकास के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करना–

- किशोरावस्था वृद्धि के दृष्टिकोण से सबसे महत्वपूर्ण अवस्था है। इस अवस्था के अन्त तक परिपक्वता के आने के साथ–साथ मानसिक और शारीरिक रूप में जो कुछ भी वृद्धि होनी होती है, हो लेती है।
- किशोर बालक में समुचित रूप से अधिक वृद्धि हो सके, इसके लिए विद्यालय के अध्यापकों द्वारा पर्याप्त सुविधाएं और अवसर देना अत्यन्त आवश्यक है।
- किशोर बालकों को संतुलित आहार के साथ–साथ उनमें खान–पान की अच्छी आदतें विकसित करनी चाहिए।

- किशोर बालकों में व्यायाम करने, खेल–कूद की भावनाओं के विकास का पर्याप्त अवसर देना चाहिए।
- किशोर बालक अपने आपको को मानसिक व शारीरिक रूप से अधिक स्वस्थ र सके इसके लिए विद्यालय को उचित वातावरण प्रदान करना चाहिए।
- बालकों में खेल भावना का विकास करने से उनमें बदलाव की स्थिति बनी रहती है। विद्यालयों के साथ माता–पिता को चाहिए कि उसके विकास के लिए घर–परिवार का वातावरण ठीक रखने की कोशिश करें।

विद्यालय परिवेश में किशोरों के साथ उचित व्यवहार करना–

- बालकों की आवश्यकताओं, रुचियों तथा आदर्शों के बारें में स्वच्छ विचार से विद्यालय के शिक्षकों को विचार करना चाहिए।
- नयी पीढ़ी क्या चाहती है और समय की माँग क्या है। विद्यालय को इन बातों का ध्यान में रखकर शिक्षा प्रदान करनी चाहिए।
- किशोर बालक को वर्तमान समय में किस प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली को ध्यान में रखकर शिक्षा देनी चाहिए।
- विद्यालयों के साथ–साथ माता–पिता, परिवार एवं पास–पड़ोस को भी बालकों के विकास हेतु स्वच्छ परिवेश बनाना चाहिए और किशोर बालकों के साथ उचित व्यवहार करना चाहिए। किशोर बालक बहुत भावुक और संवेदनशील होते हैं। हमारे द्वारा अनजाने में भी किया गया मामूली सा गलत व्यवहार उसके लिए बहुत घातक सिद्ध हो सकते हैं। इसलिए विद्यालय को बालक का हर प्रकार से ध्यान देना चाहिए।

विद्यालय में उचित यौन शिक्षा प्रदान करना–

किशोरावस्था में यौन भावनाओं का उत्थान बहुत तीव्र होता है, उनकी सारी चेष्टाओं और यौन प्रयत्नों में यौन आकर्षण अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है इसलिए विद्यालय को चाहिए कि ऐसी शिक्षा प्रदान करें जिससे बालक–बालिकाओं दोनों को यौन विकृतियों से होने वाली बिमारियों का ज्ञान प्राप्त हो सके।

- किशोरावस्था मानसिक तनावों, संघर्षों एवं तुफान का समय होता है।
- बालक–बालिकाओं को समुचित रूप से शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए ताकि सभी प्रकार की बीमारियों से बचने के साथ–साथ अपने स्वास्थ्य का ध्यान रख सके।
- बालकों के इस कार्य में विद्यालय के शिक्षकों के साथ–साथ माता–पिता का भी कर्त्तव्य बनता है कि वे अपने बालक–बालिकाओं का उचित ध्यान रखे।

विद्यालय में संवेगों का प्रशिक्षण और संवेगात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति–

- किशोर बालकों के संवेगात्मक व्यपवहार को भड़काकर अन्य कार्यों में शामिलन होने से बचाना।

- बालक चोरी, हत्या, मारपीट, आतंकवादी और विध्वंसक जैसे कार्यों में लगाये जाने से बचाना।
- राजनीतिक दल अपने निहित स्वार्थ की पूर्ति के लिए उन्हें आसानी से काम में लाते हुए देखे जा सकते हैं।
- विद्यालय को चाहिए कि किशोरों की संवेगात्मक शक्ति को रचनात्मक मोड़ दे।
- किशोर बालकों में संवेगों का प्रभाव बहुत अधिक प्रबल होता है। इनके अपरिपक्वता भी देखने को मिलती है। इन्हीं कमियों के कारण बालक के सुधार हेतु माता–पिता की भूमिका, विद्यालय के साथ सहयोगात्मक होनी चाहिए।

विद्यालय द्वारा धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा प्रदान करना–

- विभिन्न प्रकार के आन्दोलनों, दंगों एवं आतंकवादी गतिविधियों में अधिकतर किशोरों का ही हाथ होता है। अतः अनुशासन हीनता इस आयु की विशेष समस्या होती है।
- इन अवगुणों को दूर करने के लिए किशोरों में विद्यालय द्वारा धार्मिकता तथा नैतिकता का विकास करना चाहिए।
- उन्हें यह बताना चाहिए कि हमें सभी धर्मों को समान दृष्टि से देखना चाहिए या धर्मनिरपेक्षता का पालन करना चाहिए क्योंकि धर्म जोड़ता है तोड़ता नहीं।
- अतः परिवार, शिक्षक एवं विद्यालय में किशोरों को धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए जिससे की अनुशासन हीनता की समस्या का अन्त हो सके तथा किशोर चरित्रवान बनकर इस देश का कल्याण कर सके।

विद्यालय द्वारा किशोरों की विभिन्न रुचियों की पूर्ति करना–

- किशोर बालक एवं बालिकाओं की रुचियों में भी भिन्नता पायी जाती है।
- किशोर बालक अपने समूह के प्रति समर्पित होते हैं ये किसी को अपना आदर्श मानकर उसी के अनुरूप अपना आचरण करते हैं।
- किशोरियाँ नारी सुलभ बनने के लिए प्रयास करती है। वे घर के कार्यों में अपना हाथ बँटाती है।
- किशोर बालक समाज सेवा, राष्ट्र सेवा, सहयोग, साहसी एवं परोपकारी होते हैं।
- अतः इस अवस्था में परिवार, शिक्षक एवं विद्यालय को पाठ्यान्तर क्रियाओं, खेलकूद, भ्रमण, यात्रा का आयोजन कर इन गुणों का विकास कर सकते हैं इन किशोरों को उनकी रुचि के अनुसार कार्य करने के लिए प्रेरणा प्रदान करना चाहिए जिससे वे इस क्षेत्र में अपनी क्षमता का सम्पूर्ण प्रदर्शन कर सके।

विद्यालय द्वारा व्यवसायिक शिक्षा प्रदान करना–

- किशोर बालक आर्थिक रूप में स्वतंत्र होना चाहते हैं।

- किशोर बालक इस अवस्था में व्यवसायिक रूप से भी स्वतंत्र होना चाहते हैं।
- वह अपनी भावी जीविका, शादी–ब्याह एवं रोजगार के प्रति चिन्तित रहते हैं।
- अतः किशोर बालकों को उनकी योग्यतानुसार अभिभावकों एवं शिक्षकों तथा विद्यालयों द्वारा व्यवसाय प्राप्त करने का निर्देशन प्रदान करना चाहिए ताकि वे अपने जीवन को समुचित एवं सुसंगठित रूप से चला सके।

विद्यालय में मार्गदर्शन और परामर्श सेवाओं की व्यवस्था–

- इस अवस्था में किशोर को विशेष मार्ग दर्शन एवं परामर्श की आवश्यकता होती है।
- उचित मार्गदर्शन एवं परामर्श के अभाव में किशोर अपने मार्ग से भटक जाते हैं तथा वह स्वयं के लिए, समाज के लिए कष्टकारी हो जाता है। वह गलत संगति में पड़कर अपराधी हो जाते हैं।
- अतः अभिभावकों, विद्यालयों के शिक्षकों को किशोर बालकों का उचित समय पर सही मार्गदर्शन एवं परामर्श प्रदान करना चाहिए जिससे किशोरावस्था की शक्ति का भरपूर सदुपयोग किया जा सके।

किशोर बाल अपराध को रोकने में विद्यालयों द्वारा निम्न विधियों का प्रयोग किया जा सकता है–

1. वैधानिक विधियाँ
2. मनोवैज्ञानिक विधियाँ
3. वातावरणीय सम्बन्धी विधियाँ

- **वैधानिक विधियाँ–**

  किशोर बाल अपराधियों को सुधारने के लिये वैधानिक विधियाँ भी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इसके अन्तर्गत प्रवीक्षण विधि, सुधार संस्थाओं की व्यवस्था, कारावास, किशोर न्यायालय, वोर्स्टल संस्थाएँ आदि विधियाँ आती है। इनके माध्यम से बालकों को कठोर दण्ड देने के बजाय इनके सुधार पर विशेष बल दिया जाता है और इन विधियों द्वारा उन्हें किसी प्रकार का दण्ड देने के बजाय उनके कारणों को जानकर उन कारणों का उपचार किया जाता है और उन्हें उनके भावी जीवन को व्यतीत करने के लिए तैयार किया जाता है ताकि किशोर बालक अपराध को छोड़कर अपने जीवन को सुव्यवस्थित, सुसंगठित रूप से व्यवसाय का ज्ञान लेकर चलाने की कोशिश करें।

- **मनोवैज्ञानिक विधियाँ–**

  किशोर बाल अपराधी कच्चे घड़े के समान होता है, उसके कोमल मन को समझने के बाद उसके क्रिया–कलाप में सुधार करने के लिए मनोवैज्ञानिक खोजों की सहायता ली जा सकती है। इनके अन्तर्गत मानसिक चिकित्सा, मनोनाटकिया विधि, अनिर्देशिय विधि, मनोविश्लेषणात्मक विधि, स्वतंत्र साहचर्य विधि, स्वप्न विश्लेषण विधि का प्रयोग किया जा सकता है और इनका मनोवैज्ञानिक तरीके से इलाज करके इन्हें समाज की मुख्य धारा से जोड़ा जा सकता है इस प्रकार किशोर बालक अपराध को छोड़कर अपने जीवन के पथ पर अग्रसर हो सकता है।

- **वातावरणीय विधियाँ–**

ये दो प्रकार की होती है–

○ **विद्यालय के अन्दर का वातावरण–**

विद्यालय का वातावरण में सुधार करके बालकों को अपराध से बचाया जा सकता है। विद्यालय के अन्दर पुस्तकालय का प्रबन्ध, वाचनालय का प्रबन्ध, अध्यापक का मधुर व भेदभाव रहित व्यवहार, बालकों की स्वतंत्रता, स्वच्छ परीक्षा प्रणाली, मार्गदर्शन, लचकदार पाठ्यक्रम, धार्मिक व नैतिक शिक्षा, खेलकूद की व्यवस्था एवं स्कूल का स्वच्छ वातावरण बालक के संवेगात्मक संतुलन को बनाये रखता है।

○ **विद्यालय के बाहर का वातावरण**

किशोर बाल अपराधों की रोकथाम के लिए घर, परिवार, पास–पड़ोस का वातावरण ठक होना चाहिए इसके लिए माता–पिता का अलगाव, माता–पिता का कामकाजी होना, भाई–बहन का अपराधिक गतिविधि में शामिल होना बालक के विकास में इन सारे कार्यों का प्रभाव पड़ता है। इसलिए जरूरी है कि बालक को ऐसी स्थितियों से बचाकर उनके विकास में विद्यालय के साथ–साथ अभिभवक भी अपनी महत्वपूर्ण जिम्मेदारी को निभाने की कोशिश करें ताकि बालक का स्वच्छ रूप से मानसिक, चारित्रिक एवं नैतिक विकास हो सके।

निष्कर्ष–

बालक के विकास में उसकी विभिन्न क्षेत्रों में उपलब्धियाँ माता–पिता के शैक्षिक स्तर का बालक के विकास पर काफी प्रभाव पड़ता है। बालक में सामाजिक गुण और व्यवहारिक विशेषताएँ जन्म जात होती है और इन जन्म जात प्रवृत्ति एवं विशेषताओं में निखार हेतु शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है। शिक्षा बालक के सामाजिक व्यवहार में वांछनीय परिवर्तन लाने का कार्य सम्पन्न करती है। बालक जब किशोरावस्था में प्रवेश करता है तो बालक में शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तन बड़ी द्रुत गति एवं विषमता के साथ होते है, वास्तव में इस अवस्था पर ही व्यक्ति के भविष्य का निर्माण अथवा विनाश दोनों ही निर्भर करता है। शिक्षा संस्थाओं में जहाँ शिक्षक की समस्या बालकों और पिछड़े हुए बालकों से निपटना होता है वहीं कुछ विद्यार्थी किशोरापराधी भी दिखलाई पड़ते है। किशोरापराधी बालकों के प्रकारों एवं कारणों का अध्ययन करने से यही निष्कर्ष निकलता है कि किशोरावस्था में बालकों के व्यक्तित्व का समुचित विकास करने के लिए यह आवश्यक है कि उनकी आवश्यकताओं और समस्याओं से परिचित होकर उनकी संतुष्टि और निराकरण के लिए यथा सम्भव प्रयत्न किये जाये परन्तु यह कार्य उतना आसान नहीं है जितना ऊपर दिखाई पड़ता है इसलिए जरूरी है कि विद्यालय के इस कार्य में माता–पिता और परिवार के अन्य सदस्य तथा बालक के अन्य शुभ चिन्तक लोगों को विद्यालय की भूमिकाओं में सहयोग करना चाहिए इस प्रकार से जब परिवार के सदस्यों द्वारा बालक की कमियों का पता चलेगा तो विद्यालय उन प्रकार के बालकों की गतिविधियों पर ध्यान देकर तथा उस प्रकार के गतिविधियों पर ध्यान देने के बाद उन्हें सुधारने के लिए समुचित एवं सुव्यवस्थित विधियों का प्रयोग करना होगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

- सिंघल, उमारानी (1976–77). "आक्रामक व्यवहार के सन्दर्भ में व्यक्तित्व कारकों को अध्ययन" अप्रकाशित एम0एड0 लघुशोध प्रबन्ध, आगरा दयालबाग, आगरा विश्वविद्यालय, आगरा।
- कुमार, नरेन्द्र (2017). एकल एवं संयुक्त परिवार के किशोरों के आक्रामक व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन, रिसर्च रिव्युलेशन, इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ सोशल साइंस एण्ड मैनेजमण्ट, वॉल्यूम–ट, इश्शू–5, पृ0 16–18
- पारीक, एकता एवं शर्मा, गीता (2015–17). उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के आक्रामक व्यवहार पर सामाजिक वातावरण और आर्थिक स्तर के प्रभाव का अध्ययन, लघु शोध प्रबन्ध, बियानी गर्ल्स बी.एड़ कॉलेज, जयपुर (राजस्थान)
- श्रीवास्तव, यादव एवं नन्दिनी (2015). सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों के कक्षा दसवीं के विद्यार्थियों के आक्रामक व्यवहार में एक तुलनात्मक अध्ययन, इण्डियन जर्नल ऑफ एप्लाइड रिसर्च, वॉल्यूम–5, इश्शू–9, पृ0 280–281
- कुमारी, यतेन्द्र (2015). भारत का बदलता परिवेश : बदलती युवा जीवनशैली, रिव्यू ऑफ रिसर्च, वॉल्यूम–4, इश्शू–4, पृ0 1–5
- कामिल, मौहम्मद एवं जहाँ, जीनत (2016). कालेज/महाविद्यालयों/ विश्वविद्यालयी स्तर पर छात्रों में बढ़ता मादक–द्रव्य–व्यसन, इण्टरनेशनल रिसर्च जर्नल ऑफ इण्डिया, वॉल्यूम–II, इश्शू–IV, पृ0 1–6
- खान, सादिक एम. (2016). भारत में युवा अपराध का समाजशास्त्रीय अध्ययन, जर्नल ऑफ एडवांसेस एण्ड स्कालर्ली रिसर्चेस इन एलाइड एजुकेशन, वॉ0 11, इश्शू–21, पृ0 1–6
- शुक्ला, अर्चना (2016).युवाओं में बढ़ती नशे की प्रवृत्ति, युगान्तर अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका, आरती पब्लिशिंग हाउस एण्ड डिस्ट्रीरब्यूटर्स, वर्ष–7, अंक–28, पृ0 8–16
- सोनी, मधु कंवर (2018). बाल–अपराध प्रवृत्ति के ग्रामीण एवं शहरी किशोर विद्यार्थियों का पारिवारिक–परिवेश तथा सुरक्षा एवं असुरक्षा की भावना का तुलनात्मक अध्ययन, शृंखला एक शोधपरक वैचारिकी पत्रिका, वॉ0 5, इश्शू–7, पृ0 7–12
- श्रीवास्तव, संतोष एवं मिश्र, श्रीनिवास (2018) ने लखनऊ शहर के मलिन बस्ती बस्तियों में नशा वृद्धि के कारण वाल अपराध व महिला अपराधों का सामाजिक अध्ययन, इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ एडवांस एजुकेशनल रिसर्च, वॉ0 3, इश्शू–3, पृ0 47–50

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

उषा प्रियम्वदा के उपन्यासों में पाश्चात्य सामाजिक वैशिष्ट्य

डॉ0 प्रद्युम्न सिंह
असि0 प्रोफेसर हिन्दी
हंडिया पी0जी0 कॉलेज, हंडिया,
प्रयागराज

सिन्दू यादव
शोध छात्रा, हिन्दी
हंडिया पी0जी0 कॉलेज, हंडिया,
प्रयागराज

उषा प्रियंवदा का रचना संसार प्रारंभ में तो भारतीय परिवेश तक ही सीमित रहा। भारतीय परिधि के भीतर ही इनकी सृजनात्मकता का विकास हुआ। परंतु बाद में अमेरिका प्रवास के बाद उन्होंने अपने व्यापक अर्जित अनुभवों के आधार पर विदेशी पार्श्वभूमी पर आधारित कई महत्वपूर्ण रचनाएं प्रस्तुत की। परिवेश चाहे भारतीय हो या विदेशी, उषा जी ने समान अधिकार से इन दोनों परिवेश पर आधारित सफल कृतियाँ हिंदी साहित्य को दी। विदेशी पृष्ठभूमि पर आधारित कथा साहित्य में भारतीय विदेशी संस्कारों का अंतर्द्वंद, शिक्षा का यथार्थ चित्रण, उनकी कृतियों में दिखाई देता है। उनके उपन्यास साहित्य विशेष रूप से विदेशी परिवेश में लिखे गए हैं। विदेशी भूमि पर, विदेशी वातावरण में, विदेशी परिसर में लिखी हुई कहानियों में भी भारतीय संवेदना एवं भारतीय मूल्य और मानसिकता का समर्थन उषा जी के द्वारा हर स्तर पर, प्रत्येक चरण में प्रस्तुत करने का प्रयत्न हुआ है। विदेशी प्रवास करने से पूर्व अपने एक आत्मा वक्तव्य में उषा प्रियंवदा ने कहा था– ''मेरी चेतना और अनुभूतियाँ मध्यवर्ग के नारी जीवन से केंद्रित रही हैं और मेरी कहानियाँ उसी के चित्रण तक सीमित हैं। मैंने अनेक समस्याओं, उनकी मूल व्यथा, विवशता, निराशा और फ्रस्टेशन को वाणी देने का प्रयास किया है।''[1] विदेशी परिवेश और विदेशी संस्कृति की पहचान उषा प्रियंवदा ने अपने एक वक्तव्य में ही दिया है। ''संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में बड़े–बड़े शहर हैं, जो कि गगनचुंबी अट्टालिकाओं स्काई स्क्रैप पर और सड़कों पर हर वक्त ट्रैफिक जैम के लिए प्रसिद्ध हैं। मारपीट, चोरी–चकारी जहाँ दिन को भी घर से निकलना जोखिम का काम है। सघन–वन, जहाँ सैकड़ों साल पुराने वृक्ष, मौन खड़े हुए हैं। बड़े–बड़े फार्म पुल और हैरत अंगेज डैम फैक्ट्रियाँ विस्तृत रेगिस्तान हिम मंडित पर्वत शिखर झीलें जो विस्तृत सागरों से कम नहीं है, मिसौरी मिसिसिपी नाम की सबसे लंबी नदी, तरह–तरह के पशु–पक्षी जैगुआर नाम के चीते कोबरा की भाँति ही जहरीला रैटल स्नेक जो क्रोधित होने और काटने से पहले एक विशेष नाद करता है। तरह–तरह के फल और फूल–कहने का अर्थ यह है कि, यह प्रदेश हर पग पर पर्यटक को नए अनुभवों से चौंका देने वाला है। बशर्ते उसमें अनुभूति और जिज्ञासा हो तो। पर संवेदनशील व्यक्ति भी एक बार ही सारे प्रभाव को आत्मसात नहीं कर पाता। अगर हवाई की मीठी–मीठी धूप और फेनिल लहरों के स्वर को मन में सजाने का प्रयत्न करो तो दूसरी ओर नियाग्रा प्रपात का उत्ताल और घोर नाद एक विपरीत परंतु उतना ही कशिश चित्र प्रस्तुत करता है। यदि फ्लोरिडा की वर्षा उत्तर–पूर्व के मेन वरमौंट और मैसेच्यूसेट्स प्रदेशों की ठंडी, स्फूर्तिदायक जलवायु से दृष्टि हटाओ तो पश्चिम में कैलिफोर्निया है, जहाँ की वाइने, कंप्यूटर फैक्ट्रियों, विश्वविदित सिलीकान वैली, लॉस एंजिल्स में हॉलीवुड और प्रशांत महासागर का विस्तार हर मौसम, एक सा स्थिर तापमान करीब–करीब हर भारतीय पर्यटक बॉलीवुड देखने अवश्य जाता है। जहाँ हर तरह के स्टूडियों टूर लिए जा सकते हैं।''[2] हमारी सोच क्या है? हम विदेश जाते हैं अपने परिवार को लेकर। पत्नी को लेकर। लेकिन विदेशों में यही सोच रखते हैं

कि हमारी पत्नी भी अपडेट हो जाए। वह भी विदेशी तौर–तरीके सीख ले। 'शेष यात्रा' उपन्यास में प्रणव विभा से यही कहता है कि 'तुम अनु को बोलना सिखा दो' अपनी तरह पहनना, ओढ़ना सब कुछ। यही महसूस करते हैं कि पाश्चात्य जीवनशैली ही लोगों को आधुनिक बनाती है। अमेरिका में एक सखी सम्मेलन बनाया गया है। जहाँ अनु शादी के बाद ही सम्मिलित कर ली गई थी।उसकी स्थाई सदस्याएं रूपल, कंचन, कीरत रानी, विभा और मिनी थी। विभा को छोड़कर प्रायः सभी गृहिणियां थी। विभाग की सहूलियत के लिए ही प्रत्येक बुधवार को सखी सम्मेलन का आयोजन होता था; क्योंकि उस दिन उसका हाफ डे होता था। बावजूद इसके वह कम ही पहुँचते थी कार्यक्रम में। लंच में तरह–तरह के पकवान, दो तीन गाड़ियों में भरकर आते थे। किसी सेल में या साड़ी वाले के पास और सभी एक ही शॉपिंग करती, एक सी चीजें खरीदती सिवाय अनु के; क्योंकि प्रणव के बिना कोई खरीदारी उसे अच्छी नहीं लगती थी। अनु को सखी सम्मेलन में आते जाते बहुत सी फालतू बातें पता चल गई थी। उसे अमेरिकन समाज की भी जानकारी हो चुकी थी कि, ''विभा को अपनी डॉक्टरी का घमंड है, मिनी को घर की जायदाद का, कंचन के भाई की अलमारियों की छतों पर ब्लेक के रुपयों की गड्डी–की–गड्डी रखी रहती है, रद्दी अखबारों के नीचे। घर में ज्यादातर राजकिशोर ही शाम का खाना पकाते हैं, नीरजा चरित्र की ज्यादा अच्छी नहीं है। प्रणव पर भी डोरे डाला करती थी।''[3]

'सखी सम्मेलनों' में हर तरह की बातें होती हैं। खाने की, कपड़े की, टेलीविजन शो की, इंडिया एसोसिएशन की, पिक्चर की, पड़ोसियों की। वाटरमैन फिर नई लड़की पकड़ लाया है। उसकी बीवी भी बिगड़े दिमाग की है। इतना अच्छा घर, मियां, बच्चे छोड़कर भी प्रेमी के साथ चली गई। यह सब, यही होता है, हमारे इंडिया में नहीं। यहाँ बड़े–बड़े भी टीनेजर की तरह है।''[4] अमेरिका में मर्दों की सोच क्या होती है? वह प्रत्येक स्त्री को भोगना चाहते हैं; जो भी स्त्री उनसे परिचित हो या जिनको भी वह जानते है,उसे ही अपना शिकार करना चाहते हैं और इसी फितरत में डा. वॉटरमैन अनु के घर भी पहुँचते हैं और अनु से प्रस्ताव देते हैं। ''क्या आज रात मुझे यहाँ रह जाने दोगी अनु? मैं तुम्हारे साथ सोना चाहता हूँ। जिस दिन से तुम्हें देखा है, मैं इस बात के लिए तड़प रहा हूँ। मुझे मालूम है कि तुम्हारी जैसी सुंदर लड़की केवल एक आदमी से संतुष्ट नहीं रह सकती। मैं उम्र में तुमसे बड़ा जरूर हूँ, मगर...अनु उन्हें हक्की–बक्की देखती रह गई, आप क्या कह रहे हैं डॉक्टर वाटरमैन?

मैं रुक सकता हूँ न?

नो!नो! अनु के मुँह से निकला। वह वाटरमैन को ताकती रह गई। उनके चेहरे पर जो विनीत भाव था, उसमें और उसकी ओर आगे बढ़ने की मुद्रा में कोई साम्य नहीं था, अनु के मन में ढेर–सा अनाम डर भर उठा। वह अपने आपको दो कदम पीछे हट गई। सड़क पर हमेशा की तरह सन्नाटा था। शाम के अंधियारे में घर धीरे–धीरे डूबने लगा था।

आपने गलत समझा है डॉक्टर वाटरमैन। उसने पाया कि उसकी आवाज थरथर आ रही है, मैं अपने पति के साथ बहुत सुखी हूँ। किसी दूसरे पुरुष का ध्यान भी मैं पाप समझती हूँ।''[5]यही भारतीय नारी की विशेषता है, उसका पति कैसा भी हो? सिर्फ उसका ही पति होता है। चाहे वह लूला–लंगड़ा हो, अंधा हो, कोढ़ी हो वह जीवन पर्यंत उसके प्रति समर्पित रहती है, लेकिन पाश्चात्य समाज में ऐसा नहीं है। उषा प्रियंवदा अपने पत्र में लिखती है कि ''यह देश जवानी और सतही खूबसूरती का दीवाना है।हजारों डॉलरो की प्लास्टिक सर्जरी करवाकर स्त्री और पुरुष दोनों ही अपने को जवान रखना चाहते हैं। प्रौढ़ होने पर पहली पत्नी को एक कम उम्र की लड़की के लिए छोड़ देना यहाँ आम फैशन है। इसलिए असुरक्षा स्त्री के मन में हमेशा

बनी रहती है और इसी के कारण हर दूसरी स्त्री जो उससे उम्र में कम या शक्ल सूरत में अच्छी है, उसे अपनी प्रतिद्वंद्वी मालूम पड़ती है। दूसरी स्त्रियों से स्पर्धा बचपन से ही इसकी रगों में समा जाती है। इसीलिए स्त्रियों में मैत्री यहाँ की सभ्यता में नहीं पनप पाती।जिसे हम सहानुभूति या बहनापा कहते हैं वह यहाँ नहीं मिलता। क्योंकि जब हर दूसरी स्त्री, या पति के प्यार के रास्ते में आ सकती है तो आपस में बहनापे की जगह कहाँ बची? इसी का परिणाम है स्त्रियों का आपस में घटिया व्यवहार, जिसे अंग्रेजी में 'बिल्लीपन' या 'कुतियापन' कहा जाता है। यह एक ऐसा सूक्ष्म तरीका है, जिसका केवल स्त्रियाँ ही प्रयोग करती हैं और समझ सकती हैं। यह व्यवहार स्त्रियों के आचरण का ऐसा अंग बन गया है, जो बहुत से स्त्रियों को स्वयं पता ही नहीं चलता कि उनमें है।''[6] विदेशी समाज में लोगों में दोहरेपन की जीने की आदत पड़ चुकी है। जो ऊपर होता है, वह नीचे नहीं होता। जो बाहर था, वह अंदर नहीं था। वहाँ सब कुछ अस्पष्ट, संदिग्ध, बेतरतीब होता है। स्त्रियाँ व्हिस्की पिए, वाइन पिए। उनके लिए पानी पीने के बराबर है। जैसे मेहमानों को पानी पूछा जाता है, वैसे वहाँ मेहमानों को वाइन भी पूछी जाती है। इस हेतु वे परपुरुष का सहारा लेने में भी नहीं सकुचाती। विदेशों में नर नारी के संबंध इतने फॉर्मल हो गए हैं कि कोई भी किसी की पत्नी को जाकर पूछ सकता है कि क्या कुछ दिनों के लिए उसकी बनना चाहेगी। और वाटरमैन जैसा ही एक चरित्र 'शेष यात्रा' उपन्यास में है। वह सामने वाली स्त्री को बहुत रिझाने का प्रयास करता है। वह यह भी बताने का प्रयास करता है कि उसका पति उसकी सुंदरता के सामने नगण्य है। तुच्छ है। उषा प्रियंवदा के उपन्यासों में एक बात तो साफ तौर पर दिखाई पड़ती है कि यही भारतीय पुरुष, क्या भारतीय स्त्रियाँ, जब वे अमेरिक जाते हैं तो वहाँ के परिवेश में ढल जाते हैं। किस प्रकार से वहाँ के वातावरण में ढल जाते हैं। इसे वहा के पात्रों में देख सकते है। दोनों एक दूसरे को अंधेरे में रखने का प्रयास करते हैं। पुरुष चाहता है कि एक दूसरी स्त्री मिले। स्त्री चाहती है कि एक दूसरा पति मिले। यह स्वभावतः सभी क्षेत्रों में दिखाई पड़ता है। 'शेष यात्रा' में अनु और प्रणव में प्रणव, नमिता की ओर आकर्षित होता है। नमिता का पति नहीं है। उसके पति के बीमे की भारी रकम उसे मिली थी। चाहे तो वह घर में बैठ सकती थी, पर अब अकेली रहती थी और अपने लीन। एक दिन उसकी गाड़ी रास्ते में खराब हो गई थी, नमिता ने उसे लिफ्ट दी।अस्पताल तक छोड़ा। गैरेज वाले को फोन किया। दूसरे दिन उसी की गाड़ी में जाता है। खाना खाकर वही सो जाता है। वह न चाहकर भी अपने और जनार्दन के बीच संबंध बनाती है। केस हार जाने और नौकरी से निकाल दिए जाने के बाद जनार्दन ड्रग्ज लेकर आत्महत्या की थी। वह एक दूसरे से मिलते रहे। न नमिता को अपराध भावना ने घेरा, न प्रणव को। उसी के घर पर प्रणव को हार्ट अटैक आ गया था। तब उसने ही उसे इंटेंसिव केयर में रखकर देखभाल की थी। इस प्रकार स्त्री भी वहाँ प्ले–बॉय की तरह है और पुरुष भी वहां प्ले–बॉय की तरह ही दिखता है। क्या इसे ही भारतीय नजरों से वेश्यावृत्ति नहीं कह सकते। वेश्यावृत्ति अपेक्षाकृत बिना किसी भेदभाव के आधार पर ऐसी यौन क्रिया की स्वीकृति देना है जिसकी कीमत रुपए या वस्तु के रूप में चुकाई जाती है। वह भुगतान एक खास यौन क्रिया के लिए लिया जाता है। यही खास यौन क्रिया के लिए लिया जाने वाला भुगतान वेश्या को रखैल या उन महिलाओं से अलगाता है, जो किसी एक पुरुष से यौन संबंध स्थापित करने के लिए नाना प्रकार के उपहार स्वीकार करती हैं। भारत में जो कॉल गर्ल के नाम से जाने जाती हैं। अमेरिका में उन्हें कार्ल गर्ल के बजाय एक सामान्य अमेरिकन युवती कहते हैं; क्योंकि वह अविवाहित युवतियाँ होती हैं; जो उच्च शिक्षित होती हैं अथवा संप्रति कॉलेज, विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त कर रही होती है। जो प्रायः मध्यवर्ग की होती हैं और घर से अपने–अपने शैक्षिक कार्य अथवा महत्वाकांक्षी चीजों को प्राप्त करने के लिए धन न मिलने के कारण सीमित रूप से प्रतिष्ठित होटल और रेस्तरां बार के अड्डों पर जाकर देह व्यापार करती हैं।

या पुरुषों के साथ अल्पकाल के लिए संतुष्टि प्राप्त करती हैं या कराती हैं और गिने–चुने ग्राहकों से ज्यादा राशि भी प्राप्त करती है।

अमेरिकी जीवन को आप इस रूप में देख सकते हैं कि बिंदी पर तरह–तरह के प्रश्नों का जवाब देते–देते उषा प्रियंवदा ने बिंदी लगाना स्वयं छोड़ दिया। शाकाहारी होने से भी उन्हें कई प्रकार की दिक्कतों का सामना वहां करना पड़ता था। जहाँ भी वह जाना चाहती थी, अपने साथ काफी और दो दिन के लायक ब्रेकफास्ट सीरियल लेकर जाती थी। अमेरिका में लोग रसोई घर गंदा हो जाएगा ऐसा समझकर भोजन नहीं पकाते थे। ताजे और बासी खाने का विचार भारत में किया जाता है, अमेरिका में नहीं। वहाँ पर कितने ही लोग शनिवार और रविवार को इतना भोजन पका लेते हैं कि वह अगले शनिवार और रविवार तक चलता है। चार दिन की बासी कढ़ी वहाँ के लोगों को बासी नहीं मालूम होती। उषा जी से ऐसा किया नहीं जाता। वह नए–नए भोजन या व्यंजन बनाकर अतिथि सेवा में जुट जाती थी। न्यूयार्क का स्वास्थ्य विभाग खुली जगह में खाना पकाने का परमिशन नहीं देता। इसलिए वहाँढाबों का प्रचलन नहीं है। उषा जी का मानना है कि अमेरिका में खाना–पीना सस्ता है। दाल–चावल रोटी तो और भी सस्ती है। इसी कारण भारतीय पैसे बचा लेते हैं और सबसे पहले कार खरीदते हैं। अमेरिका में बच्चों को कॉलेज और यूनिवर्सिटी में पढ़ाने का खर्च लाखों में आता है। जिसके कारण मध्यवर्गीय परिवार अपने बच्चों को पढ़ाने में वहाँ असमर्थ होते हैं। अमेरिका का अमीर से अमीर का बच्चा दस साल की उम्र में आत्मनिर्भर बनने का प्रयास करता है; जबकि भारत में इस उम्र में बच्चों को लाड़–प्यार मिलता है। ''अमेरिका में सिगरेट का एक प्रसिद्ध विज्ञापन है, आधुनिक साज–सज्जा में सिगरेट पीती हुई एक सुंदर, दुबली–पतली युवती, इबारत है 'यू हैव कम लोंग वे, बेबी' यानी तुमने कितनी प्रगति कर ली है। खुल्लम–खुल्ला सिगरेट पीने की स्वतंत्रता जाहिर है, अमेरिकी स्त्रियों को पहले नहीं मिली थी। अब वे हर मायने में स्वतंत्र हैं। यह सोचने की जरूरत है कि क्या? अमेरिकन स्त्री सच में स्वतंत्र है या जानी–मानी बात है कि विकासशील देशों में या पश्चिम देश में जिसे तीसरी दुनिया कहते हैं, स्त्रियाँ जितने ऊँचे और जिम्मेदार पदों पर हैं, उस स्तर तक कम ही स्त्रियाँ पहुँच पाई हैं। अमेरिका में राष्ट्रपति अभी भी नहीं बन पाई है, और यदि वह स्वतंत्र और स्पष्टवादी है, तो राष्ट्रपति की पत्नी के रूप में भी आम जनता को ग्राहय नहीं है।''[7]

दुनिया में अपनी सभ्यता का,आधुनिकता का धौंस दिखाने वाला अमेरिका भी स्त्री के मामले में संकुचित है। वहाँ भी पुरुष और स्त्री में भेद है। काम के करने के घंटे को लेकर, वेतन को लेकर वहाँ आज भी विषमताएं हैं। उषा प्रियंवदा ने स्वयं लिखा कि, ''स्त्रियों का वेतन एक ही काम करने पर भी पुरुषों से 30 कम रहता है। मेरे ही विश्वविद्यालय में यह बात लागू होती है। यह तो मुझे हाल में ही पता चला कि मेरे सारे पुरुष सहयोगियों का वेतन मुझसे अधिक है। भले ही योग्यता और सर्विस में वे कम हो। इस वर्ष से पहले सरकारी और प्राइवेट सेक्टर में कहीं भी मैटरनिटी लीव वेतन सहित का विधान नहीं था। छोटे बच्चों की देखभाल का भी सरकार या कंपनी किसी की ओर से प्रबंध नहीं है। सम्मिलित परिवार या नौकर रखने की परंपरा न होने से घर में भी बच्चे की देखभाल का कोई साधन नहीं। बाबा, दादी, नाना–नानी की अपनी दुनिया होती है। जहाँ अवकाश के बाद भ्रमण और आराम की जिंदगी बिताना ही मुख्य होता है। मौखिक रूप से बेहतर स्नेह दिखाने के बाद भी कभी भी कोई दादी पौत्र, पौत्री की देखभाल करने को राजी हो। अगर माँ काम पर लौटना चाहती है तो उसकी अनुपस्थिति में उसका बच्चा कोई और स्त्री पालती है। जिसे सिर्फ पैसा कमाने से मतलब रहता है। बच्चे को मांदृसा स्नेह देना या उसके मानसिक विकास में योगदान देने में उसकी कोई रुचि नहीं होती। यदि वह घर पर रहकर अपना बच्चा स्वयं पालना चाहती हैं तो उसे लगता है नौकरी में उन्नत की होड़ में व पीछे रही

जा रही है और अपने सहयोगिनियों की दृष्टि में वह हेय है क्योंकि वह गृहिणी बनकर रह गई है।''[8]

पश्चिमी यूरोपीय देशों में उसी तरह की आधुनिकता है जैसे अमेरिका में है। अमेरिका जवानी और खूबसूरती का दीवाना है। यही कारण है कि हजारों स्त्री पुरुष प्लास्टिक सर्जरी करवा कर अपने को जवान रखते हैं। प्रौढ़ पत्नी को छोड़कर कम उम्र की लड़की के साथ रहना वहाँ सामान्य बात है। लेकिन उषा प्रियंवदा के पति इसके बिल्कुल विपरीत हैं। उषा प्रियंवदा की मैत्री यहां की स्त्रियों से नहीं हो पाई, इसका कारण है, भारतीय स्त्रियों ने अमेरिका जाने पर कुछ अपनाया हो या ना अपनाया हो लेकिन, आपसी घटिया व्यवहार जरूर अपनाया है। उषा जी नौकरीपेशा होने से उनका निशाना बन सकती थी, परंतु बनी नहीं। विभाग की हर नई सेक्रेटरी को यह बताना पड़ता है कि वहाँ, वह एक महत्वपूर्ण पद पर आसीन है और उसे हर कार्यक्रम या बैठक की सूचना दी जाए। उषा जी की सहयोगिनी नारियों और छात्राओं का व्यवहार उनके प्रति तब बदल जाता है, जब वे जान जाती है कि वह प्रमोशन देने वाली कमेटी में सम्मिलित हैं। फेलोशिप कमेटी की अध्यक्ष भी हैं। पुरुषों को जैसे भी एक मुस्कुराहट से जीत सकती हैं। वैसे उसे जीता नहीं जा सकता। अमेरिका के गोरे पुरुष मजदूर ने उनकी कार को टक्कर मारी,तब पुलिस चीफ और इंश्योरेंस कंपनी ने इन्हीं की गलती मानी, तब वे समझती हैं कि अमेरिका कितना प्रगतिशील देश है। अमेरिका मे नियमित रूप से वेतन की पद्धति नहीं है। प्रोफेसर अपनी योग्यता के अनुसार वेतन पाता है। यही कारण है कि जब विस्कोंसिन विश्वविद्यालय से अधिक वेतन कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय देता है, तो लोग विस्कांसिन विश्वविद्यालय छोड़कर कैलिफोर्निया चले जाते हैं, और वहां के अखबार प्रमुख रूप से ऊँचे वेतन वाले प्रोफ़ेसर की आय का ब्यौरा छापते हैं। वहां यह उनके स्टेटस का सिंबल होता है। उषा प्रियंवदा ने अमेरिका और फिनलैंड के लोगों के स्वभाव में जो फर्क है उसे प्रस्तुत करते हुए लिखा कि, ''अमेरिकियों जैसी कुंठाए या ग्रंथियाँ या पूर्वाग्रह मुझे स्कैंडिनेविया में नहीं मिले; बल्कि भारतीय होने पर जितना गर्व मुझे फिनलैंड और डेनमार्क में हुआ उतना कहीं और नहीं। लंदन में भारतीयों के प्रति उपेक्षा का सा भाव है। अमेरिका में आम भारतीय के लिए बड़ा पेट्रनाइजिंग–सा 'कि देखो हर जरूरत पर हम ही सहायता करते हैं' परंतु स्कैंडिनेविया में, विदेश में भारत का नाम बहुत नीचा होने पर भी कभी भारतीय होने के कारण मेरे सम्मुख कोई अप्रिय प्रसंग नहीं आया। बल्कि बेहद उत्सुकता और अचरज से मुझे देखा गया जो कि भला ही लगा।''

कोपनहेगन के खूबसूरत एयरपोर्ट से स्कैंडिनेवियन एयरलाइंस के टर्मिनल तक जाते हुए मुझे चारों और बेहद सफाई और सुथरेपन का बोध होता है। रास्ते में फ्लैटों के बड़े–बड़े ब्लॉक हैं। ऊँची लंबी सीमेंटी इमारतें जिनमें कांच की खिड़कियाँ सहस्रो आँखों की तरह जड़ी हुई हैं।''[9] डेनमार्क में महंगाई फिनलैंड से अधिक है। फिर भी किम ने उषा जी के लिए कई सप्ताह कोपनहेगन में रुकने के लिए एक फ्लैट में रहने का इंतजाम किया था। जहाँ पर उषा जी ने जर्मनों द्वारा बनाए वह कंसंट्रेशन कैंप के कटीले तार भी देखें। हेलसिंगोर में हैमलेट का राजमहल भी देखा। ढेर सारी खरीददारी भी की। पहली बार वे नाइट फेरी लेकर फिनलैंड से स्वीडन गई। आधी रात के बाद पत्नी ने नीचे से दहकता हुआ सूरज का गोला भी देखा। उषा प्रियंवदा ने लिखा– ''फ्लैट का किराया सुनकर लगा कि डेनमार्क में महंगाई फिनलैंड से भी अधिक है। परंतु अगस्त में डेनमार्क का टूरिस्ट सीजन चरम सीमा पर होता है। इसलिए प्रति सप्ताह के लिए पचास डालर का किराया देकर फ्लैट लेना ही पड़ा। फ्लैट था भी दक्षिणी कोपेनहेगन के एक सबर्ब में। परंतु बस और ट्राम की सर्विस अच्छी होने से कभी दिक्कत नहीं उठानी पड़ी। टैक्सी की लंबी यात्रा के बाद जब हम 'केबेलायवे' पहुँचे तो लघु शैट्र्स और सफेद

ब्लाउज पहने मकान मालकिन सफाई में जुटी थी। वे एक स्कूल में अध्यापिका थी और उनके पति बिजनेस में थे।''[10] उषा प्रियंवदा ने यूरोप के अनेक देशों और समाजों का भी चित्रण किया है। फिनलैंड के लोग अपने सामर्थ्य के अनुसार भी खरीद कर उस पर लकड़ी की कॉटेज बनवा लेते हैं। गर्मियों में कुछ सप्ताह के लिए वहाँ पर जाकर रहते हैं। उषा जी के पति का जो द्वीप था, वह चारों तरफ सागर से घिरा हुआ था। दूर–दूर तक कोई पड़ोसी नहीं।चारों ओर एल्डरबेरी की चौड़ी पत्तियों वाली झाड़ियों की श्रृँखला और चीड के सघन विकसित पश्चिम की ओर रेत, स्वाभाविक है कि वहाँ के जनजीवन से उषा जी का लगाव काफी हो चुका था। उषा जी अपने यात्रा संस्मरण में लिखती है कि, ''केवल हम भारतीय, पाकिस्तानी और सीलोन वाली स्त्रियाँ ही विदेश में अपने पहनावे, साड़ी से अब तक चिपकी हुई हैं। अन्य एशियाई देशों ने पश्चिमी पोशाक को अपना लिया है। तिवोली– बहुत पहले तिवोली के बारे में बात करते हुए एक मित्र अनिला बहुत भावुक हो गई थी। सभी यात्रा पुस्तकें तिवोली का काफी वर्णन करती हैं।अक्सर दूसरों के वर्णन से यथार्थ छोटा नजर आता है। मैं भी तिवोली में देखे ऐसी क्या बात है? के भाव से घुसी और बाएं और मयूर थिएटर में प्रदर्शित पेनटोमाइम के आगे बंध कर रह गई। दर्शक खुले मैदान में अर्धवृत्ताकार पड़ी कुर्सियों पर बैठे थे। पर जितने बैठे थे उनसे कितनी ही अधिक मात्रा में खड़े थे। भीड़ थी। पर शोर नहीं था। धक्का–मुक्की नहीं थी। आगे जाकर अच्छी सीट घेर लेने की कोई इच्छा नहीं थी। छोटे बच्चों को उनके पिता ने गोद में उठा रखा था या कंधों पर बैठा लिया था।''[11]

पश्चिमी समाज में उषा के उपन्यासों का जो परिवेश है। उसमें सबसे ज्यादा अमेरिका के ही अलग अलग शहर हैं। जहाँ के पूरे परिवेश को उषा प्रियंवदा ने प्रस्तुत किया है। वहाँ की सामाजिकता वहां का जन–जीवन सब कुछ उनके कथा साहित्य में दिखाई पड़ता है। ''न्यूयॉर्क हडसन नदी के पूर्वी छोर पर बसा अमेरिका का सबसे प्रसिद्ध चकाचौंध वाला शहर, अमेरिका का मुख्य द्वार, जहाँ पिछले दो ढाई सौ सालों से लाखों यात्री आते रहे। अतीत को काटकर सुंदर भविष्य गढ़ने की खोज में। चाहे वह 'मेफ्लावर' के इंग्लैंड चर्च को छोड़कर, या उत्तरी यूरोप में पढ़ते अकाल या महामारी के कारण, या बाद में नाजी जर्मनी के अत्याचारों से बचने के लिए या फिर एशियाई डॉक्टर, साइंटिस्ट, प्रोफेसर या मजदूर, गरीबी से छूटने या महत्वाकांक्षा को पूर्ण करने के लिए। न्यूयार्क में एलिस आईलैंड नामक जगह जो अब प्रदर्शन क्षेत्र है, ऐसे ही यात्रियों का पहले पहल स्वागत करता था। यही अमेरिका की भूमि पर पहली बार उनके कदम पड़ते थे। और हर एक कोई अपने आप में स्वतंत्र, राजनीतिक प्रभुत्व से परे अपना जीवन स्वयं गढ़ने को उद्यत रहता था।''[12]

उषा प्रियंवदा का अमेरिका के इन शहरों का वर्णन उनकी अपनी दृष्टि से किया गया वर्णन है। परंतु इस वर्णन में सच्चाई ज्यादा है; क्योंकि वहाँ पर उन्होंने वैवाहिक जीवन व्यतीत करके एक लंबी अवधि तक प्रवास किया और उस प्रवास में छोटी–बड़ी सभी चीजों का अनुभव किया। वहाँ की सामाजिक संरचना, वहाँ की आर्थिक क्रियाकलाप, वहां के लोगों का जीवन, वहाँ के शहरों में कौन छोटा है? कौन बड़ा है?कौन मंहगा है? कौन, कहाँ बसा है? संपूर्ण इतिहासदृ भूगोल, राजनीति और समाज की जानकारी प्रस्तुत की है। वे लिखती हैं– ''न्यूयॉर्क में सभी कुछ है। महंगी से महंगी हर चीज के साथ, गरीब से गरीब को भी बाहों में समेट लेने की क्षमता। जिन लंबी भव्य अट्टालिकाओं से सजी सड़कों पर 'टिफेनी' और 'काटिए' नामक आभूषणों की दुकानें हैं। जिनमें जापानी टूरिस्टो की भीड़ रहती है, उसी के कोने पर कुछ हटकर एक एशियाई पुरुष अखबार बेच रहा है। उसे बंधी दिहाड़ी मिलती है। चाहे अखबार बिके या नहीं उसे रुपयों में बदलने में अच्छी खासी रकम बन जाती है। मगर फिर भी न्यूयार्क में अपने खाने के लिए भले

ही पर्याप्त हो, मगर रहने के लिए शायद खुली सड़क का होना ही मिल पाए। मैं ऐसे ही कोने पर अखबार खरीदने रुक जाती हूँ, क्योंकि साफे में एक सिख है। पक्की दाढ़ी–मूछ वाले, सादे, सरल। वे मुझसे बात करने लगते हैं। वे बताते हैं कि वे छोटे भाई की संरक्षकता में आए थे। बाल–बच्चे अभी भी पंजाब में है, बुला नहीं पाए हैं। भाभी के साथ रहते हैं। अंग्रेजी नहीं आती, मगर इस काम में भाषा ज्ञान की जरूरत नहीं है। घर की बहुत याद आती है। पैसे जुटे तो परिवार को बुलाए, पर बचे कैसे, सारी कमाई भारत टेलीफोन करने में फुँक जाती है। एक बार फोन करो तो फिर रखने का मन ही नहीं होता। भाई खिलाता–पिलाता है, पर भावज टेलीफोन के पैसे रखवा लेती है। क्या करें ? वह भी तो 8 घंटे रोज कैसियर का काम करती है। बात करते–करते सरदार जी की आँखें गीली हो आती है। यार इतने हिंदुस्तानी है, मगर खड़े होकर बात करने का फालतू समय किसके पास है।''[13]

निष्कर्षतः कहा जाए तो उषा प्रियंवदा ने विदेशी समाज का समग्र दृष्टिओं से वर्णन अपने उपन्यास साहित्य में किया है। उन्होंने उन प्रवासी भारतीयों की सोच को भी प्रस्तुत किया है,जो विदेशी संस्कृति में जाकर अपने को ढाल लेती हैं। न इधर की रह पाती हैं न ही उधर कि। अमेरिका, फिनलैंड, लंदन इत्यादि की पृष्ठभूमि, वहाँ के जलवायु, वहाँ के खानपान, लोगों के जीवन–शैली एवं भारतीयों की जीवन शैली जो विदेशों में रह रहे हैं, को भी प्रस्तुत किया है। पति–पत्नी के संबंधों को इन्होंने विदेशी पृष्ठभूमि पर विशेष तौर पर देखा है, कि वहाँ वस्त्र की तरह संबंध बदलते हैं। जैसे लोग पुराने वस्त्रों को त्याग कर नए वस्त्रों को धारण करते हैं, उसी प्रकार पति और पत्नी एक दूसरे को छोड़कर नए रिश्तों का वरण करते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ :

1. डा नीता द. भोसले उषा प्रियम्वदा कृत शेष यात्रा एक अनुशीलन, वांग्मय बुक्स अलीगढ़, संस्करण 2014, पृष्ठ 44
2. उषा प्रियंवदा, शून्य तथा अन्य रचनाएं, पृष्ठ 147, 148
3. उषा प्रियंवदा, शेष यात्रा पृष्ठ 25
4. वही, पृष्ठ 29
5. उषा प्रियंवदा, शून्य तथा अन्य रचनाएं, पृष्ठ 150, 51
6. उषा प्रियंवदा, शून्य तथा अन्य रचनाएं, पृष्ठ 149
7. उषा प्रियम्वदा, शून्य यथा अन्य रचनाएं, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 1बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज नई दिल्ली, संस्करण 1996, पृष्ठ 150
8. उषा प्रियंवदा, शून्य तथा अन्य रचनाएं, पृष्ठ 91, 92
9. उषा प्रियंवदा, शून्य तथा अन्य रचनाएं, पृष्ठ 92
10. उषा प्रियम्वदा, शून्य तथा अन्य रचनाएं, पृष्ठ 93
11. वही, पृष्ठ 129
12. वही, पृष्ठ 129, 130
13. वही, पृष्ठ 130

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

समकालीन हिंदी उपन्यास : सामाजिक यथार्थ एवं नया मूल्यबोध

प्रमोद कुमार पटेल
शोधार्थी
हिन्दी–वभाग, हिन्दी एवं भाषा वज्ञान वभाग
रानी दुर्गावती वश्व वद्यालय जबलपुर (म०प्र०)

अंग्रेजी के नावेल को गुजराती में नवलकथा :,मराठी में 'कादम्बरी' ' और बंगला तथा हिंदी में उपन्यास कहते हैं 'उपन्यास' शब्द उप = समीप तथा न्यास = थाती के योग से बना है जिसका अर्थ है – 'मनुष्य के निकट रखी गई वस्तु अर्थात वह वस्तु या कृति जिसे पढ़कर ऐसा लगे की यह हमारी ही है, इसमें हमारे ही जीवन का प्रतिबिंब है इसमें हमारी ही कथा हमारी भाषा में कही गयी है आधुनिक युग में जिस साहित्य विशेष के लिए यह शब्द सर्वथा समर्थ है | हिंदी साहित्य कोश भाग 01 (**धीरेन्द्र वर्मा** -| 21)

वर्ण्य- विषय की दृष्टि से उपन्यास के 2 **ही विभाग हो सकते हैं-** (1) **ऐतिहासिक और** (2) **सामाजिका 'सामाजिक उपन्यास उपन्यास लेखन की दिशा में एक क्रन्तिकारी एवं प्रभावकारी कदम रहा है हर देश के कथा साहित्य में सामाजिक उपन्यास लेखन की संख्या सबसे ज्यादा रही है |**

सामाजिक उपन्यास का ताना- बाना समाज की घटनाओं सामाजिक समस्याओं, सामाजिक सामाजिक जीवन के सुख- दु:ख, विभिन्न वर्गों की सामाजिक स्थितियों, विषमर्ताओं, असंगतियों, सामाजिक जीवन में आ रहे बदलावों इत्यादि विभिन्न तथ्यों से बुना जाता है | वस्तुतः सामाजिक उपन्यास सामाजिक चेतना से अनुप्राणित समकालीन सामाजिक जीवन का एक ऐसा आख्यान, एक ऐसा दस्तावेज होता है, जिसमें उपन्यासकार का उद्देश्य सामाजिक जीवन के विविध पक्षों को उभारकर पाठकों के चित को झकझोरना होता है |

औद्योगिकीकरण तथा पूंजीवाद के विकास ने जो नया सामाजिक परिवेश निर्मित किया है, उसका सर्वाधिक शिकार मध्य वर्ग ही बना है | पूंजावादी विकास ने एक तरह का नया सामाजिक विभाजन प्रस्तुत किया है जो विभिन्न प्रकार की जटिलताओं, समस्याओं से घिरा हुआ है, जिसने तनावग्रस्तता को अधिक बढ़ाया और जो मध्य वर्गीय जीवन की पहचान बन गया है समकालीन समाज में यह तनाव निरन्तर बढ़ता दिखाई दे रहा है | भारत के बाहर के समाजों में तो यह और भी तेजी से बढ़ता दिखाई देता है |

मध्यवर्गीय व्यक्ति का सुख- दू:ख और तानाव उसका अपना ही है क्योंकि वह अपने में ही इतना सिमटा हुआ है कि समाज की अवधारणा उसे गलत लगने लगती है और वही व्यक्ति आर्थिक विषमता से घिरा हो तो समाज में प्रचलित मान्यताओं परम्पराओं के विरुद्ध उठ खडा होता है तो समाज वालों की उँगलियाँ उसकी ओर उठने लगती है | परम्पराओं को ललकारने वाली कोई लड़की हो तो परिवार वाले ही उसके शत्रु बन जाते हैं क्योंकि मध्यवर्गीय अपना कुण्ठाओं के वशीभूत किसी भी नये प्रयास या परिवर्तन

से हिचकिचाता है | मुझे चाँद चाहिए की सिलबिल अपनी आवश्यकतापूर्ति के लिए ट्यूशन लेने का प्रयास करती है तो घर में हंगामें का कारण बन जाता है, उसके पिता के लिए यह अकरणीय है इस तरह के बंधन किसी भी स्वच्छन्द चरित्र वाले व्यक्ति को विद्रोही बना देते है | और वह उस घर-परिवार- समाज से अलगाव महसूस करने लगता है | मध्यवर्गीय समाज की उच्च महत्वकांक्षा वाली लड़कियों की प्रतिनिधि " वर्षों का अंदाजा नहीं था कि नयी दिल्ली में इतने साल गुजारने के बाद यह शहर उसे पराये के बाद यह शहर उसे परामेपन की रंगत लिये हुए लगेगा |" वर्षा की ऐसी मान सिकता की वजह अपने समाज और परिवार से अलगाव के कारण है- पूंजीवादी वर्ग व उच्च मध्य वर्ग के अंतर्गत प्रचलित विश्वासों को लेकर टकराव की स्थति से उपजा असंतोष और अधूरापन वर्षा के चरित्र द्वारा लक्षित किया गया है

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात औद्योगिक विकास के लिए परिणाम स्वरुप सामाजिक मूल्यों और मान्यताओं के प्रति संशय असंतोष और अविश्वाश पनपा है | आज भारत की सम्पूर्ण मानसिकता में तनाव, आतंक, विश्वासहीनता समा गयी है, सम्बन्धो में सवेदनशून्यता समा गयी है | अर्द्धनारीश्वर में विदेश जाने के बाद शिवनाथ शाहिदा को पत्र लिखता है कि "आज की दुनिया भावनाओं के सहारे नहीं चलती मशीन अब इसकी आशिक यात्री देवी है तो प्रेम प्यार लगाव संवेदना ये सब यांत्रिक हो गये है न कोई किसी के लिए जीता है न कोई किसी के लिए मरता है |"

भारतीय चिन्तन पद्दति और लोकाचार में धर्म समाया हुआ है किन्तु उसके विकृत रूप का कुप्रभाव भी सामने आया है | धर्मवाहकों ने कर्मकाण्ड आधारित आडम्बनपूर्ण पूजा पद्दति को अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए अपनाया जिसका परिणाम कुरीति व कुप्रथा के रूप में सामने आया | 'करवट' में रचनाकार ने इसी समस्या की ओर हमारा ध्यान खींचा है- "हमने सुना है की यू बुढ़वन क्यार पानी खींचने वाली कनमहियाँ कैनों मच्छिनाई मिलाई के हमार धर्म बिगाड़ा है |" इस तरह की मान्यताओं के कर्ण समाज में कुछ ऐसी परम्पराएँ और प्रथाएं प्रचालित हो जाती है जिमका कोई औचित्य नहीं शिक्षा के भाव में अज्ञानतवश इन अफवाहों को सही मान लिया जाता है |

"प्रत्येक समाज की अपनी विशेषताएं होती है | देश काल चरित्रों के अनुसार समाजीकरण के माध्यम से समाज में व्यक्ति और समुदाय इस परम्पराओं के माध्यम से अनुप्रेरित होते हैं | इन सामाजिक आर्थिक नियमों के प्रति व्यक्ति और समुदाय की भावनाएं अभिवृत्तियां पूर्वाग्रह तथा रुदियुक्तियाँ आदि स्थायी भाव के रूप में विद्यमान रहती हैं | इनमें विभिन्न संस्कृतियाँ एवं सभ्यताओं के संसर्ग से प्रगतिशीलता के परिचय में परिवर्तन होते रहते हैं | परिवर्तन मूल्यों के स्थायी भावो में मूल्यों के स्तानांतरण का एक स्वरुप होता है |" किसी भी समाज को उन्नतशील बनाने के लिए शिक्षा एक अनिवार्य तत्व है परिवर्तित शिक्षा व्यवस्था ने समाज को गहराई से प्रभावित किया है तथा समाज में प्रचलित मान्यताओं एवं व्यवस्थाओं ने शिक्षा को भी प्रभावित किया है |

शिक्षा अब पूरी तरह औद्योगिक है जहाँ सार्वभौमिकता और राष्ट्रोपयोगिता के मूल्यों को निर्मित नहीं किया जाता बल्कि जीवन उसे कारगर बाजारवादी ताकतों से जोड़ा जाता है जहाँ शैक्षिक संस्थाओं में पूंजीवादी राजनीति का हस्तक्षेप प्रमुखता पाता है | समकालीन समाज में शिक्षा के स्तर को चित्रित करने वाली रचना रागदरबारी है जिसमें समाधीन भिखम सेड़वी ने वैद्ध जी को जो पत्र लिखा था उसका आशय

या कि प्रबंध समिति की बैठक जो पिछले तीन साल में नहीं हुई है | दस दिन में बुलयी जानी चाहिए वास्तव में प्रबंधक वर्ग वही करता है जो उसे अभीष्ट है उसकी मनमानी रोकनेवाला कोई नहीं, कोई रोकने की कोशिश भी करता है तो उसका वाही हश्र होता – गयादीन के वक्तव्य से स्पष्ट झलकता है मैं तो चार छह साल से यही देख रहा हूँ | वहां गंगापुर में हेडमास्टर का खून हो गया था कि नही मारने वाले आज भी मूंछों पर ताव दिये घूमते हैं |"

भ्रष्टाचार जीवन मूल्यों के पतन की भूमिका की सशक्त मनोवैज्ञानिक हमले, जरिये तैयार करता है, इसका उदहारण 'औरत' उपन्यास में प्राप्त होता है | वहाँ एक गुण्डा पाण्डे कहता है- "आदर्शवाद छोड़ दो थानेदार जियो, जीने दो ... मैं जनता हौं तुम्हारा बदन छरहरा है, तुम लड़ने की टेकनीक सीखकर आये हो... पर क्या पाओगे इस मशीनरी को तुम अकेले बदल सकोगे |"- इस भयानक आक्रमण का मानवीय मूल्यों के ऊपर जो प्रभाव पड़ है आप समाज अनेक रूपों में भोग रहा है |

निराकर्षत: प्रत्येक राष्ट्र अपनी संस्कृतिक थाती के बल पर ही अपने मूल्यों का निर्धारण करता है, उन्ही के अनुरूप उनका जीवन दर्शन व दृष्टिकोण होता है| भारतीय समाज आज भी अपने शाश्वत मूल्यों और अध्यात्मिक दर्शन के लिए विख्यात है लेकिन औद्योगिक विकास एवं यांत्रिक जीवन ने हमारे सामाजिक मूल्यों में, वैचारिक जगत में, दृष्टिकोण एवं मान्यताओं में एक विद्रोहयुक्त चेतना को विकसित कर सारी परम्पराओं और समस्याओं के सामने प्रश्न चिन्ह लगा दिये है| भौतिक जगत की यह दिशा मूल्यहीनता में बदलती जा रही है | समाज मूल्यहीनता से ग्रस्त है और सर्वाधिक शिकार मध्यवर्ग है| 'चाक' में श्रीधर मास्टर हुकुम सिंह से कहता है," तो तुम प्रधान के बेटे होने की वजह से इस चोरी में शामिल हो| चोरी और सीनाजोरी कर हम तुम्हे हासिल है....नौकरी नहीं मिली तो उठाईगिरी पर उतर आये|"

शिक्षा के प्रचार और राष्ट्रीय स्तर पर सुधारवादी आन्दोलन के फलस्वरूप सम्पूर्ण देश में सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत मूल्यों में परिवर्तन हुए है| कानूनी और संवैधानिक स्तर पर भी रूढ़ियों से मुक्ति और कुरीतियों के निवारण हेतु प्रयास हुए | समकालीन समाज में जाति व्यवस्था, अस्पृश्यता , रुढिवाद, कर्मकाण्ड, स्वालम्बन, विषमता निर्मूलन आदि से सम्बंधित सूत्रों को चित्रण प्रस्तुत किया गया | कि वर्तमान समाज में की जीवन शैली, अनेक कटु और कुत्सित विघटित मूल्यों से युक्त हो कर विकृत हो गयी है और एक प्रकार की अनिश्चतता की स्थिति से ग्रस्त है |

सन्दर्भ-ग्रन्थ

1- हिन्दी साहित्य कोश, भाग -01, धीरेन्द्र वर्मा, प्रष्ठ -121

2- मुझे चाँद चाहिए, सुरेन्द्र वर्मा, मौवी आव्रत्ति, 1999

3- अर्द्ध नारीश्वर विष्णु प्रभाकर, संस्करण, 1997

4- करवट, अम्रतलाल नागर, संस्करण, 1994

5- समकालीन हिन्दी उपन्यास, देवराज

6- महाभोज ibid.p. 24

7- महाभोज ibid.p. 91

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

लिंग एवं क्षेत्र के आधार पर प्राथमिक स्तर के शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का अध्ययन

शोध निर्देशक
डॉ0 प्रवीन कुमार सिंह
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
शिक्षक शिक्षा विभाग (बी0एड0)
सल्तनत बहादुर पी0जी0 कालेज,
बदलापुर, जौनपुर (उ0प्र0)

शोधकर्त्ता
विमल कुमार शुक्ल
एम0ए0, एम0एड्0, नेट (शिक्षाशास्त्र)
वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल
विश्वविद्यालय,
जौनपुर (उ0प्र0)

सारांश

समस्या कथन **''लिंग एवं क्षेत्र के आधार पर प्राथमिक स्तर के शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का अध्ययन''** करना है। अध्ययन के उद्देश्य में लिंग एवं क्षेत्र के आधार पर शिक्षण दक्षता की तुलना की गयी है। परिकल्पना में शून्य परिकल्पनाओं का निर्माण कर परीक्षण किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत **सर्वेक्षण विधि** का प्रयोग किया गया है। वर्तमान शोध हेतु शोधकर्ता ने जौनपुर जिले के अन्तर्गत सरकारी प्राथमिक विद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों को जनसंख्या के रूप में माना गया है। प्रस्तुत शोध के लिए जौनपुर जिले में संचालित सरकारी प्राथमिक विद्यालयों का चयन यादृच्छिक न्यादर्शन विधि द्वारा चयन के पश्चात् तत्पश्चात् 500 शिक्षकों जिसमें 250 पुरुष एवं 250 महिला शिक्षकों का चयन शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के आधार पर चयन यादृच्छिक विधि से किया गया है। बी0के0 पासी और एम0एस0 ललिथा निर्मित 'सामान्य शिक्षण दक्षता स्केल' (GTCS) परीक्षण एक शाब्दिक परीक्षण है। इनके द्वारा शिक्षक एवं शिक्षिकाओं की शिक्षण दक्षता का मापन किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में प्रदत्तों के विश्लेषण के लिए मध्यमान, मानक विचलन, मानक त्रुटि एवंएवं टी–अनुपात सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रयोग किया गया है। आँकड़ों के विश्लेषण के पश्चात् निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुये– शहरी एवं ग्रामीण के साथ–साथ समस्त महिला शिक्षकों में शिक्षण दक्षता पुरुष शिक्षकों की अपेक्षा उच्च पाया गया। महिला शिक्षकों में शिक्षण दक्षता उच्च पाये जाने का कारण यह हो सकता है कि महिला शिक्षक अपने व्यवसाय के प्रति ईमानदार, निष्ठा एवं कर्त्तव्यपूर्ण कार्य करने के साथ–साथ अपने शिक्षण दक्षता पर विशेष ध्यान देती होगी। दक्षता आमतौर पर अत्यधिक व्यावसायिक प्रदर्शन से जुड़ी होती है और शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक की व्यावसायिक क्षमता और छात्र के प्रदर्शन के बीच एक सीधा संबंध होता है।

मुख्य शब्द–पुरुष, महिला, शहरी, ग्रामीण, शिक्षक, शिक्षण दक्षता, तुलना

भूमिका

किसी देश में शिक्षा रूपी तन्त्र के संचालन में शिक्षक विशाल पहिये का कार्य करता है, चीन देश की प्रचलित कहावत में ठीक ही कहा गया है– ''अगर आप किसी कार्य का सम्पादन एक वर्ष के लिए करना चाहते है, उसका बीजारोपण तुरन्त कीजिए अगर दस वर्ष के लिए करने की इच्छा करते है तो सही निर्णय करिए।''

अतः एक सम्पूर्ण मनुष्य का सुन्दर व्यक्तित्व तथा उसमें मनुष्योचित अभिवृत्तियों के लिए जिसके विभिन्न आयाम हो, को बनाना आज महत्वपूर्ण हो गया है। शिक्षा प्रक्रिया के तीन प्रमुख अंगों–शिक्षक, शिक्षार्थी और पाठ्यवस्तु में शिक्षक का स्थान सबसे अधिक महत्वपूर्ण है, सम्पूर्ण शिक्षा प्रक्रिया की घुरी शिक्षक होता है, उसके निर्देशन के अभाव में विद्यार्थी, ज्ञार्नाजन की सही दिशा का अनुकरण नहीं कर सकता। पाठ्यपुस्तक का सरस और बोधगम्य बनाने में शिक्षक की भूमिका प्रमुख होती है। शिक्षक शिक्षा प्रक्रिया को देशकाल के अनुरूप सही दिशा प्रदान करते हैं। एक शिक्षक की भूमिका निर्धारित विषय वस्तु का अधिगम करने से लेकर व्यक्तित्व निर्माण तक है। अर्थात् भावी नागरिकों का प्रशिक्षण उनके व्यक्तित्व का विकास जिसमें शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक सजगता, सौन्दर्यानुभूति, नैतिक श्रेष्ठता तथा सामाजिक समायोजन की योग्यता सम्मिलित होती है।

इस प्रकार व्यक्ति निर्माण से लेकर राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में शिक्षकों की भूमिका महत्वपूर्ण है। प्राचीन काल से हमारे भावी नागरिकों के निर्माण की जिम्मेदारी समाज ने शिक्षकों को सौंप दी थी। वर्तमान में भी शिक्षक उसी परम्परा का निर्वाह करते है।

जे0एफ0 ब्राउन का कहना है कि–सभी तथ्यों को देखते हुए मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि 'शिक्षक शिक्षा का महत्वपूर्ण अंग होता है। पाठ्यक्रम पाठ्य सामग्री और शिक्षालय संगठन यद्यपि शिक्षक व्यवस्था के उपयोगी अंग है पर वे तब तक निर्जीव रहते हैं जब तक कि शिक्षक के सजीव व्यक्तित्व द्वारा उसमें प्राणों का संचार नहीं हो जाता है।

डॉ0 राधाकृष्णन के विचार से–समाज में शिक्षक का स्थान अत्यधिक महत्वपूर्ण है। वही पीढ़ी दर पीढ़ी बौद्धिक परम्पराओं तथा शिक्षक कौशलों के हस्तान्तरण के उपक्रम के रूप में सभ्यता के प्रकाश को प्रकाशित रखने में सहायक होता है।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952–53) ने अपने प्रतिवेदन में कहा है कि– हम यह भली भाँति समझ गये है कि विचार युक्त, शैक्षिक, पुनर्निमाण में सर्वाधिक महत्व शिक्षक का है और उसके व्यक्तित्व गुण उसकी शैक्षणिक योग्यतायें, व्यवसायिक प्रशिक्षण एवं समाज में स्वयं उसके द्वारा प्राप्त स्थान सभी महत्वपूर्ण है।

शिक्षक के व्यक्तित्व का प्रभाव उसकी शिक्षण कला पर अवश्य पड़ता है और उसकी दक्षता का प्रभाव उसके व्यक्तित्व पर पड़ता है। इस प्रकार से शिक्षक के लिए उसके व्यक्तित्व और दक्षता ठीक उसी प्रकार है, जिस प्रकार जहाज में पाल होता है। बिना शिक्षण दक्षता और उत्तम व्यक्तित्व के शिक्षक अपने शिक्षण कार्य में प्रभावशाली नहीं हो सकता है। जैसे–समुद्र में कोई जहाज बिना पाल के होता है और तूफान आने पर डूब जाता है।

किसी भी राष्ट्र का विकास उसकी शिक्षा व्यवस्था पर निर्भर करता है। जैसी शिक्षा वैसा राष्ट्र। वर्तमान परिस्थितियों में यह देखने को मिलता है कि विद्यालयों में नव नियुक्त शिक्षणगण समझते है कि कक्षाओं में विषय का प्रतिपादन करना ही उनका एकमात्र दायित्व है इस कार्य को अत्यन्त प्रमाणिकता, निष्ठा व परिश्रमपूर्वक किया गया तो वे उसे अपनी सफलता का प्रमाण मानने लगते है। वस्तु स्थिति उससे भिन्न होती है। अध्यापन कार्य में सफलता प्राप्त करने से पूर्व उसके तीन पक्षों पर विचार करना होता है।

अध्यापन के प्रथम पक्ष में चार बिन्दु आते है। प्रथम बिन्दु विषय का प्रमाणिकतापूर्वक प्रतिपादन तो किया गया परन्तु छात्रगण उसे ग्रहण न कर सके तो प्रतिपादन अनुपयोगी सिद्ध होगा। अतः अध्यापन का अर्थ होगा विषय का प्रतिपादन तथा दूसरा बिन्दु बच्चों द्वारा अधिग्रहण

बच्चे प्रतिपादन के समय पाठ को समझ तो गये, परन्तु कुछ भूल गये तो भी सार्थकता कम हो जायेगी। अतः पढ़ना, समझना तथा उसका तीसरा बिन्दु होगा मष्तिष्क में टिकाना। उसके पश्चात् भी परीक्षा अथवा जीवन में उसके उपयोग के समय यदि समझी हुयी बात उपयुक्त ढंग से प्रतिपादित न की जा सकती हो तो परीक्षाफल घातक सिद्ध होगा। अतः सफल अध्यापन का चौथा बिन्दु होगा। अधिग्रहीत पाठ्य विषय का उत्तम ढंग से प्रतिपादन।

अध्यापन के एक दूसरे पक्ष पर शिक्षक को गम्भीरता से विचार करना चाहिए कि हमें अध्यापन किसका कराना है? सामान्यतः देखा जाता है कि शिक्षकगण अध्यापन पाठ्य पुस्तक का कराते है विषय का नहीं। उदाहरणस्वरूप शिक्षण के अन्तर्गत यदि हमें विषय पढ़ाना है तो उसका अर्थ है पढ़ाना, लिखाना, समझाना व भाव व्यक्त करने की प्रतिभा विकसित करना। सामान्यतः यह कार्य नहीं किया जाता है। उसी के परिणामस्वरूप आज यह दुर्भाग्यपूर्ण दृश्य देखने को मिल सकता है कि अंग्रेजी, हिन्दी, संस्कृत जैसे विषयों में एम0ए0 की डिग्री प्राप्त करने के उपरान्त भी अधिकांश लोग इन भाषाओं में सफलतापूर्वक चर्चा, वार्ता नहीं कर पाते।

तीसरा पक्ष यह है कि प्रत्येक विषय के अध्यापन का पृथक–पृथक होता है। गणित अध्यापन के द्वारा जहाँ तर्क शक्ति निरीक्षण शक्ति विवेक शक्ति एवं अन्य मानसिक शक्तियों के विकास के साथ क्रियाशीलता एवं गतिशीलता विकसित की जाती है, वहीं पर इतिहास के शिक्षण द्वारा राष्ट्रभक्ति तथा पूर्वजों के प्रति अपनत्व के साथ राष्ट्रहित के आधार पर घटनाओं के विश्लेषण की पात्रता भी विकसित की जाती है। परीक्षा पास करवाना एकमात्र उद्देश्य नहीं होता है।

अतः एक शिक्षक की राष्ट्र की छात्रों के सर्वांगीण विकास के लिए उत्तरदायी है जो शिक्षक की कार्यकुशलता और दक्षता पर निर्भर करता है। दक्ष शिक्षक बालक के शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक तथा नैतिक एवं अध्यात्मिक विकास करके उसके सम्पूर्ण विकास को प्रोत्साहित करता है और अपने लक्ष्य की तरह बढ़ने हेतु अग्रसर बनाता है।

समस्या कथन–

"लिंग एवं क्षेत्र के आधार पर प्राथमिक स्तर के शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का अध्ययन।"

अध्ययन का उद्देश्य–

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित उद्देश्यों का अध्ययन किया गया है–

1. प्राथमिक स्तर के पुरुष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. प्राथमिक स्तर के शहरी पुरुष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. प्राथमिक स्तर के ग्रामीण पुरुष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

5. प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण पुरुष शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का तुलनात्मक अध्ययन करना।
6. प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ–

अध्ययन में निम्नलिखित शून्य परिकल्पनाओं का परीक्षण किया गया है–

1. प्राथमिक स्तर के पुरुष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. प्राथमिक स्तर के शहरी पुरुष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
4. प्राथमिक स्तर के ग्रामीण पुरुष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
5. प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण पुरुष शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
6. प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

अध्ययन की विधि–प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत **सर्वेक्षण विधि** का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या– वर्तमान शोध हेतु शोधकर्ता ने जौनपुर जिले के अन्तर्गत सरकारी प्राथमिक विद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों को जनसंख्या के रूप में माना गया है।

न्यादर्श– प्रस्तुत शोध के लिए जौनपुर जिले में संचालित सरकारी प्राथमिक विद्यालयों का चयन यादृच्छिक न्यादर्शन विधि द्वारा चयन के पश्चात् तत्पश्चात् 500 शिक्षकों जिसमें 250 पुरुष एवं 250 महिला शिक्षकों का चयन शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के आधार पर चयन यादृच्छिक विधि से किया गया है।

प्रयुक्त उपकरण– बी0के0 पासी और एम0एस0 ललिथा निर्मित 'सामान्य शिक्षण दक्षता स्केल' (GTCS) परीक्षण एक शाब्दिक परीक्षण है। इनके द्वारा शिक्षक एवं शिक्षिकाओं की शिक्षण दक्षता का मापन किया गया है।

सांख्यिकीय प्रविधियाँ :

प्रस्तुत अध्ययन में प्रदत्तों के विश्लेषण के लिए मध्यमान, मानक विचलन, मानक त्रुटि एवंएवं टी–अनुपात सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रयोग किया गया है।

आँकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या–

1. प्राथमिक स्तर के पुरुष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

H_{01} प्राथमिक स्तर के पुरुष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी संख्या 1

प्राथमिक स्तर के पुरुष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–अनुपात

क0 सं0	लिंग	संख्या (N)	मध्यमान (M)	प्रमाणिक विचलन (S.D.)	$D=(M_1 \sim M_2)$	δ_D	टी–अनुपात	सारणी मान
1.	पुरुष	250	82.68	18.83	11.90	1.57	7.58*	1.96
2.	महिला	250	94.58	16.19				*df*= 498

व्याख्या–

उपयुर्क्त सारणी 1 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि प्राथमिक स्तर के पुरुष शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का मध्यमान 82.68 तथा मानक विचलन 18.83 एवं प्राथमिक स्तर के महिला शिक्षको की शिक्षण दक्षता का मध्यमान 94.58 तथा मानक विचलन 16.19 है। परिगणित टी अनुपात का मान 7.58 है मुक्तांश *(df)* 498 तथा 0.05 सार्थकता स्तर के लिए द्विपुच्छिय परिक्षण पर टी अनुपात का सारणी मान 1.96 है अर्थात परिगणित टी अनुपात सारणी मान से अधिक है अतः कहा जा सकता है 0.05 सार्थकता स्तर पर शून्य परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है, तथा मध्यमान में प्रदर्शित अन्तर सार्थक है।

प्रस्तुत उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रकल्पित किया गया कि प्राथमिक स्तर के पुरुष एवं महिला शिक्षको की शिक्षण दक्षता में अन्तर होता है जो कि सार्थकता स्तर 0.05 पर स्वीकृत की जाती है तथा शून्य परिकल्पना कि प्राथमिक स्तर के पुरुष एवं महिला शिक्षको की शिक्षण दक्षता में अन्तर नही होता है। निरस्त की जाती है तथा परिणामतः कहा जा सकता है। प्राथमिक स्तर के महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता पुरुष शिक्षकों की अपेक्षा उच्च है।

2. प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

H_{02} प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी संख्या 2

प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–अनुपात

क0 सं0	क्षेत्र	संख्या (N)	मध्यमान (M)	प्रमाणिक विचलन (S.D.)	$D=(M_1 \sim M_2)$	δ_D	टी–अनुपात	सारणी मान
1.	शहरी	250	87.48	18.79	2.30	1.65	1.39	1.96
2.	ग्रामीण	250	89.78	18.21				*df*= 498

व्याख्या–

उपयुर्क्त सारणी 2 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि प्राथमिक स्तर के शहरी शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का मध्यमान 87.48 तथा मानक विचलन 18.79 एवं प्राथमिक स्तर के ग्रामीण शिक्षको की शिक्षण दक्षता का मध्यमान 89.78 तथा मानक विचलन 18.21 है। परिगणित टी अनुपात का मान 1.39 है मुक्तांश *(df)* 498 तथा 0.05 सार्थकता स्तर के लिए द्विपुच्छिय परिक्षण पर टी अनुपात का सारणी मान 1.96 है अर्थात परिगणित टी अनुपात सारणी मान से कम है अतः कहा जा सकता है 0.05 सार्थकता स्तर पर शून्य परिकल्पना स्वीकृत की जाती है, तथा मध्यमान में प्रदर्शित अन्तर सार्थक नहीं है।

प्रस्तुत उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रकल्पित किया गया कि प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण शिक्षको की शिक्षण दक्षता में अन्तर होता है जो कि सार्थकता स्तर 0.05 पर अस्वीकृत की जाती है तथा शून्य परिकल्पना कि प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण शिक्षको की शिक्षण दक्षता में अन्तर नही होता है, स्वीकृत की जाती है तथा परिणामतः कहा जा सकता है। प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में समानता है।

3. प्राथमिक स्तर के शहरी पुरुष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

H_{03} प्राथमिक स्तर के शहरी पुरुष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी संख्या 3

प्राथमिक स्तर के शहरी पुरुष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–अनुपात

क0 सं0	लिंग	संख्या (N)	मध्यमान (M)	प्रमाणिक विचलन (S.D.)	$D=(M_1 \sim M_2)$	δ_D	टी–अनुपात	सारणी मान
1.	पुरुष	125	81.15	18.48	12.67	2. 24	5.66*	1.97
2.	महिला	125	93.82	16.94				*df*= 248

व्याख्या–

उपयुर्क्त सारणी 3 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि प्राथमिक स्तर के शहरी पुरुष शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का मध्यमान 81.15 तथा मानक विचलन 18.48 एवं प्राथमिक स्तर के शहरी महिला शिक्षको की शिक्षण दक्षता का मध्यमान 93.82 तथा मानक विचलन 16.94 है। परिगणित टी अनुपात का मान 5.66 है मुक्तांश *(df)* 248 तथा 0.05 सार्थकता स्तर के लिए द्विपुच्छिय परिक्षण पर टी अनुपात का सारणी मान 1.97 है अर्थात परिगणित टी अनुपात सारणी मान से अधिक है अतः कहा जा सकता है 0.05 सार्थकता स्तर पर शून्य परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है, तथा मध्यमान में प्रदर्शित अन्तर सार्थक है।

प्रस्तुत उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रकल्पित किया गया कि प्राथमिक स्तर के शहरी पुरुष एवं महिला शिक्षको की शिक्षण दक्षता में अन्तर होता है जो कि सार्थकता स्तर 0.05 पर स्वीकृत की जाती है तथा शून्य परिकल्पना कि प्राथमिक स्तर के शहरी पुरुष एवं महिला शिक्षको की शिक्षण दक्षता में अन्तर नही होता है, निरस्त की जाती है तथा परिणामतः कहा जा सकता है। प्राथमिक स्तर के शहरी महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता पुरुष शिक्षकों की अपेक्षा उच्च है।

4. प्राथमिक स्तर के ग्रामीण पुरुष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

H_{04} प्राथमिक स्तर के ग्रामीण पुरुष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी संख्या 4

प्राथमिक स्तर के ग्रामीण पुरुष एवं महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–अनुपात

क0 सं0	लिंग	संख्या (N)	मध्यमान (M)	प्रमाणिक विचलन (S.D.)	$D=(M_1 \sim M_2)$	δ_D	टी–अनुपात	सारणी मान
1.	पुरुष	125	84.22	19.12	11.13	2.20	5.06*	1.97
2.	महिला	125	95.35	15.43				*df*= 248

व्याख्या–

उपयुर्क्त सारणी 4 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि प्राथमिक स्तर के ग्रामीण पुरुष शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का मध्यमान 84.22 तथा मानक विचलन 19.12 एवं प्राथमिक स्तर के ग्रामीण महिला शिक्षको की शिक्षण दक्षता का मध्यमान 95.35 तथा मानक विचलन 15.43 है। परिगणित टी अनुपात का मान 5.06 है मुक्तांश *(df)* 248 तथा 0.05 सार्थकता स्तर के लिए द्विपुच्छिय परिक्षण पर टी अनुपात का सारणी मान 1.97 है अर्थात परिगणित टी अनुपात सारणी मान से अधिक है अतः कहा जा सकता है 0.05 सार्थकता स्तर पर शून्य परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है, तथा मध्यमान में प्रदर्शित अन्तर सार्थक है।

प्रस्तुत उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रकल्पित किया गया कि प्राथमिक स्तर के ग्रामीण पुरुष एवं महिला शिक्षको की शिक्षण दक्षता में अन्तर होता है जो कि सार्थकता स्तर 0.05 पर स्वीकृत की जाती है तथा शून्य परिकल्पना कि प्राथमिक स्तर के ग्रामीण पुरुष एवं महिला शिक्षको की शिक्षण दक्षता में अन्तर नही होता है, निरस्त की जाती है तथा परिणामतः कहा जा सकता है। प्राथमिक स्तर के ग्रामीण महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता पुरुष शिक्षकों की अपेक्षा उच्च है।

5. प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण पुरुष शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

H_{05} प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण पुरुष शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी संख्या 5

प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण पुरुष शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–अनुपात

क0 सं0	क्षेत्र	संख्या (N)	मध्यमान (M)	प्रमाणिक विचलन (S.D.)	$D=(M_1 \sim M_2)$	δ_D	टी–अनुपात	सारणी मान
1.	शहरी	125	81.15	18.48	3.07	2.38	1.29	1.97
2.	ग्रामीण	125	84.22	19.12				df= 248

व्याख्या–

उपयुर्क्त सारणी 5 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि प्राथमिक स्तर के शहरी पुरुष शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का मध्यमान 81.15 तथा मानक विचलन 18.48 एवं प्राथमिक स्तर के ग्रामीण पुरुष शिक्षको की शिक्षण दक्षता का मध्यमान 84.22 तथा मानक विचलन 19.12 है। परिगणित टी अनुपात का मान 1.29 है मुक्तांश (df) 248 तथा 0.05 सार्थकता स्तर के लिए द्विपुच्छिय परिक्षण पर टी अनुपात का सारणी मान 1.97 है अर्थात परिगणित टी अनुपात सारणी मान से कम है अतः कहा जा सकता है 0.05 सार्थकता स्तर पर शून्य परिकल्पना स्वीकृत की जाती है, तथा मध्यमान में प्रदर्शित अन्तर सार्थक नहीं है।

प्रस्तुत उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रकल्पित किया गया कि प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण पुरुष शिक्षको की शिक्षण दक्षता में अन्तर होता है जो कि सार्थकता स्तर 0.05 पर अस्वीकृत की जाती है तथा शून्य परिकल्पना कि प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण पुरुष शिक्षको की शिक्षण दक्षता में अन्तर नही होता है, स्वीकृत की जाती है तथा परिणामतः कहा जा सकता है। प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण पुरुष शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में समानता है।

6. प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

H_{06} प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी संख्या 6

प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–अनुपात

क0 सं0	क्षेत्र	संख्या (N)	मध्यमान (M)	प्रमाणिक विचलन (S.D.)	$D=(M_1 \sim M_2)$	δ D	टी–अनुपात	सारणी मान
1.	शहरी	125	93.82	16.94	1.53	2.05	0.75	1.97
2.	ग्रामीण	125	95.35	15.43				*df*= 248

व्याख्या–

उपयुक्र्त सारणी 6 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि प्राथमिक स्तर के शहरी महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का मध्यमान 93.82 तथा मानक विचलन 16.94 एवं प्राथमिक स्तर के ग्रामीण महिला शिक्षको की शिक्षण दक्षता का मध्यमान 95.35 तथा मानक विचलन 15.43 है। परिगणित टी अनुपात का मान 0.75 है मुक्तांश *(df)* 248 तथा 0.05 सार्थकता स्तर के लिए द्विपुच्छिय परिक्षण पर टी अनुपात का सारणी मान 1.97 है अर्थात परिगणित टी अनुपात सारणी मान से कम है अतः कहा जा सकता है 0.05 सार्थकता स्तर पर शून्य परिकल्पना स्वीकृत की जाती है, तथा मध्यमान में प्रदर्शित अन्तर सार्थक नहीं है।

प्रस्तुत उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रकल्पित किया गया कि प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण महिला शिक्षको की शिक्षण दक्षता में अन्तर होता है जो कि सार्थकता स्तर 0.05 पर अस्वीकृत की जाती है तथा शून्य परिकल्पना कि प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण महिला शिक्षको की शिक्षण दक्षता में अन्तर नही होता है, स्वीकृत की जाती है तथा परिणामतः कहा जा सकता है। प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में समानता है।

निष्कर्ष–

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुये–

- प्राथमिक स्तर के महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता पुरुष शिक्षकों की अपेक्षा उच्च है।
- प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में समानता है।
- प्राथमिक स्तर के शहरी महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता पुरुष शिक्षकों की अपेक्षा उच्च है।
- प्राथमिक स्तर के ग्रामीण महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता पुरुष शिक्षकों की अपेक्षा उच्च है।
- प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण पुरुष शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में समानता है।
- प्राथमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण महिला शिक्षकों की शिक्षण दक्षता में समानता है।

अध्ययन के परिणाम में पाया गया कि शहरी एवं ग्रामीण के साथ–साथ समस्त महिला शिक्षकों में शिक्षण दक्षता पुरुष शिक्षकों की अपेक्षा उच्च पाया गया। प्राप्त परिणाम के सापेक्ष पूर्व अध्ययन के परिणाम में **राठौड़, अनामिका (2014)** ने परिणाम में पाया कि महिला शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण दक्षता पुरूष शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों की तुलना में उच्च है। महिला शिक्षकों में शिक्षण दक्षता उच्च पाये जाने का कारण यह हो सकता है कि महिला शिक्षक अपने व्यवसाय के प्रति ईमानदार, निष्ठा एवं कर्त्तव्यपूर्ण कार्य करने के साथ–साथ अपने शिक्षण दक्षता पर विशेष ध्यान देती होगी। दक्षता आमतौर पर अत्यधिक व्यावसायिक प्रदर्शन से जुड़ी होती है और शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक की व्यावसायिक क्षमता और छात्र के प्रदर्शन के बीच एक सीधा संबंध होता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

- आचार्य, दीपा एवं शर्मा, नवीन (2020). शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों में कार्यरत शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि, अभिप्रेरणा तथा सृजनात्मकता पर प्रभाव का अध्ययन, *इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ क्रिएटिव रिसर्च एण्ड इनोवेटिव*, वॉ0 5, इश्शु–11, पृ0 1–8
- कुमार, विनोद (2013). अध्यापक प्रशिक्षण संस्थानों के छात्र–अध्यापकों की शिक्षण दक्षता पर एक अध्ययन, *सन्दर्भ (वैश्विक शैक्षिक परिप्रेक्ष्य).* 3(1). पृ0 9–18
- कुमारी, इन्दिरा एवं शर्मा, सरिता (2017). महाविद्यालयी वातावरण का भावी शिक्षकों की शिक्षण दक्षता पर प्रभाव का अध्ययन, *इण्टरनेशनल रिसर्च जर्नल ऑफ मैनेजमेण्ट सोशियोलॉजी एण्ड ह्युमिनिट्ज*, वॉ0 8, इश्शू–8, पृ0 208–218
- गोरे, रश्मि एवं कटियार, भावना (2012). माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत अन्तर्मुखी एवं बहिर्मुखी शिक्षकों की शिक्षण दक्षता का तुलनात्मक अध्ययन, एशियन जर्नल ऑफ एजुकेशन रिसर्च एण्ड टेक्नोलॉजी, वॉ0 2,(1). पृ0 127–136
- गौड़, रविकान्त (2020). प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत बी.एल.एड. चार वर्षीय और डी.एल.एड. द्विवर्षीय पाठ्यक्रम उत्तीर्ण शिक्षकों की शिक्षण दक्षता और शिक्षण प्रभावशीलता का शिक्षण प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों के सन्दर्भ में तुलनात्मक अध्ययन, *इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ क्रिएटिव रिसर्च थॉट*, वॉ0 8, इश्शु–12, पृ0 3299–3306
- चौहान (2004). प्राथमिक स्तर के सामान्य अध्यापकों एवं शिक्षा सहयोगियों की सामान्य शिक्षण दक्षता का अध्ययन, पी–एच0डी0, शिक्षा नागपुरः नागपुर विश्वविद्यालय।
- ठोंबरे, सुनिता (2015). शिक्षकों की कक्षा शिक्षण दक्षता का अध्ययन, राष्ट्रीय संगोष्ठी, शिक्षा, व्यवसाय, *प्रबन्ध एवं भारतीय जीवन मूल्य–एक चिंतन, उदगम विज्ञाति*, वॉ0 2, पृ0 81–87
- पुष्मम एवं सोन्दराजन (2004). उच्च प्राथमिक स्तर के विज्ञान अध्यापकों की शिक्षण दक्षता का अध्ययन, पी–एच0डी0, शिक्षा नगापुरः नागपुर विश्वविद्यालय।
- बाजवा (2003). दक्षता आधारित शिक्षण प्रशिक्षण व्यूह रचना की प्रभावशीलता का अध्ययन, पी–एच0डी0, शिक्षा दिल्ली : दिल्ली विश्वविद्यालय।

- मौर्य, प्रदीप कुमार (2008). माध्यमिक स्तर के शिक्षक व शिक्षिकाओं के संवेगात्मक बुद्धि का उनकी शिक्षण दक्षता पर प्रभाव का अध्ययन, लघु शोध प्रबन्ध, छत्रपति शाहूजी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर।
- राठौड़, अनामिका (2014). माध्यमिक स्तर के शिक्षक प्रषिक्षणार्थियों की शिक्षण दक्षता पर सूचना एवं सम्प्रेशण तकनीकी के प्रभाव का अध्ययन', *भारतीय शिक्षा शोध पत्रिका,* 33(2), जुलाई– दिसम्बर. 2014
- वर्मा, अरुण कुमार (2008). प्राथमिक विद्यालय, सरस्वती शिशु मन्दिर तथा पब्लिक स्कूल के संगठनात्मक वातावरण एवं शिक्षण दक्षता का तुलनात्मक अध्ययन, लघु शोध प्रबन्ध, छत्रपति शाहूजी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर।

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

पचमढ़ी कार्यशाला और संगीत नाटक पुरस्कार वजेता अलखनंदन

चन्द्र पाल
(शोधार्थी)
हैदराबाद वश्व वद्यालय
संपर्क-6393177918

वजय संह **1988** से स क्रय रंगमंच से जुड़े हैं। पछले दस सालों से आप 'संगीत नाटक अकादमी' में बतौर कंसल्टेंट सेवाएं दे रहे हैं। एम एस सत्थु, कीर्ति जैन और महेश दत्तानी के साथ रंगमंच कया है। हिन्दी, अंग्रेजी और पंजाबी में थएटर करते हैं। इसके अलावा चीन ,पा कस्तान और दुबई की रंगयात्रा भी की है। एफ एम गोल्ड में प्रोग्राम पेश करते हैं। बच्चों के नाटक लखे हैं। रे डयो में पंजाबी में समाचार पढ़ते हैं। रे डयो नाटक भी खूब कये हैं। नाटक सोलो वधा पर भी करते हैं (पाल गोमरा का स्कूटर)।

सर, पचमढ़ी कार्यशाला जो अलखनंदन जी की एक उपलब्धि भी है। उस कार्यशाला में आप भी थे। उस कार्यशाला ने अनेक वर्तमान रंगक र्मयों को प्रभा वत कया था। आज उनमें से कुछ लोग स क्रय रंगमंच कर रहे हैं (नीरज कुंदेर, आनंद मश्रा एम पी एस डी)।उस कार्यशाला से जुड़ा आपका अनुभव और अलखजी के वषय में आपकी राय-

अलखजी से जो मेरा परिचय हुआ था वो 2006 में संगीत नाटक अकादमी ने एक कार्यशाला का आयोजन करना था जो आवासीय कार्यशाला थी और उसके निर्देशक अलखनंदन को बनाया गया था तो उस आवासीय कार्यशाला का उद्देश्य था क उस राज्य के यानि मध्यप्रदेश के युवा रंगकर्मी हैं उनकी; क्यों क थएटर एक ऐसा ड सप्लिन है जिसमें टेक्निकल जो ट्रेनिंग है उसकी जरूरत पड़ती है और जैसे म्यूजिक और डांस में अलग तरह की ट्रेनिंग की जरूरत पड़ती है। उसी तरह थएटर में एक ओवरऑल प्रोडक्शन को सर्फ एक्टिंग के सहारे नहीं निकाला जा सकता। उसमें

मेकअप, कॉस्ट्यूम, लाइटिंग,सेट तो ऐसे में अगर कोई क कोई थएटर में आना चाहता है तो उसके लए जो तैयारियां चाहिए होती हैं, वो तैयारियां सब जगह मलती भी नहीं, वो एक्सपर्ट सब जगह मलते नहीं।हर बच्चा तो नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा में एड मशन ले नहीं सकता क्यों क यहाँ बीसेक सीटें हैं और वहाँ पर तीन साल रहना है बाकायदा तो जो शौ कया रंगमंच करते हैं और अपने क्षेत्र में रहकर अपनी कला को जिंदा रखे हुए हैं ले कन उनकी ट्रेनिंग नहीं पहुंच रही है; ऐसे लोगों के लए संगीत नाटक अकादमी ने एक वन मंथ वर्कशॉप का एक सस्टम कया हुआ है जिसमें जो लोग ज्यादा अच्छे निकलते हैं वो लोग बाद में सेकंड फेज में जाते हैं।75 दिन की वर्कशॉप में भी और फर उसके बाद उनमें से कुछ बच्चों को कसी गुरु के अंडर एक दो साल सीखने के लए भेजा जाता है,ले कन ये काफी दिनों से नहीं हो रहा है।उन दिनों हम फर्स्ट फेज की वर्कशॉप में मध्यप्रदेश में गये हुए थे और मध्यप्रदेश की वर्कशॉप में वर्कशॉप डायरेक्टर अलखनंदन जी को बनाया गया था और उसमें म्यूजिक सखाने भास्कर चन्दावर आये थे।माइम सखाने के लए गोहाटी से मोइनुल हक आये थे।एक्टिंग सखाने के लए कई लोग आये थे।आलोक(चटर्जी) भी उनमें शा मल थे।और वेस्टर्न थएटर क्या है इसके बारे में बताने के लए स चन तिवारी आये थे।इसके अलावा लाइटिंग सखाने के लए अशोक सागर भगत आये थे।और पुणे से एक नाम में भूल रहा हूँ मेकअप सखाने के लए आये थे तो इस तरह से देश के अलग -अलग हिस्सों से।चंद्रहास तिवारी ही शायद क्या नाम है उनका; जो अब नहीं रहे हैं।वो छऊ बॉडी मोमेंट वगैरह सखाने के लए भी भी आये थे।।मतलब मध्यप्रदेश के अच्छे जो सखाने वाले लोग थे और देश के अलग-अलग हिस्से से वो।तो अलखजी ने उस सबका एक ऐसा,उनलोगों को लेकर एक वर्कशॉप की परिकल्पना तैयार की थी जिसमें वो बच्चे याद भी याद करते हैं क उस तरह का जो इंटेंस एक महीने में हुआ था यहां से हम भोपाल शहर से दूर पहाड़ों में पचमढ़ी में चले गए थे ता क सब जगह से उनका सम्पर्क,एक तरीके से वो आपाधापी न रहे उनका ध्यान सर्फ परफॉर्मेंस में और सीखने में रहे और एकेडमी ने उनको दिन रात रखा भी उनके खाने पीने का भी अरेंजमेंट भी कया और इस तरह की फैकल्टी को सब फ्री ऑफ कॉस्ट उन लोगों के लए कया गया।अलखनंदन जी के बारे में तब जानने का सौभाग्य प्राप्त हुआ क वो कस तरह से सोचते हैं और सबसे अच्छी बात जो उनकी एक थी वो ये थी क वो अपने, अपने व्यक्तित्व के आभामंडल में रहने के बजाय उससे बाहर आकर उनलोगों से बात करते थे जो नए सीखने वाले लोग हैं।इसका ये नहीं की वो उनके स्तर तक आते थे ले कन

उनके साथ वो एक ऐसा भाव वो रखते थे जिसमें क लोग उन्हें सर कहने की बजाय दादा कहकर संबो धत करना ज्यादा पसंद करते थे। फर जब मैंने उनके बारे में और जाना तो मुझे पता चला क न सर्फ उन्होंने कुछ अच्छे नाट्यालेख लखे हैं बल्कि, साथ ही भारत भवन में उनदिनों महानिर्वाण जैसे प्रोडक्शन कये भी हैं और देश के बेहतरीन उस जमाने के ब व कारंत से लेकर चाहे वो नीलम मान संह चौधरी या कोई और ऐसे सब लोग जिनसे जो धीरे -धीरे उस जमाने में अपनी एक जगह कायम कर रहे थे और भारतीय रंगमंच में उभर रहे थे जिनके साथ वो काम कर चुके थे।उन में से वो एक थे और आप जानते ही हैं जब हमें आजादी मली तो उसके बाद हमको अपने एक रंगमंच की एक तलाश करनी थी जिसमें भारतीयता हो,भारतीय रंगमंच कसे कहा जाए और एक थएटर ऑफ रूट की परिकल्पना की गई थी,आपने ' थएटर ऑफ रूट' पढ़ा होगा;जिसकी संकल्पना का श्रेय संगीत नाटक अकादमी के एक स चव रहे उनको जाता है।नाम में एकदम से भूल रहा हूँ।उन्होंने ' थएटर ऑफ रूट'को ये सोचते हुए क हम अपनी जड़ों से जुड़ा रंगमंच,उसकी अ भव्यक्ति 'अर्बन थएटर' में भी हो उसको लेकर आये , तो उस जमाने में उस ' थएटर ऑफ रूट' से जो निकल कर आये,उनमें रतन थयम का नाम है।आज आप जिस भी बड़ी पर्सनाल्टी को थएटर के,रंगमंच के जितने भी बड़े डायरेक्टर को जानते हैं ।वो उस ' थएटर ऑफ रूट' निकल कर आये हैं।संगीत नाटक अकादमी ने इसके लए एक परिकल्पना की क डायरेक्टर के लए वर्कशॉप और डायरेक्टर्स को हेल्प करना जो ऐसी स्क्रिप्ट खोजें और ऐसा नाटक बनायें जिसमें लोक तत्त्वों का समंजन कया गया हो।और उन लोक तत्त्वों को आज की भाषा, आज के चैलेंजेस स्वीकार करते हुए परिवर्तित कया गया हो।तो अलखजी के 'उजबक राजा तीन डकैत'और कुछ बहुत कमाल की चीजें थीं(चन्दा बेड़नी);जो एक 'फोक ए लमेंट' से भरी हुई चीज है,ले कन उसमें आज के सारे सवाल मलते हैं।तो ये उन लोगों में से एक थे।और अपने काम को लेकर उन्हें कसी तरह का समझौता करना पसंद नहीं था।जो काम को वो चाहते थे,वैसा ही करते थे।उसकी क़्वा लटी में वो कसी तरह का समझौता करना पसंद नहीं करते थे और इस लए उनके साथ उस समय जुड़े थे वो उनसे हमेशा जुड़े रहे जैसे क मैं उनमें से एक हूँ।और जब भी दिल्ली आते थे तो लंच मेरे साथ ही कया करते थे।और अपनी पारिवारिक चंताएं भी मुझसे शेयर कया करते थे।और जब क मैं उस वर्कशॉप में एक महीना नहीं रहा था।बीच में मैं दिल्ली लौट आया था। फर मैं वा पस पचमढ़ी दुबारा गया था।तो ले कन इन सभी चीजों समय के दौरान उनसे जो आत्मीयता बनी।वो जीवन भर साथ बनी रही उनके।अंतिम

समय में भी उन्होंने कुछ दिन पहले मुझे कॉल कया था।अपने जाने के कुछ समय पहले ही और संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार जब उनको मला तब वे जब तक फंक्शन होता तब-तक उनका देहावसान हो चुका था।और रंगमंच को लेकर उनकी सीधी -सादी समझ वही थी क हमें अपनी जड़ों से जुड़ा थएटर करना ही होगा और उसी से हम अपनी दुनिया में प्रतिष्ठा को स्था पत कर सकते हैं।अगर हमने वैसा ही थएटर कया जैसा वेस्ट में होता है तो वो तो ऑलरेडी उनके पास है।जो उनके पास नहीं है वो उनको कैसे,वो अगर हम उनको दिखाएंगे तो वो लोग हमारी ओर शायद ज्यादा आकृष्ट होंगे। यानी वो जैसे वहाँ तमाम कई लोगों से उनके बाद और उनके दौरान कया होगा क शेक्सपीयर को या इन चीजों को वो जो वेस्ट की संकल्पनाओं से जो चीज आती हैं उनको बहुत हद तक भारतीयकरण करके प्रजेंट करने में वो ज्यादा यकीन करते थे।तो ये मुझे कहना था और इससे इतर तो और ज्यादा उनसे जो डसकशन होता था।वो इस बात पर होता था क हमारा जो थएटर है।वो एक ऐसा थएटर होना ही है जो बात करता हो,आज के सवालों को उठाता हो।अगर थएटर आज का नहीं है।आज के सवाल नहीं उठाता है तो वो थएटर नहीं है।तो जब भी मैं उनसे मलने उनके कमरे जाता था तो सरोद वादन सुनते हुए वो मुझे मलते थे और उनसे ही मैंने, मुझे भी आदत लगी और मैं अब भी कभी -कभी अलख दा को याद करते हुए सरोद वादन सुनता हूँ।खासतौर पर अली अकबर खाँ थे शायद जिनका वो सुना करते थे और जब मैं उनके पास बैठता था तो सरोद को सुनते हुए वो उसके थएट्रिकल मीनिंग के बारे में डस्कस करते थे क ये जो तार बजाये गए हैं इसका ये मतलब होता है।देखो अब इन दोनों में बातचीत जैसी चल रही है।इस तार ने ऐसा कहा तो उस तार ने वैसा कहा।उसने कहा भाई जीवन तो ऐसा ही है।जीवन ऐसा ही है ये शब्द मेरे मन में छप गए।और आज भी कुछ ऐसा होता है जो लगता है क अब ये क्या है?तो चारों तरफ देखने के बाद लगता है क जीवन ऐसा ही है।तो यही बात है।

चन्द्र पाल- पचमढ़ी में जो नाटक तैयार हुए उससे जुड़ा कोई आपका अनुभव और एक सवाल ऐसा है क अलखजी के अगर आपने कुछ नाटकों की परफॉर्मेंस देखी हो।कुछ उनके देखे हुए नाटक हैं तो उनके नाटकों में और उनके द्वारा निर्दे शत नाटकों में उनकी सामाजिक,राजनीतिक तथा धा र्मक सोच क्या है**?**कैसे वो अ भव्यक्त होती थी**?**

एक बात तो ये क वो वर्कशॉप प्रोडक्शन ओरिएंटेड नहीं थी।क्यों क छात्र पर प्रोडक्शन का प्रेसर न डाला जाय।वो सर्फ सीखने पर ध्यान दे।क्यों क वो फर वा पस जाकर अपने इलाके में तो थएटर करेगा ही।तो ये सोच मुझे संगीत नाटक अकादमी की बहुत अच्छी लगती थी क प्रोडक्शन ओरिएंटेड वर्कशॉप न होने के कारण स्टूडेंट्स, एक प्रोडक्शन की पॉ लटिक्स होती है उसमें न पड़कर जैसे मैं एक डायरेक्टर हूँ तो मैं पहले तो एक ऐसा नाटक चुनूँगा जो मुझे करना हो और फर उस नाटक को करने के लए मैं कतना डेमोक्रेटिक होऊंगा।उस वर्कशॉप में पार्टि सपेंट्स के बीच ये नहीं तो उसमें क्या होगा क मैंन रोल तो दो या तीन होंगे और तब छात्रों में एक खास कस्म की क मुझे ये रोल करना चाहिए या मैं इस रोल के लए उपयुक्त हूँ।ले कन वो उसका चेला है, उसने उसको दे दिया।एक तो उस चीज से बचाव हो जाता है और फर जो लोग अपने मन पसंद रोल नहीं पाते वो सीखने की भावना से ऊपर उठ जाते हैं।और फर कहते हैं क चलो यार सर्टि फकेट ही लेना है करलो जैसा भी करना है।तो वो हंड्रेड परसेंट वाले काम उसमें नहीं करते हैं। फर प्रोडक्शन दूसरी तरफ भी चला जाता है।यानी क आप क्लासेज बन्द कर देते हैं और रिहर्सल चालू कर देते हैं और आप कहते हैं यही सीखने का प्रोसेस है।वो सीखने का प्रोसेस है तो हर आदमी कर ही रहा था न।ये हर आदमी थएटर करता ही है और आगे करेगा ही।वो तो थोड़ा बहुत-थोड़ा बहुत करता हुआ ही होगा ही।ले कन हाँ यह जरूर करते थे क आ खरी चार पांच दिन स्टूडेंट्स को खाली छोड़ते या तीन चार दिन क अब आप अपनी तरफ से कुछ प्रेजेंट करना चाहें तो आपको अनुमति है।तो अलख दादा ने कहीं भी, कसी भी परफॉर्मेंस में हस्तक्षेप करने को इम्पोर्टेंस नहीं दिया।उन्होंने बच्चों को कहा आप जैसा चाहें वैसा करें।और कुछ बहुत अच्छे काम बच्चों ने कए।तो यानी क जिसका झुकाव थएटर,म्यूजिक की तरफ ही था तो उसने थएटर म्यूजिक से रिलेटेड ही अपना म्यूजिक पेश कया।बजाय इसके क वो नाटक में कुछ करता,पता नहीं क्या करता?हो सकता है उस नाटक की क्या संभावनाएं होती।तो एक तो ये बात थी।दूसरी ये बात है क मैंने उनके दो नाटक देखे थे।एक तो 'भगवदज्जुकीयम'।कुछ लोग इसे भगवत उज्जकम कहते हैं तो कुछ लोग इसे भगवदज्जुकीयम कहते हैं।उनके'चारपाई' कीमुझे बहुत अच्छी स्मृति है और उसमें 'चारपाई'में जिस तरीके की हमारी भारतीयता है।वर्तमान हमारे समाज का जो निम्न मध्यम वर्ग है।जो गरीबी से थोड़ा ऊपर उठा हुआ है ले कन निम्न मध्यम वर्ग में ही निम्न मध्यम वर्ग वाली साइड में झाँका है।ऐसे एक परिवार की कहानी है।वो कैसे एक छोटी सी जगह में रहते हैं।उसमें अपनी वैयक्तिकता, जो वैयक्तिकता है उनकी उसके

लए वो संघर्ष करते हैं।हर आदमी को अपना स्पेस चाहिए।चाहे आप कतना भी समाज का हिस्सा हों,कुछ हों ले कन आपका अपना एक वैयक्तिक स्पेस है;जिसमें आप रहते हैं,जिससे आप बाहर आते हैं वा पस उसमें एनर्जी लेकर फर बाहर आते हैं या बाहर से एनर्जी लेकर अंदर जाते हैं।ये परस्पर जो ये संवाद चलता है वैयक्तिकता में और सामाजिकता में और उसकी जो घुटन है।उसे न मल पाने का जो तनाव है और उसकी इच्छायें हैं।वो सब उसमें परिल क्षत होती हैं।तो वो सामाजिक वद्रूपताओं की तरफ ये भी इशारा है क हमने एक दूसरे के कमरों में झांकने की बहुत जल्दी होती है।ले कन इसके बावजूद हम चाहते हैं क कोई हमारे कमरे में न झाँक पाए और फर भी कुछ लोग न चाहते हुए कुछ चीजें हमारे सामने आ जाती हैं।और हम चाहकर भी उन्हें अनदेखा नहीं कर पाते।और उस समय जब एकदम से मानलीजिए क आपके बाथरूम का दरवाजा कोई खोल दे तो आपको भी कैसा लगेगा?और जो अंदर है उसको भी कैसा लगेगा?वो जो दोनों तरह की स्थितियां हैं और जो दोनों से उपजी फ्रस्ट्रेशन है वो उसको अपनी प्रोडक्शन में निकालते थे।तो 'चारपाई' के बारे में तो यही है।अच्छा वो स्क्रिप्ट भी ऐसी क हर एक्टर को अपना- अपना देखना देखना पूरी तफसील से मलता है।एक बुजुर्ग है एक घर का तो कस तरह की चीजें हैं।आपने 'चारपाई'(रामेश्वर प्रेम) पढ़ा तो जरूर होगा।बस यही है। फलहाल तो मैं इतना ही कहूंगा।

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

तुलसी मन–मानस में राम

डॉ0 अरुण कुमार मिश्र
असि0 प्रोफेसर, हिन्दी
एम0डी0पी0जी0 कॉलेज, प्रतापगढ़

सारांश :

भारतीय साहित्य एवं संस्कृति परम्परा में मर्यादाओं का सांगोपांग निर्वाह करने वाले पुरुषोत्तम श्रीराम की दशरथनन्दन, कौशल्यानंदवर्धन के रूप में प्रतिष्ठा है। तुलसी तथा वाल्मीकि कृत रामायण में राम का स्वरूप तथा चरित्र विधिवत वर्णित है। वाल्मीकि के राम एक दिव्य तथा अलौकिक महापुरुष के रूप में प्रतिष्ठित हैं जबकि तुलसी के मन–मानस के राम साक्षात् परब्रह्म स्वरूप है। तुलसी के राम परब्रह्म स्वरूप में धरती से दुष्टों का संहार करने तथा धर्म की पुनर्प्रतिष्ठा करने के लिए अवतरित होते है और अपने भक्तों तथा सज्जन महापुरुषों के समस्त संताप को हरते हैं। इस अर्थ में राम भक्त वत्सल राम हो जाते है। राम शरणागत की रक्षा करते हैं और शरणागतवत्सल हैं। मर्यादाओं की सम्यक् पालना के कारण राम मर्यादा पुरुषोत्तम है। प्रजाहितकारी राम प्रजावत्सल राम हैं। शील सिन्धु राम पतितोद्धारक राम के रूप में पतितों का उद्धार करते हैं। तुलसी मन–मानस में राम एक परमवीर तथा रणकुशल राम है जो दुष्टों का संहार करते हैं। राम अत्यंत कृपालु है और अपने अनुजों तथा सखाओं के प्रिय है। प्रस्तुत लेखक में तुलसी के मन मानस में बसने वाले राम की विभिन्न स्वरूपों में मीमांसा की गयी है।

तन की दुति स्याम सरोरुह लोचन कंज की मंजुलताई हरैं।
अति सुन्दर सोहत धूरि भरे छवि भूरि अनंग की दूरि धरैं।।
दमके दँतिया दुति दामिनि ज्यौं किलकै कल बाल विनोद करैं।
अवधेश के बालक चारि सदा तुलसी मन–मंदिर में विहरैं।।[1]

सन्त तुलसी के मन मंदिर में बसने वाले राम की अद्भुत छवि साधकों, भक्तों तथा मोक्ष की इच्छा रखने वाले दिव्य पुरुषों के लिए अमृत के समान है। इस रामकथामृत का पान करके मनुष्य सहज ही दिव्य धाम का भागी हो जाता है। सन्त तुलसी के मन–मानस में बसने वाले राम अद्भुत शोभा तथा गुण के धाम हैं। वे समस्त सुखों की खान हैं, वे समस्त संसार को विश्राम प्रदान करने वाले हैं–

सो सुख धाम राम अस नामा। सकल लोक दायक विश्रामा।''[2]

महर्षि वाल्मीकि ने राम को एक ऐसे राजकुमार के रूप में चित्रित किया है जो कि दैवी शक्तियों का स्वामी है पर ईश्वर के सदृश नहीं है। गोस्वामी तुलसीदास के राम साक्षात् परब्रह्म हैं। यह वही ब्रह्म है जो भगवान शिव के मन–मानस में बसता है। यह वही ब्रह्म है जो काग भुसुंडि के मानसरोवर का हंस है–

जो भुसुंडि मन मानस हंसा। सगुन अगुन जेहि निगम प्रसंसा।।[3]
राम करौं केहि भाँति प्रसंसा। मुनि महेस मन–मानस हंसा।।[4]

तुलसी के मन में बसने वाले राम भगवान शिव के भी मन–मानस में बसते है। इसीलिए भगवान शिव ने समस्त रघुनाथ गाथा को रचकर अपने मन–मानस में रख लिया और सही समय उपस्थित होने पर उसे आदि जगदम्बा माता पार्वती को सुनाया।

रचि महेस निज मानस राखा। पाइ सुसमय सिवा सन भाषा।।[5]

तुलसी के आराध्य राम भगवान शिव के भी आराध्य है। इसीलिए भगवान शिव ने राम की कल्याणकारी तथा समस्त जगत को पवित्र करने वाली रामकथा माता पार्वती को सुनाई।

धन्य धन्य गिरिराज कुमारी। तुम्ह समान नहिं कोउ उपकारी।।
पूछेउ रघुपति कथा प्रसंगा। सकल लोक जगपावनि गंगा।।[6]

सन्त तुलसी ने भी अपनी रामकथा में वही कथानक समाहित किया है जो भगवान शिव ने माता पार्वती से कहा है। इसीलिए तुलसी के राम तथा शिव के राम की समस्त विशिष्टतायें समान हैं।

गोस्वामी जी की मान्यता के अनुसार इस अनादि सृष्टि में राम का अवतार बराबर होता रहता है और करोड़ों रामायण के समान उस पर ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं सिर्फ उनमें कल्प के अनुसार भेद रहता हैं–

नाना भाँति राम अवतारा। रामायन सत कोटि अपारा।।
कलप भेद हरि चरित सुहाये। नाना भाँति मुनीसन गाये।।[7]

यद्यपि राम के अवतार के अनेकों हेतु हो सकते हैं तथापि जो सबसे प्रमुख कारण है वह है संसार में धर्म की स्थापना। इस धरती पर जब–जब धर्म का ह्रास होता है तब–तब ईश्वर विविध शरीरों को धारण करके पृथ्वी से संत महापुरुषों के दुःख का निवारण करते हैं तथा धर्म की पुनर्स्थापना करते हैं।

जब–जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हिं असुर अधव अभिमानी।।
तब–तब धरि प्रभु विविध शरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।
असुर मारि थापहिं सुरन्ह राखहिं निज श्रुति सेतु।
जग विस्तारहिं विसद जस राम जनम कर हेतु।।[8]

तुलसी के राम अनेकानेक विशिष्टताओं से परिपूर्ण हैं। रामचरितमानस में स्थान–स्थान पर तुलसी के मन–मानस में बसने वाले राम की विशिष्टतायें वर्जित हैं।

तुलसी के राम : साक्षात् परब्रह्म राम :

तुलसी के अतिरिक्त विभिन्न रामकथा के कवियों तथा लेखकों ने राम को विभिन्न रूपों में वर्णित किया है। कुछ ने राम को एक राजपुत्र के रूप में चित्रित किया है तो कुछ ने ऐसे वीर पुरुष के रूप में व्याख्यायित किया है जो क्षत्रियोचित समस्त गुणों में पारंगत है। किन्तु सन्त तुलसी इस समस्त महापुरुषों ने भिन्न मत रखते हुए श्रीराम को विष्णु के अवतार ही नहीं वरन् साक्षात् परब्रह्म परमेश्वर के रूप में निरूपित किया है। तुलसी के राम व्यापक हैं। वे अवयव रहित, इच्छारहित, अजन्मा, निर्गुण, बिना नाम के और बिना राम के हैं। भक्तों के लिए तुलसी के राम भगवान हैं तथा अनेकों प्रकार के चरित्र करते है–

व्यापक अकल अनीह अज निर्गुन नाम न रूप।
भगत हेतु नाना विधि करत चरित अनूप।।[9]

तुलसी के राम महज विष्णु के अवतार ही नहीं बल्कि ऐसे परब्रह्म है जिनके अंश से शिव, ब्रह्मा और विष्णु उत्पन्न होते है। राम आनन्दस्वरूप तथा उपाधिहीन हैं। वेद भी उनका ज्ञान नहीं कर पाते और नेति–नेति कहकर रूक जाते है।

नेति नेति जेहिं वेद निरुपा। निजानंद निरुपाधि अनूपा।।
सेमु विरंचि विष्णु भगवाना। उपजहिं जासु अंस ते नाना।।[10]

राम का स्वरूप परम लावण्मयी है। महर्षि वाल्मीकि के द्वारा राम का जो स्वरूप वर्णन किया गया है; उससे भी उनकी परब्रह्मता प्रकट होती है। वाल्मीकि राम के स्वरूप को समझाते हुए कहते हैं कि हे राम! आपका यह स्वरूप वाणी से अगोचर है अर्थात् वाणी के द्वारा वर्णित नहीं किया जा सकता। यह बुद्धि से परे तथा अपार है। वेद भी नेति–नेति कहकर आपका स्वरूप वर्णित करने में समर्थ नहीं हो पाते।

राम सरूप तुम्हार बचन अगोचर बुद्धि पर
अविगत अकथ अपार नेति नेति नित निगम कह।।[11]

श्रीराम समस्त संसार के दृष्टा हैं। श्रीराम ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश को भी नचाने वाले है। हे राम! जब ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश भी आपके स्वरूप को नहीं समझ पाते तो फिर सामान्य लोग आपको कैसे जान पायेंगे ? आपको वही जान पाता है जिसे आप स्वयं ज्ञात करा देते है। आपके जो अनन्य भक्त हैं वे आपकी अनुपम कृपा के द्वारा आपका कुछ ज्ञान कर पाते है और आपको जानते ही आपमय हो जाते हैं अर्थात् वे समस्त संसार के बन्धनों से मुक्त होकर परम धाम को प्राप्त कर लेते हैं।

जगु पेखन तुम देखनिहारे। विधि हरि सम्भु नचावनि हारे।।
तेउ न जानहिं मरम तुम्हारा। और तुम्हहिं को जान निहारा।।
सोइ जानइ जेहिं देहु जनाई। जानत तुम्हहिं तुम्हइ होइ जाई।।
तुम्हरिहि कृपा तुम्हहिं रघुनन्दन। जानहिं भगत भगत उर चन्दन।।
चिनानन्द मयदेव तुम्हारी। विगत विकार जान अधिकारी।।[12]

महर्षि वाल्मीकि के अनुसार राम ने सन्तों के कार्य के लिए नर शरीर धारण किया है और प्राकृत राजाओं की तरह ही कहते और करते है। हे राम! आपके चरित्रों को देख और सुनकर मूर्ख लोग मोहित हो जाते हैं और ज्ञानी जनों को अपार आनन्द की प्राप्ति होती है–

नर तन धरेहु सन्त सुरकाजा। कहहु करहु जस प्राकृत राजा।।
राम देखि सुनि चरत तुम्हारे। जड़ मोहहिं बुध होहि सुखारे।।[13]

तुलसीमन–मानस में बसने वाले राम स्वेच्छापूर्वक गाय, ब्राह्मण तथा सन्तों के उद्धार के लिए ही मनुष्य शरीर धारण करते है। माता कौशल्या की गोंद में जो राम अवतरित हुए हैं वह वही माया तथा इन्द्रियों से परे, सर्वव्यापी, निर्गुण–निराकार अजन्मा परब्रह्म ही हैं।

विप्र धेनु सुर सन्त हित लीन्ह मनुज अवतार
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार।।
व्यापक ब्रह्म निरंजन, निर्गुन विगत विनोद।
सो अज प्रेम भगति बस, कौशल्या की गोद।।[14]

श्रीराम के जन्म के समय समस्त देवतागण आकाश से पुष्पवर्षा करके श्रीराम की स्तुति गान करते हैं। धर्मग्रन्थों में इन देवताओं को परम स्वार्थी कहा गया है। इनका राजा इन्द्र तो परम चतुर व कुटिल कहा गया है। श्रीराम जी के द्वारा असुर विनाश की बात सभी देवता जान रहे हैं। इसीलिए भगवान को परम शक्तिशाली समझकर ही उनकी वन्दना करते हैं।

सुर समूह विनती करि पहुँचे निज निज धाम।
जगनिवास प्रभु प्रकटे अखिल लोक विश्राम।।[15]

भगवान शिव ने माता पार्वती को राम के स्वरूप को समझाते हुए कहा है कि–

राम सच्चिदानन्द दिनेशा। नहिं तहँ मोह निशा लवलेसा।।
सहज प्रकासरूप भगवाना। नहिं तहँ पुनि विज्ञान विहाना।।
हरष विषाद ज्ञान अज्ञाना। जीव धर्म अहमिति अभिमाना।।
राम ब्रह्म व्यापक जग जाना। परमानन्द परेस पुराना।।
पुरुष प्रसिद्ध प्रकाश निधि, प्रगट परावर नाथ।
रघुकुलमनि मम स्वामि सोई, कहि शिव नायउ माथ।।[16]

अर्थात् श्रीराम सच्चिदानंदस्वरूप सूर्य हैं। मोह रूपी रात्रि वहाँ पर किसी भी प्रकार का प्रभाव नहीं डाल पाती है। राम स्वभावतः प्रकाशमान हैं। अज्ञान रूपी अंधकार का सर्वथा अभाव होने के कारण वहाँ विज्ञान रूपी प्रातः काल भी नहीं होता। राम तो साक्षात् व्यापक ब्रह्म, परमानन्दस्वरूप परात्पर और पुराण पुरुष है इसलिए उन्हें हर्ष, शोक, ज्ञान, अज्ञान, अहंकार आदि अभिमान जैसे सामान्य मनुष्यों के धर्म (लक्षण) उन्हें प्रभावित नहीं कर पाते। श्रीराम ऐसे दिव्य पुरुष, प्रकाश के भण्डार हैं जो समस्त रूपों में प्रकट होते हैं। जो जीव, जगत तथा माया सभी के स्वामी हैं, वे ही रघुकुलमणि श्रीराम मेरे स्वामी हैं। ऐसा कहकर भगवान शिव ने उन्हें प्रमाण किया।

तुलसी के मनमानस में बसने वाले राम का ब्रह्मत्व स्वरूप स्वयं उनके गुरुदेव महर्षि वशिष्ठ ने भी सत्यापित किया है। रामचरितमानस के उत्तरकाण्ड में गुरु वशिष्ठ ने राम को अपने रघुकुल का पौराहित्य स्वीकार करने की कथा का वर्णन किया है–

राम सुनहु मुनि कह कर जोरी। कृपासिंधु विनती कुछ मोरी।।
देखि देखि आचरन तुम्हारा। होत मोह मम हृदय अपारा।।
महिमा अमिति वेद नहि जाना। मैं केहि हेतु कहँउ भगवाना।।
उपरोहित्य कर्म अति मन्दा। वेद पुरान सुमृति कर निन्दा।।
जब न लेउँ मैं तब विधि मोहीं। कहा लाभ आगे सुत तोहीं।।
परमात्मा ब्रह्म नर रूपा। होइहैं रघुकुल भूषण भूपा।।[17]

स्वयं महाराज श्री दशरथजी ने भी राम को ब्रह्म प्रख्यापित किया है–

सुनहु तात तुम्ह कहुँ मुनि कहहीं। राम चराचर नायक अहहीं।।[18]

भगवान शिव माता पार्वती से कहते है कि हे पार्वती! जिसकी कृपा से समस्त भव–भय समाप्त हो जाते हैं, वही कृपालु श्रीराम हैं। जिसका आदि तथा अन्य किसी को भी ज्ञात नहीं है। वेदों ने अपने से अनुमान करके जो राम के स्वरूप का वर्णन किया है उसके अनुसार वह निर्गुण तथा निराकार स्वरूप में बिना पैर के चलता है, बिना कान के सब सुनता है, बिना हाँथ के समस्त कार्य संपादित करता है, मुख के न होते हुए भी समस्त रसों का रसास्वादन करता है और बिना वाणी के ही बहुत बड़ा वक्ता है। वेद इस प्रकार जिसका वर्णन करते हैं वही भक्तवत्सल, दशरथ नंदन श्रीराम अयोध्या के स्वामी तथा मेरे ईष्ट हैं। इस प्रकार तुलसी मूल रूप से ब्रह्म के निर्गुण स्वरूप का प्रतिपादन करते है–

जासु कृपा अस भ्रम मिटि जाई। गिरिजा सोई कृपाल रघुराई।।
आदि अन्त कोउ जासु न पावा। मति अनुमानि निगम अस गावा।।
बिनु पद चलइ सुनई बिनु काना। कर बिनु करम करइ विधि नाना।।
आनन रहित सकल रस भोगी। बिनु बानी वक्ता बड़ जोगी।।

तन बिनु परस नयन बिनु देखा। ग्रहइ घ्रान बिनु बास असेषा।।
असि सब भाँति अलौकिक करनी। महिमा जासु नाइ नहिं बरनी।।
जेहिं इमि गावहि वेद बुध जाहिं धरहिं मुनि ध्यान।
सोइ दसरथ सुत भगत हि कोसलपति भगवान।।[19]

राम के ब्रह्मत्व रूप का सत्यापन मन्दोदरी ने रावण के भी सम्मुख किया है। राम विश्व रूप हैं अर्थात् यह सारा विश्व उन्हीं का रूप है। वेद उनके प्रत्येक अंग–अंग में अलग–अलग लोकों की कल्पना करते हैं। पाताल उन विश्वरूप श्री हरि के चरणकमल हैं, ब्रह्मलोक सिर है। उनके बीच के समस्त अंग प्रत्यंग पर अन्यान्य लोक बसते हैं। भयंकर काल उनकी भृकुटि है जिसके चलने से सृष्टि लय हो जाती है, सूर्य जिनके नेत्र हैं और बादलों का समूह उनके केश हैं, अश्विनी कुमार जिनकी नासिका हैं, जिनके पलक गिरने से रात तथा दिन संभव होते हैं, दसों दिशायें उनके कान हैं, वायु उनकी श्वास है तथा वेद उनकी वाणी है, लोभ जिनका अधर हैं, स्वयं यमराज उनके भयानक दाँत हैं, माया हँसी है, दिगपाल भुजाये हैं, अग्नि मुख है, वरुण जीभ हैं, उत्पत्ति, पालन तथा प्रलय जिनकी क्रियायें हैं, अठारह प्रकार की असंख्य वनस्पतियाँ उनके रोम हैं, पर्वत अस्थियाँ है, नदियाँ नसों का जाल हैं, समुद्र पेट है और नरक नीचे की इन्द्रियाँ है। इस प्रकार राम का स्वरूप विराट विश्वस्वरूप है जिसकी कल्पना नहीं हो सकती। भगवान शिव ही उन विराट पुरुष के अहंकार तथा ब्रह्मा जी उनकी बुद्धि है। चन्द्रमा मन तथा भगवान विष्णु उनके चित्त हैं, वही चराचर रूप राम ने मनुष्य शरीर धारण किया है।

विश्वरूप रघुवंशमनि, करहु बचन विस्वास।
लोक कल्पना वेद कर अंग अंग प्रति जासु।।[20]
पद पाताल शीश अज धामा। अपर लोक अंग–अंग विश्रामा।।
भृकुटि विलास भयंकर काला। नयन दिवाकर कच घनमाला।।
जासु घ्रान अस्विनी कुमारा। निसि अरु दिवस निमेष अपारा।।
श्रवण दिसा दस बेद बखानी। मारुत स्वास निगम निज बानी।।
अधर लोभ जम दसन कराला। माया हास बाहु दिगपाला।।
आनन अनल अम्बुपति जीहा। उतपति पालन प्रलय समीहा।।
रोम राजि अष्टादस भारा। अस्थि शैल सरिता नस जारा।।
उदर उदधि अधगो जातना। जगमय प्रभु का बहु कल्पना।।
अहंकार सिव बुद्धि अज मन ससि चित्त महान।
मनुज बास सचराचर रूप राम भगवान।।[21]

श्रीराम जी को वनमार्ग में देखकर जब सती भ्रमित हो जाती है तब माता पार्वती के द्वारा प्रश्न पूछे जाने पर उनके भ्रम का निवारण करते हुए भगवान शिव ने कहा–

जासु नाम भ्रम तिमिर पतंगा। तेहि किमि कहिय विमोह प्रसंगा।।[22]

अपनी बात को और अधिक स्पष्ट करते हुए भगवान शंकर कहते है कि विषय, इन्द्रियाँ, इन्द्रियों के देवता तथा जीवात्मा ये सब की सहायता से ही एक चैतन्य होते हैं पर इन सबके परम प्रकाशक एवं चेतना प्रदान करने वाले अयोध्या नरेश श्रीराम ही है। इस प्रकार जगत प्रकास्य है और उसे प्रकाशित करने वाले श्रीराम हैं–

विषयकरन सुर जीव समेता। सकल एक ते एक सचेता।।
सबकर परम प्रकासक जोई। राम अनादि अवधपति सोई।।
जगत प्रकास्य प्रकासक रामू। मायाधीस ग्यान गुन धामू।।[23]

इस प्रकार मानस में ऐसे कई प्रसंग है जिनसे यह प्रमाणित हो जाता है कि तुलसी मन–मानस में बसने वाले राम साक्षात् परमब्रह्म है। यही स्वरूप भगवान शिव के मन–मानस में भी विराजता है।

राम ब्रह्म परमारथ रूपा। अविगत अकथ अनादि अनूपा।।
सकल विकार रहित गत भेदा। कहि नित नेति निरुपहिं वेदा।।[24]

ऐसा ही राम का ब्रह्मस्वरूप सदैव तुलसी के मन मानस में अवस्थित है।

तुलसी के राम : भक्त वत्सल राम :

सन्त तुलसी ने राम का चित्रण भक्त वत्सल के रूप में किया है। तुलसी की अमर कृति रामचरितमानस का मुख्य आधार भक्ति ही है। रामचरितमानस में बहुत सारे भक्त पात्र विद्यमान हैं जिन्होंने केवल भक्ति का वरदान माँगा। वस्तुतः रामचरितमानस में वर्णित समस्त पात्र भक्त ही कहे जा सकते है चाहे उन्होंने प्रेमभाव से राम का स्मरण किया हो अथवा बैर भाव से। राम पक्ष के पात्रों ने राम को प्रेमभाव से तो रावण–पक्ष के पात्रों ने बैर भाव से राम की भक्ति की। राम वास्तव में अपने भक्तों के लिए ही अवतार ग्रहण करते है। वे स्वयं संकटों का वरण कर अपने भक्तों को सुख प्रदान करते हैं।

राम भगत हित नर तनु धारी। सहि संकट किये साधु सुखारी।।[25]

राम वास्तविक रूप से भक्तवत्सलता की प्रतिमूर्ति हैं। उनका ध्यान अपने भक्तों की कमियों पर नहीं जाता। जिस अपराध के कारण उन्होंने बालि का बध किया था वही अपराध फिर सुग्रीव ने भी किया और श्रीराम ने उस पर ध्यान नहीं दिया। वही अपराध फिर विभीषण ने भी किया किन्तु राम ने उसे भी ध्यान में नहीं रखा।

रहति न प्रभु चित चूक किए की। करत सुरति सयबार हिये की।।
जेहिं अध बधेउ व्याध जिमि बाली। फिरि सुकंठ सोइ कीन्हि कुचाली।।
सोइ करतूति विभीषण केरी। सपनेहुं सोम राम हिय हेरी।।[26]

रामचरितमानस में अनेकों भक्तों का उल्लेख है। भरतजी व हनुमानजी तो रामजी के अनन्य भक्त है। समस्त ऋषिगण भी राम के भक्त हैं। रामकाज के निमित्त जटायू जैसा पक्षी भी अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया और वरदान के रूप में सिर्फ भगवान की अविरल भक्ति को ही माँगा।

अविरल भगति माँगिवर गीध गयउ निज धाम।
तेहिं की क्रिया जथोचित निज कर कीन्हीं राम।।[27]

जिस वृक्ष के नीचे रघुनाथ राम विराजमान हैं उसी वृक्ष की डालियों पर बन्दर उछलकूद मचा रहे हैं। किन्तु श्रीराम बन्दरों का सहज स्वभाव समझकर उनसे हर्षित हो रहे हैं और उन्हें अपने समान बना रहे हैं।

प्रभु तरु तर कपि डार पर ते किये आपु समान।
तुलसी कहूँ न राम से साहिब सील निधान।।[28]

श्रीराम भक्त के मन की गति जान लेते हैं। उसकी भावनाओं को पूरा सम्मान देते है। मिथिला में लक्ष्मण जी के मन में नगर–भ्रमण की लालसा उत्पन्न होने पर उनके मन में भक्तवत्सलता दृष्टिगोचर होती है–

लखन हृदय लालसा विसेषी। जाइ जनकपुर आइय देखी।।
प्रभु भय बहुरि मुनिहिं सकुचाहीं। प्रकट न करहिं मनहिं मुसुकाही।।
राम अनुज मन की गति जानी। भगत बछलता हिय हुलसानी।।[29]

श्रीराम का एक अखण्ड भक्त केवट है। गंगातट पर खड़े राम लक्ष्मण को गंगा पार कराने से इन्कार कर रहा था। किन्तु विविध संवाद करने के बाद गंगापार करता है। श्रीराम के उतराई देने पर कुछ भी ग्रहण करने से मना करता है। उनके अनन्य प्रेम की पराकाष्ठा देखकर प्रभु ने उसे अपनी अविरल व विमल भक्ति का वरदान प्रदान किया।

बहुत कीन्ह प्रभु लखन सिय नहिं कछु केवट लेइ।
विदा कीन्हि करुनायतन भगति विमल वर देइ।।[30]

तुलसी के भक्तवत्सल राम अपने प्रति किये गये अपराध से रूष्ट नहीं होते है, किन्तु यदि कोई उनके भक्त के प्रति अपराध करता है तो वह श्रीराम की क्रोध रूपी अग्नि में जल जाता है। इस तथ्य को दुर्वासा ऋषि भी जानते हैं–

सुनु सुरेस रघुनाथ सुभाऊ। निज अपराध रिसाहिं न काउ।।
जो अपराधु भगत कर करई। राम रोष पावक सो जरई।।
लोकहुँ वेद विदित इतिहासा। यह महिमा जानहिं दुर्वासा।।[31]

राम की भक्तवत्सलता चतुर्दिक दृष्टिगोचर होती है। वनवासकाल में सभी ऋषियों–मुनियों के आश्रमों में जा–जाकर उन्होंने सभी को कृतार्थ किया। शबरी जैसी भक्त शिरोमणि को दर्शन दिया। सुग्रीव तथा विभीषण को राज्य श्री प्रदान की। राम ने हनुमान जी से मिलने पर उन्हें अपनी भक्तवत्सलता से कृतकृत्य किया।

अस कहि परेउ चरन अकुलाई। निज तनु प्रकटि प्रीति उर छाई।।
तब रघुपति उठाइ उर लावा। निज लोचन जल सीचि जुड़ावा।।
सुनु कपि जिय मानसि जनि ऊना। तै मम प्रिय लछिमन ते दूना।।[32]

अपनी भक्त–प्रेम की पराकाष्ठा के रूप में श्रीराम अयोध्या में आये हुए वानरों को अपने तथा अनुजों के द्वारा वस्त्राभूषण पहनाकर सभी को उनके राज्यों की ओर विदा करते है। श्रीराम के यह समस्त आचरण उनके भक्त हितकारी स्वरूप की प्रतिष्ठा करते है। ऐसे ही राम का भक्तवत्सल स्वरूप तुलसी के मनमानस में सदैव विराजता है।

तुलसी के राम : शरणागतवत्सल राम :

तुलसी के राम शरणागत वत्सल हैं। वे अपने सम्मुख आये हुए प्राणी को अपना बना लेते हैं। भरतजी ने राम को शरणागतवत्सल घोषित किया है। पिता द्वारा दिया गया अवध का साम्राज्य त्यागकर भरतजी राम को मनाते जाते समय अपने मन में विचार करते है–

जद्यपि मैं अनभल अपराधी। भइ मोहिं कारन सकल उपाधी।।
तदपि सरन सनमुख मोहिं देखी। छमि सब करिहहिं कृपा विसेषी।।
सील सकुच सुठि सरल सुभाऊ। कृपा सनेह सदन रघुराऊ।।[33]

राम की शरणागत वत्सलता उस समय पूरी तरह से स्पष्ट हो जाती है जब रावण का भाई साधुमति विभीषण श्रीराम की शरण में आता है। वानरराज सुग्रीव की असहमति के बाद भी राम ने उसे अपनी शरणागति प्रदान की। राम ने सुग्रीव से कहा–

सखा नीति तुम नीकि विचारी। मम पन सरनागत भयहारी।।
सुनि प्रभु बचन हरष हनुमाना। सरनागत वच्छल भगवाना।।[34]

श्रीराम ने सुग्रीव से कहा कि जो मनुष्य अपने अहित का अनुमान करके शरण में आये हुए का त्याग कर देते हैं वे क्षुद्र तथा पापमय होते है और उन्हें देखने से भी हानि होती है।

सरनागत कहुँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि।
ते नर पॉवर पापमय तिन्हहिं विलोकत हानि।।[35]

जिसे करोड़ों ब्राह्मणों की हत्या का पाप लगा हो, शरण में आने पर मैं उसका भी त्याग नहीं करता। जीव जैसे ही मेरे सम्मुख आता है उसके करोड़ों जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं। पापी का यह सहज रनुभाव होता है कि उसे मेरा भजन कभी अच्छा नहीं लगता। यदि विभीषण दुष्ट हृदय होता तो क्या मेरे सम्मुख आ पाता। जो मनुष्य निर्मल मन का होता है वही मुझे प्राप्त कर सकता है कि मुझे छलछिद्र तथा कपट हीं सुहाते।

कोटि विप्र बध लागहिं जाहू। आए सरन तजउं नहिं ताहू।।
सनमुख होइ जीव मोहिं जबहीं। जनम कोटि अधनासहिं तबही।।
पापवन्त कर सहज सुभाऊ। भजनु मोरि तेहिं भाव न काऊ।।
जौ पे दुष्ट हृदय सोइ होई। मोरे सन्मुख आव की सोई।।
निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा।।
जौ सभीत आवा सरनाई। रखिहउँ ताहि प्रान की नाई।।[36]

रावण को समझाते हुए विभीषण ने राम के इसी गुण का वर्णन किया था–

सरन गये प्रभु ताहु न त्यागा। विश्वद्रोह कृत अध जेहिं लागा।।[37]

रामचरितमानस में ऐसे कई प्रसंग है जिनसे राम की शरणागत वत्सलता के भाव दृष्टिगोचर होते हैं। ऐसे ही शरणगत वत्सल राम तुलसी के मन मानस में रमते हैं।

तुलसी के राम : मर्यादापुरूषोत्तम राम :

गोस्वमी तुलसी के मन मानस में बसने वाले राम मर्यादा की प्रतिमूर्ति है। जन्म से लेकर अन्त तक राम ने कभी भी मर्यादा का हनन नहीं किया। उनका शील स्वभाव तो जग विदित है। राम का जीवन लोक में आदर्श और मर्यादा की प्रतिष्ठा करता है। जब–जब प्राणियों की स्वाभाविक मर्यादायें विनष्ट हो जाती हैं तब–तब ईश्वर किसी न किसी रूप में अवतरित होकर मर्यादा की प्रतिस्थापना करते हैं। राम का सम्पूर्ण जीवन चरित्र मर्यादा के आवरण में आबद्ध रहा। ऐसे कई प्रसंग हैं जिनमें राम की अद्भुत मर्यादा दृष्टिगोचर होती है।

पुष्प बाटिका प्रसंग में श्रीराम तथा लक्ष्मण गुरु पूजा के निमित्त पुष्प लेने जाते हैं। वहाँ यह मर्यादा है कि किसी की भी वस्तु बिना उससे पूंछे नहीं लेनी चाहिए। राम ने वहाँ भी मर्यादा का पालन किया–

चहुँ दिसि चितइ पूँछि मालीगन। लगे लेन दल फूल मुदित मन।।[38]

जानकी–सीता अद्भुत स्वरूप को देखकर सीता के रूप–लावण्य का वर्णन करते हुए श्रीराम सहज स्वभाव से लक्ष्मण जी से कहते हैं कि लक्ष्मण ऐसा प्रतीत होता है कि मानो कामदेव ने विश्व विजय की अभिलाषा से दुंदुभी बजा रहा है अर्थात मेरे मन को भी प्रभावित कर ना चाहता है–

कंकन किंकिन नूपुर धुनि सुनि। कहत लखन सन राम हृदय गुनि।
मानहुं मदन दुन्दुभी दीन्हा। मनसा विश्व विजय कहँ कीन्हा।।[39]

सीता के सम्बन्ध में बताते हुए राम लक्ष्मण से कहते है कि यही जानकी सीता है; जिसके परिणय के लिए धनुष यज्ञ हो रहा है। हे लक्ष्मण यद्यपि मेरा मन सहज पवित्र है। तथापि इनकी अलौकिक शोभा को देखकर क्षुब्ध हो गया है। रघुवंशियों का स्वभाव तो ऐसा है कि भूलकर भी कुमार्ग पर पग नहीं रखते। मुझे अपने भी मन पर अत्यन्त विश्वास है कि यह भी ऐसा कुछ नहीं करेगा क्योंकि इसने स्वप्न में भी किसी परायी स्त्री पर कुदृष्टि नहीं डाली।

तात जनक तनया यह सोई। धनुष यज्ञ जेहिं कारन होई।।
पूजन गौरि सखी लै आई। करत प्रकाश फिरइ फुलवाई।।
जासु विलोकि अलौकिक शोभा। सहज पुनीत मोर मन छोभा।।

सो सब कारन जान विधाता। फरकहि सुभग अंग सुन भ्राता।।
रघुवंसिन्ह कर सह सुभाऊ। मन कुपंथ पग धरइ न काऊ।।
मोहिं अतिशय प्रतीति मन केरी। जेहिं सपनेहुं पर नारि न हेरी।।[40]

सन्त तुलसी ने सौन्दर्य वणर्न में भी मर्यादा के पुट को उकेरा है। जनक की पुष्प वाटिका में श्रीराम और सीता के प्रथम दर्शन का और परस्पर प्रेम का जो मर्यादित वर्णन उन्होंने किया है वह एक सामान्य कवि के लिए तो सर्वथा असम्भव है। उन्होंने श्रीराम तथा सीता के रूप–लावण्य का वर्णन मर्यादा में आबद्ध करके किया है–

स्याम गौर मिमि कहउँ बखानी। गिरा अनयन नयन बिनु बानी।।
जिन्ह निजरूप मोहिनी डारी। कीन्हें स्ववस नगर नर नारी।।
बरनत छवि जँह तँह सब लोगू। अवसि देखिअहिं देखन जोगू।।[41]

राम जी सीता जी की सुन्दरता देखकर अत्यन्त प्रसन्न हो जाते हैं। सीता के सौंदर्य व रूप माधुरी का वर्णन अत्यन्त सुन्दर तथा मर्यादित ढंग से किया गया है।

देखि सीय–सोभा सुख पावा। ह्रदय सराहत बचन न आवा।।
जनु विरंचि रचि निज निपुनाई। विरचि विश्व कँह प्रगट देखाई।।
सुन्दरता कहं सुन्दर करई। छवि गृह दीपशिखा जनु बरई।।
सब उपमा कवि रहे सुहाई। केहिं पटतरौं विदेह कुमारी।।[42]

राम इतने मर्यादा आबद्ध है कि बिना गुरू की अनुमति के धनुष भंग करने नहीं जाते है। गुरू आज्ञा प्राप्त होने पर अत्यन्त सहज स्वभाव से धीरे–धीरे चलते है और धनुष उठाने से पहले अपने गुरुदेव को मन ही मन प्रणाम करते हैं–

विश्वामित्र समय सुभ जानी। बोले अति सनेहमय बानी।।
उठहुँ राम भंजहु भव चापा। मेटहु तात जनक परितापा।।
सुनि गुरू वचन चरन सिरू नावा। हरषु विषादु न कछु उर आवा।।
ठाढ़े भये उडि सहज सुभाये। ठवनि जुबा मृगराज लजाये।।[43]

श्रीराम ने अपने गुरू के चरणों का वंदन करके वहाँ उपस्थित अन्य ऋषियों मुनियों से धनुष तोड़ने की आज्ञा प्राप्त करते हैं–

गुरू पद बंदि सहित अनुरागा। राम मुनिन्ह सन आयुस मांगा।।
सहजहिं चले सकल जग स्वामी। मत्त मंजु वर अंतर गामी।।
बन्दि पिता सुर सुकृत सँभारे। जौ कछु पुण्य प्रभाव हमारे।।
X X X X X X
गुरूहिं प्रनाम मनहिं मन कीन्हा अति लॉघव उठाइ धनु लीन्हा।।[44]

माता कैकेयी द्वारा चौदह वर्ष का वनवास देने पर भी राम के मन में कैकेयी के प्रति अत्यधिक सम्मान का भाव विद्यमान है। यद्यपि भरत जी ने तो अपनी माता को कठोर शब्द भी कहे किन्तु राम ने माता का सदैव अपनी माता कौशल्या के समान ही किया। वनवास से वापस आकर सर्वप्रथम माता कैकेयी से ही मिले।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि राम का सम्पूर्ण जीवन–चरित्र मर्यादा के कलेवरसे आच्छादित है। राम माता, पिता, भाई, सखा, गुरू तथा सामान्य नर नारियों के साथ सदैव मर्यादापूर्ण व्यवहार करते हैं। गुरू विश्वामित्र के चरण दबाते है। इसलिए सच्चे अर्थों में तुलसी मन–मानस में रमने वाले राम मर्यादा पुरुषोत्तम राम हैं।

तुलसी के राम : प्रजावत्सल राम :

तुलसी के राम अत्यन्त प्रजावत्सल है। वे एक आदर्श राजा हैं। उनके राज्य में चारों तरफ सुख समृद्धि व्याप्त है। वहाँ कोई दुःखी तथा दरिद्र नहीं है। वहाँ कोई मूर्ख तथा कुलक्षणी नहीं है।

नहिं दरिद्र कोउ दुःखी न दीना। नहिं कोउ अबुध न लच्छन हीना।।[45]

तुलसी के राम अपनी प्रजा को पूरी स्वतंत्रता देते हैं और राजकाज में अपने मत व्यक्त करने का अधिकार देते हैं। इस प्रकार राम के राज्य में राजतंत्र होने के बावजूद प्रजातंत्र/लोकतंत्र के दर्शन होते हैं–

जो अनीति कछु भाखौं भाई। तब मोहिं वरजेहु भय बिसराई।।[46]

तुलसी ने रामचरित में स्पष्ट उल्लेख किया है–

जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी। सो नृप अवसि नरक अधिकारी।।[47]

अतः तुलसी मन–मानस में बसने वाले राम अत्यन्त प्रजावत्सल है।

तुलसी के राम : शील सिन्धु राम :

तुलसी के राम शील सिन्धु है। उनका स्वभाव ऐसा है कि उनका बखान तो उनके शत्रु भी करते है क्योंकि श्रीराम ने स्वप्न में भी किसी शत्रु का अपकार नहीं किया–

अरिहूक अनभल कीन्ह न रामा। मैं सुचि सेवक जद्यपि बामा।।
XX XX XX XX
बैरिहु राम बढ़ाई करिहिं। बोलनि मिलनि विनय मन हरही।।[48]

चित्रकूट में जब गुरूदेव विश्वामित्र के आगमन का समाचार राम को प्राप्त होता है तुरन्त गुरू से मिलने के लिए उद्धृत होकर दौड़ पड़ते हैं–

सील सिन्धु सुनि गुरू आगमनू। सिय समीप राखे रिपुदमनू।।
चले सवेग राम तेहिं काला। धीर धरम धुर दीन दयाला।।
गुरूहिं देखि सानुज अनुरागे। दण्ड प्रनाम करन प्रभु लागे।।
मुनिवर धाइ लिए उरलाई। प्रेम उमगि भेटे दोउ भाई।।[49]

राम का स्वभाव तो करोड़ों हिमालय के समान स्थिर है। इस अर्थ में वे 'स्थितप्रज्ञ' राम हैं। करोड़ों समुद्र के समान गांभीर्य राम में विद्यमान है। शायद इसीलिए वनवास का समाचार पाकर न तो वे दुःखी होते हैं न तो राज्यारोहण का समाचार उन्हें प्रसन्न करता है–

हिमगिरि कोटि अचल रघुवीरा। सिन्धु कोटि सत सम गंभीरा।।[50]
प्रसन्नतां यो न गताभिषेकस्तथा नमम्ले वनवास दुःखतः।
मुखाम्बुज श्रीरघुनन्दनस्य में, सदास्तु सा मंजुल मंगलप्रदा।।[51]
इस प्रकार तुलसी मन मानस में राम शील सिन्धु सिद्ध होते हैं।

तुलसी के राम : पतितोद्धारक राम :

तुलसी मन मानस में बसने वाले राम पतितों का उद्धार करते हैं। जिसने जिसने उनका नाम स्मरण किया वे सभी उत्तम गति को प्राप्त हुए। अहिल्या अपने पति के शाप के कारण पतित थी। राम ने उसे स्पर्शकर उसका उद्धार किया–

परसत पद पावन शोक नसावन प्रकट भई तप पुंज सही।।
देखत रघुनायक जन सुखदायक सन्मुख होइ कर जोरि रही।।
अति प्रेम अधीरा पुलक शरीरा मुख नहिं आवइ वचन कही।।
देखत रघुनायक जन सुखदायक सनमुख होइ कर जोरि रही।।[52]
राम ने कबंध का भी उद्धार वनवास मार्ग में जाते हुए किया–
ताहि देह गति राम उदारा। शबरी के आश्रम पगु धारा।[53]

शबरी आश्रम पहुँचकर माता शबरी को भी मुक्त किया। माता शबरी से श्रीराम कहते है–

मम दरस्स फल परम अनूपा। जीव पाव निज सहज सरूपा।।[54]

गीधराज जटायू सीता की रक्षा करते समय रावण की चन्द्रहास खड्स से घायल होकर पृथ्वी पर पड़े थे। राम ने उनका क्रिया कर्म अपने हाथ से किया।

गीध देह तजि धरि हरिरूपा। भूषन बहु पट पीत अनूपा।।[55]

इस प्रकार रावण, कुम्भकर्ण, मेघनाद जैसे पतित आत्माओं का भी उद्धार किया क्योंकि अन्ततोगत्वा ये भी राम भक्त ही थे। अन्तर सिर्फ इतना था कि ये बैर भाव से भगवान का स्मरण करते थे। सन्त तुलसी ने उत्तरकाण्ड में स्पष्ट किया है–

पाई न केहिं गति पतित पावन राम भजि सुनु सठ मना।।
गनिका अजामिल व्याध गीध गजादि खल तारे घना।।
आभीर जमन किरात खल स्वपचादि अति अघ रूप जे।
बहि नाम बारक तेपि पावन होंहि राम नमामि ते।।[56]

तुलसी के राम : दुष्ट संहारक राम :

तुलसी के राम सदा दुष्टों का संहार करते हैं। जब–जब इस धरा पर पाप अपने चरम पर हो जाता है तब श्रीराम नाना रूपों में अवतार ग्रहण कर दुष्टों का संहार करते और धर्म की स्थापना करते है।

असुर मारि थापहि सुरन्ह राखहिं निज श्रुति सेतु।
जग विस्तारिह विसद जस राम जनम कर हेतु।[57]

अरण्यकाण्ड में अनेकों दुष्ट राक्षसों का संहार श्रीराम करते है–

खल बधि तुरत फिरे रघुबीरा। सोह चाह कटि कसि तूणीरा।।[58]

वनवास काल में राम ने अनेकों दृष्टों का संहार किया। उनमें रावण, कुम्भकर्ण, मेघनाद समस्त निषाचर जाति थी किन्तु निशाचर कुल में ही उत्पन्न साधु पुरुषों की प्रतिष्ठा भी श्रीराम ने स्थापित किया। राम ने दुष्टों के संहार की प्रतिज्ञा भी की थी।

निश्चिर हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह।
सकल मुनिन के आश्रमन्हि जाइ–जाइ सुख दीन्ह।।[59]

इस प्रकार तुलसी के मन तथा मानस में बसने वाले राम दुष्ट संहारक सिद्ध होते है।

तुलसी के राम : रणरंग धीर राम :

वाल्मीकि के रण रंगधीर राम की तरह संत तुलसी भी राम को परम वीर के रूप में प्रख्यापित किया है। पूरा रामचरितमानस राम की वीर गाथाओं यशों से पटा पड़ा है। मुनि विश्वामित्र की यज्ञ की रक्षा तो केवल श्रीराम जैसा पराक्रमी पुरुष ही कर सकता था। इसलिए विश्वामित्र ने राम को दशरथ जी से माँग लिया।

पुरुष सिंघ दोउ वीर हरषि चले मुनि भय हरन।
कृपा सिंधु मति धीर अखिल विश्व कारन करन।।[60]

राम ने ताड़का का बध किया। मारीच जैसे बलशाली निशाचरों को बिना फर के बाण से समुद्र पार फेंक दिया।

बिनु फर बान राम तेहि मारा। सत जोजन गा सागर पारा।।[61]

सीता स्वयंवर में देश–विदेश के पराक्रमी राजा विद्यमान हैं। राम लक्ष्मण के पहुँचने पर सभी डर जाते हैं जबकि रामलक्ष्मण की परम मोहिनी मूरत है। राजाराम ऐसे निहार रहे है मानों स्वयं वीर रस शरीर धारण करके स्वयं उपस्थित हो गये हो।

देखहिं रूप महारन धीरा। मनहुँ वीर रस धरे शरीरा।।
डरे कुलि नृप प्रभुहिं निहारी। मनहुँ भयानक मूरति भारी।।
रहे असुर छल छोनिप वेषा। तिन्ह प्रभु प्रकट काल सम देखा।।[62]

उसी शिव धनुष को जिसे अन्य राजा हिला तक न सके, राम ने सभा के मध्य उस धनुष का विभंजन कर दिया।

तेहि छन राम मध्य धनुतोरा। भरे भुवन धुनि घोर कठोरा।।[63]

श्रीराम का शौर्य व पराक्रम अतुलनीय है। महाराज को धनुष भंग का समाचार सुनाते हुए जनक जी के दूतों ने राम की वीरता का बखान किया है। जिस धनुष को समेरू पर्वत को उठाने वाला बाणासुर तथा कौतुक में ही कैलाश पर्वत को उठाने वाला रावण नहीं तोड़ सका, उसी धनुष को राम छत्रकदण्ड की तरह तोड़ दिया।

सकइ उठाइ सुरासुर मेरू। सोउ हिय हारि गयउ करि फेरू।।
जेहिं कौतुक शिव सैल उठावा। सोउ तेहिं सभा पराभउ पावा।।
तहाँ राम रघुवंशमनि, सुनिय महामहिमपाल।
भंजेउ चाप प्रयास बिनु, जिमिगज पंकज नाल।।[64]

श्रीराम ने बालि जैसे बलशाली को एक ही बाण में मार दिया–

सुनु सुग्रीव मारिहउँ बालिहि एकहि बान।
ब्रह्म रुद्र सरनागत गये न उबरिहि प्रान।।[65]

सुग्रीव द्वारा दुन्दुभी के सात वृक्षों को दिखलाये जाने पर श्रीराम ने उसे बिना प्रयास ही काट दिया जिससे सुग्रीव को राम के अमित पराक्रम पर विश्वास हो गया।

दुंदुभि अस्थिताल देखराये। बिनु प्रयास रुनाथ ढहाये।।
देखि अमित बल बाढ़ी प्रीती। बालि बधव इन भइ परतीती।।[66]

बालि की पत्नी तारा ने बाली को यही बात समझाई थी–

सुनु पति जिन्हहि मिलेउ सुग्रीवा। ते दोउ बन्धु तेज बल सींवा।।
कोसलेस सुत लक्षिमन रामा। कालहुँ जीति सकहिं संग्रामा।।[67]

मानस में इस प्रकार के कई स्थल विद्यमान है जिसमें राम के पराक्रम का दिग्दर्शन है। अतः तुलसी के परवीर राम रण रंग धीर राम है।

राजिव नयन धरे धनु सायक। भगत विपति भंजन सुखदायक।।[68]

तुलसी के राम : अनुज सखा सनेही राम :

तुलसी के राम अत्यन्त प्रेमी हैं। वे अपने बाल सखाओं तथा भ्राताओं अत्यन्त प्रेम करते हैं। गोस्वामी जी के अनुसार समस्त भाइयों में अत्यन्त प्रेम विद्यमान था। सभी प्रकार के छल कपट तथा दोष वर्जित थे।

आइहिं भाइहिं परम समीती। सकल दोष छल वरजित प्रीती।।''[69]

बाल्यकाल में श्रीराम अपने भाइयों तथा मित्रों के साथ ही भोजन करते है–

अनुज सखा संग भोजन करहीं। देखि सकल जननी सुख भरहीं।।[70]

रामजी जब क्षत्रियोचित शिकार खेलने वन में जाते हैं तो वहाँ भी उनके मित्र तथा भाई उपस्थित होते हैं–

अनुज सखा सब लेंहि बोलाई। वन मृगया नित खेलहिं जाई।।[71]

राम मित्र के रजकण के समान दुःख को पर्वत के समान तथा अपने पर्वत के समान दुःख को रजकण के समान समझते हैं–

सुग्रीव से मित्रता के सम्बन्ध में राम कहते हैं कि ऐसे लोग जो मित्र के दुःख से दुःखी नहीं होते उनको देखने मात्र से अत्यन्त पाप लगता है।

जे न मित्र दुःख होहिं दुखारी। तिन्हहिं विलोकत पातक भारी।।
निज दुःख रजकण सम करि जाना। मित्र क दुःख रज मेरु समाना।।[72]

अतः तुलसी के मन मानस में बसने वाले राम अनुज सखा सनेही राम है।

तुलसी के राम : कृपासिंधु राम :

तुलसी के राम सदैव अपने भक्तों पर कृपा करते हैं। वे शील व गुण के साथ अत्यन्त कृपासिंधु भी है। राम के कृपा सिन्धु स्वरूप का वर्णन गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरितमानस के कई प्रसंगों में प्रमाणित किया है– माता अहल्या का उद्धार करने के लिए मुनि विश्वामित्र राम से कृपा करने के लिए कहते हैं–

गौतम नारि साप बस उपल देह धरि धीर।
चरन कमल–रज चाहति, कृपा करहु रघुवीर।।[73]

गंगा के तट पर केवट द्वारा बिना पग धोए गंगापार करने से मना करने पर श्रीराम ने मुस्कुराते हुए केवट से कहा कि तुम वही करो जिससे तुम्हारी नाव बची रहे।

कृपा सिंधु बोले कुसुकाई। सोइ करु जेहिं तब नाव न जाई।।
बेगि आनु जल पायँ पखारू। होत विलम्ब उतारहि पारू।।[74]

जयन्त द्वारा सीता के चरणों में चोच मारने पर उसके शरणागत होने पर भी श्रीराम ने उसको अल्पदण्ड देकर क्षमा कर दिया–

कीन्ह मोहवस द्रोह जद्यपि तेहि कर बध उचित।
प्रभु छाड़ेउ करि छोह को कृपाल रघुवीर सम।।[75]

अन्य प्रसंगों में श्रीराम के कृपा सिंधु स्वरूप का विवेचन है। अतः तुलसी मन मानस में रमने वाले राम अपार कृपा सिंधु है।

निष्कर्षतः तुलसी के मन–मानस में राम अपने कई स्वरूपों में विराजमान है। तुलसी के राम उपास्यों के लिए ब्रह्मस्वरूप, भक्तों के लिए भक्त वत्सल स्वरूप, शरणागति चाहने वालों के लिए शरणागत वत्सल स्वरूप, मर्यादा की स्थापना हेतु मर्यादा पुरुषोत्तम स्वरूप, प्रजावत्सल स्वरूप, शीलसिंधु, पतितोद्धारक, दुष्ट संहारक तथा अमित पराक्रमी रण रंग धीर स्वरूप में विद्यमान है। राम अपने अनुज तथा सखा सनेही स्वरूप में सब पर कृपा करते है। इसीलिए राम का कृपासिंधु स्वरूप तुलसी के मन को भाव विभोर करता है। सच्चे अर्थों में तुलसी के राम परिपूर्ण ब्रह्म राम है।

संदर्भ :

1. तुलसीदास, कवितावली, बालकाण्ड
2. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड
3. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
4. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड
5. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड
6. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड
7. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड
8. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड
9. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड
10. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड
11. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड
12. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड

13. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड
14. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
15. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड
16. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड
17. तुलसीदास, रामचरितमानस, उत्तरकाण्ड
18. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड
19. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
20. तुलसीदास, रामचरितमानस,लंकाकाण्ड
21. तुलसीदास, रामचरितमानस,लंकाकाण्ड
22. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
23. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
24. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
25. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
26. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
27. तुलसीदास, रामचरितमानस,अरण्यकाण्ड
28. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
29. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
30. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड
31. तुलसीदास, रामचरितमानस,अयोध्याकाण्ड
32. तुलसीदास, रामचरितमानस,किष्किंधाकाण्ड
33. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड
34. तुलसीदास, रामचरितमानस,सुन्दरकाण्ड
35. तुलसीदास, रामचरितमानस,सुन्दरकाण्ड
36. तुलसीदास, रामचरितमानस,सुन्दरकाण्ड
37. तुलसीदास, रामचरितमानस,सुन्दरकाण्ड
38. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
39. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
40. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
41. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
42. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
43. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
44. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
45. तुलसीदास, रामचरितमानस,उत्तरकाण्ड
46. तुलसीदास, रामचरितमानस,उत्तरकाण्ड
47. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड
48. तुलसीदास, रामचरितमानस,अयोध्याकाण्ड
49. तुलसीदास, रामचरितमानस,अयोध्याकाण्ड
50. तुलसीदास, रामचरितमानस,उत्तरकाण्ड
51. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड

52. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
53. तुलसीदास, रामचरितमानस,अरण्यकाण्ड
54. तुलसीदास, रामचरितमानस,अरण्यकाण्ड
55. तुलसीदास, रामचरितमानस,अरण्यकाण्ड
56. तुलसीदास, रामचरितमानस,उत्तरकाण्ड
57. तुलसीदास, रामचरितमानस,बालकाण्ड
58. तुलसीदास, रामचरितमानस,अरण्यकाण्ड
59. तुलसीदास, रामचरितमानस,अरण्यकाण्ड
60. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड
61. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड
62. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड
63. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड
64. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड
65. तुलसीदास, रामचरितमानस, किष्किंधाकाण्ड
66. तुलसीदास, रामचरितमानस, किष्किंधाकाण्ड
67. तुलसीदास, रामचरितमानस, किष्किंधाकाण्ड
68. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड
69. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड
70. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड
71. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड
72. तुलसीदास, रामचरितमानस, किष्किंधाकाण्ड
73. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड
74. तुलसीदास, रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड
75. तुलसीदास, रामचरितमानस, अरण्यकाण्ड

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

गोपालदास 'नीरज' जी के काव्य में राष्ट्रीय संचेतना का विकास

डॉ0 अवधेश कुमार
(प्रवक्ता)
सत्यनारायण इण्टर कॉलेज,
तिंदवारी, बांदा (यू0पी0)

सारांश

नीरज जी वस्तुतः प्रेम के कवि होने पर भी अपने देश, अपनी संस्कृति, भाषा के लिए सदैव चिन्तित ही प्रतीत होते हैं। उस उम्र में भी जब व्यक्ति माया, मोह को त्याग कर संन्यास धारण कर लेता है नीरज जी सतत् कविता एवं गीत तथा शायरी लिखते हुए आखिरी वक्त तक देश सेवा का व्रत ले चुके हैं। उपर्युक्त पंक्तियों में भी नीरज ने देश के नागरिकों को देश की दुर्दशा बताकर चुप न रहने का संदेश दिया है, उन्होंनें युवाओं को हुंकार भरने के लिए आह्वाहन किया है नीरज जी का मानना है कि वक्त बदलने के लिए स्याही से लिखना ही पर्याप्त नहीं है अपितु खून में कलम डुबोकर लिखा जाय अर्थात् नीरज जी उस वक्त तक शायद यह मानने लगे थे कि सिर्फ प्रेमगीत के द्वारा जनता को प्रेमोन्मत्त करना ही कवि कर्म नहीं है अपितु समयानुसार देशभक्ति तथा वीर रस की कविताएँ लिखकर जनता को जगाना भी आवश्यक है।

कवि नीरज जी की कविताओं में दर्शन के साथ–साथ शिक्षा भी मिलती है। वो कोशिश करते हैं कि उनकी कविता में दर्द, प्रेम, शिकायत, देश भक्ति, इत्यादि का पुट होने के साथ–साथ कुछ शिक्षा की श्रोताओं को प्राप्त हो एक मंच पर नीरज जी ने कहा भी था–

''कविता वो है जो मनुष्य के जीवन में कभी काम आ जाये, एक कविता अगर जीवन में काम आती है तो ठीक है नहीं तो बेकार है।''

उनकी कविता में मनुष्य को वास्तव में कुछ न कुछ शिक्षा मिलती है। ''आसावरी'' नामक काव्य संग्रह में उनकी एक कविता यहाँ उद्धृत है जिसमें लोगों को मनुष्य जीवन की महत्ता में प्रत्येक छोटी से छोटी वस्तु का भी योगदान होता है तथा प्रत्येक व्यक्ति को कुछ न कुछ त्याग करना पड़ता है तो साथ ही वस्तुएँ भी त्याग या बलिदान करती हैं तब जाकर कुछ न कुछ प्राप्त होता हैं निम्नलिखित कविता ''दीप और मनुष्य'' के माध्यम से नीरज जी ने मनुष्य को कितनी मार्मिक वास्तविकता से परिचित कराया है–

एक दिन मैंने कहा यूँ दीप से
''तू धरा पर सूर्य का अवतार हैं,
किसलिए फिर स्नेह बिन मेरे बता
तू न कुछ, बस धूल–कण निस्सार है?''
लौ रही चुप दीप ही बोला मगर

"बात करना तब तुझे आता नहीं,
सत्य है सिर पर चढ़ा जब दर्द हो
आँख का परदा उधर पाता नहीं।
मूढ़! सिलता फूल यदि निज गन्ध से
मालियों का नाम फिर चलता कहाँ?
मैं स्वयं ही आग से जलता अगर
ज्योति का गौरव तुझे मिलता कहाँ?"[1]

नीरज जी को शिक्षाप्रद तथा दर्शन एवं गूढ़ रहस्यों से भरपूर कविता लिखने में बड़ा ही आनन्द आता है। 'आसावरी' के ही एक काव्य संग्रह में नीरज जी ने एक बात का स्पष्टीकरण अत्यन्त महत्वपूर्ण ढंग से किया है कि इस संसार में अब कुछ प्रकृति में अधीन है और प्रकृति के अधीन प्रत्येक वस्तु पर सबका बराबर अधिकार होता है तो इस संदर्भ में उनकी निम्न पंक्तियाँ दृष्टव्य है–

फूल पर हँसकर अटक तो शूल को रोकर झकट मत,
ओ पथिक! तुम पर यहाँ अधिकार सबका है बराबर!
बाग है ये हर तरह की वायु का इसमें गया है,
एक मलयज की वधू तो एक आँधी की बहन है,
यह नहीं मुमकिन कि मधुऋतु देख तू पतझर न देखे,
कीमती कितनी कि चादर ही पड़ी सब पर शिकन है,
दो बदन के सूत की माला प्रकृति है, किन्तु फिर भी–
एक कोना है जहाँ श्रृंगार सबका है बराबर।– "आसावरी"[2]

उपर्युक्त पंक्तियों में नीरज जी ने प्रकृति प्रदत्त वस्तुओं पर सबका बराबर अधिकार रहता है और उसी प्रकार मनुष्य भी प्रकृति की ही वरदान है और मनुष्य को भी प्रकृति का वरदान और अभिशाप, सुख–दुःख, हर्ष–शोक, सब कुछ सहना पड़ेगा। यह संभव नहीं है कि किसी को सारे सुख और किसी को दुख मिले।

नीरज जी की कविताओं एवं गीतों में प्रेम में भी दार्शनिकता के दर्शन होते हैं और दार्शनिकता में भी मार्मिकता का पुट मिलता है।

"दुःखते हुए जख्मों पे हवा कौन करे,
इस हाल में जीने की दुआ कौन करे।
बीमार है जब खुद ही हकीम अहले वतन,
फिर तेरे मरीजों की दवा कौन करे।।"[3]

उपर्युक्त पंक्तियों यद्यपि निराशा से युक्त हैं किन्तु नीरज जी ने वास्तविकता से कभी मुंह नहीं मोड़ा और इस संसार की सच्चाई भी यही है।

---

1 आसावरी–नीरज
2 आसावरी–नीरज
3 प्रमुख शायरियाँ–नीरज

एक अन्य उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है जो कि उनके द्वारा लिखित 'शर्मीली' फिल्म से लिया गया है–

"खिलते है गुल यहाँ खिलके बिखरने को
मिलते हैं दिल यहाँ मिल के बिछुड़ने को
कल रहे ना रहे मौसम ये प्यार का,
कल रूके न रूके डोला बहार का
चार पल की जिन्दगी प्यार में गुजार के
खिलते है गुल यहाँ खिलके बिछड़ने को।।"[4]

उपर्युक्त पंक्तियों में निराशावाद यद्यपि है किन्तु जीवन और मृत्यु, जरा इत्यादि का अन्यतम उदाहरण प्रस्तुत है। निराशा से पूर्ण अन्य एक उदाहरण देखिए–

"गीत जब मर जायेंगे क्या यहाँ रह जायेगा।
एक सिसकता आँसूओं का कारवां रह जायेगा।।
आग लेकर हाथ में पगले जलाता है किसे।
जब नये बस्ती रहेगी तू कहाँ रह जायेगा।।
प्यार की धरती अगर बंदूक से बाँटी गयी।
एक मुर्दा शहर अपने दरमियाँ रह जायेगा।।
आयेगा अपना बुलावा जिस घड़ी उस पार से
मैं कहाँ रह जाऊँगा और तू कहाँ रह जायेगा।
जिन्दगी और मौत की नीरज कहानी है यही।
फुर्र उड़ जायेगी चिड़िया आशियाँ रह जायेगा।।"

उपर्युक्त पंक्तियों में नीरज जी ने गीतों एवं कविताओं की वर्तमान दुर्दशा को व्यक्त करते हुए लिखा है कि गीतों के अभाव में दुनिया में क्या शेष बचेगा? अर्थात् कुछ भी नहीं रह जायेगा? जीवन में सिर्फ और सिर्फ चिन्ता, तनाव, परेशानियाँ, भटकाव, निराशा, हताशा इत्यादि मनुष्य जीवन को अपने आगोश में ले लेंगी।

इसमें प्रतीत होता है कि इन निराशावादी पंक्तियों में भी एक विशेषता परिलक्षित होती है और वह विशेषता यह है कि नीरज जी की दृष्टि में साहित्य का क्या महत्व है या नीरज जी अपने जीवन में साहित्य, गीत, कविता को कितना महत्वपूर्ण स्थान देते हैं वे जीवन को सुव्यवस्थित, आनन्दमय एवं सुखकारी तथा मनोरंजक, बनाने के लिए साहित्य को अत्यन्त महत्वपूर्ण मानते है। उनका मानना है कि कवितायें हमें मार्गदर्शन, प्रेरणा तथा सहयोग देने के साथ–साथ असमंजस्य की स्थिति से भी बहार निकालती हैं।

---

4 शर्मीली (फिल्म)–नीरज गीत लेखक

नीरज जी ने अपनी पंक्तियों में कहा है कि प्रेम के लिए बनी इस धरती को अगर जबरदस्ती बाँटा गया या प्यार के बजाय इसमें नफरत के अंकुर फूटेंगे तो एक दिन ऐसा भी समय आयेगा जब पूरा संसार या हम अपने आस–पास एक ऐसे शहर को देखेंगे जो शहर तो होगा, लोग तो होंगे लेकिन वो लोग मुर्दा के समान होंगे कोई किसी से मतलब नहीं रखेगा और आपस में प्रेम–व्यवहार से दूर मनुष्य मनुष्य को जानेगा तक नहीं। ऐसी स्थिति में जीवन संभव नहीं हो सकेगा क्योंकि मनुष्य स्वभावतः सामाजिक प्राणी है और एक सक्रिय समाज के बिना वह पशुवत् हो जायेगा। इस आने बाकी भयंकर स्थिति को भांपकर ही नीरज जी ने ये पंक्तियाँ लिखी है जो उनकी प्रतिभा एवं मानवता के प्रति लोकमंगलकारी व्यक्तित्व का परिचायक है।

वर्तमान देश की एवं विश्व की अर्थवादी। पूँजीवादी विचारधारा की महत्ता के मध्य भी नीरज जी मानवता के प्रति कर्तव्यों का निर्वहन का संदेश देते है और जब व्यक्ति अपने इन महत्वपूर्ण कर्तव्यों का पालन करने के स्थान पर उससे कतराने लगता है और स्वार्थ एवं अपनी भोगलिप्सा की पूर्ति करने लगता है तब नीरज का हृदय आर्तनाद करने लगता है और जब कवि हृदय निराश एवं दुःखी होता है तब वह अपने दुःख रूपी ज्वालामुखी को कविता के रूप में फाड़ता है परिणामस्वरूप मानवता के हितचिंतक कवियों की जब वर्तमान मनोस्थिति चिंताजनक होगी तो निराशावादी कविताओं की सृजनात्मकता स्वाभाविक है। ऐसी ही एक कविता नीरज जी ने लिखी है उसकी कुछ पंक्तियाँ देखिए–

"हर तरफ आतंक ही आतंक है फैला यहाँ पर,
हर किसी के शीश पर तलवार एक नंगी खड़ी है।
एक कब्रिस्तान की मानिंद है खामोश बस्ती,
उल्लुओं की ही महज आवाज पेड़ों पर चढ़ी है
नीड़ उजालों को यहाँ वनवास ही जाना पड़ेगा
सूर्य के बेटे अंधेरों का समर्थन कर रहे हैं।।"[5]

आज देश का प्रत्येक व्यक्ति जब अपनी स्वार्थपूर्ति में धर्म और मजहब की नाम पर बहक कर आतंक का साया फैला रहे है उन्हें शायद नहीं मालूम कि मानवता को तार–तार करने वाला शायद कोई मजहब है ही नहीं और नहीं कोई मजहब इसकी आज्ञा देता है ये तो कुछ घृणित लोगों की ईर्ष्या, द्वेष तथा भोगलिप्सा का परिणाम है। इन्हीं कुछ अमानवीय प्रवृत्ति के लोगों के बहकावे में आकर लोग जो कभी मानवता के हित में जीवन सर्वस्व कर देने वाले थे उनकी जीवन दशा ही बदल गयी और वो चील गिद्ध जैसे लोगों का समर्थन करने लगे। इन्हीं बातों को सोच–विचारकर नीरज जी के द्वारा निराशावादी दृष्टिकोण की रचनायें निकलने लगी। तथापि इन्हीं निराशावादी कविताओं से ही नीरज जी अपनी कविता की इतिश्री कभी नहीं की उन्होंने सदैव समाधान दिया है और अन्ततः जीवन के प्रति अपने सकारात्मक नजरिये का प्रदर्शन किया। उदाहरणार्थ पंक्तियाँ देखें–

"चाहे सागर को कंगन पहनाओं,
चाहे नदियों की चूनर सिलवाओ।
उतरेगा स्वर्ग तभी इस धरती पर,

5 गीत–नीरज

जब प्रेम लिखेगा खत परिवर्तन को।

सुन्दरता खुद से ही शरमा जाये,

यदि वाणी भी मिल जाये दर्पण को।।''

नीरज जी ने अपने काव्य से प्रत्येक क्षेत्र को सिक्त किया है। उन्होंने धर्म, सम्प्रदाय, जाति, आर्थिक एवं राजनीतिक सभी क्षेत्रों पर अपने लेखनी चलायी है और जीवन में ही नहीं अपने काव्य–सृजन में भी प्रेम को सर्वाधिक महत्व दिया है। उन्होंने ऐसी प्रेममयी रचनाएं की है जिनमें दर्शन का पुट झलकता है। वस्तुतः नीरज जी प्रेम एवं दर्शन के सच्चे चित्तेरे कवि है जिनसे पाठक स्वतः ही जुड़ जाते है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. शर्मा, डॉ0 रामकिशोर– हिन्दी साहित्य का इतिहास
2. शुक्ल, आचार्य रामचन्द्र– हिन्दी साहित्य का इतिहास
3. डॉ0 नगेन्द्र– हिन्दी साहित्य का इतिहास
4. नीरज, गोपालदास, आसावरी
5. नीरज, गोपालदास, गीत जो गाये नहीं
6. नीरज, गोपालदास, दर्द दिया है
7. नीरज, गोपालदास, नदी किनारे
8. नीरज, गोपालदास, नीरज की गीतिकायें
9. नीरज, गोपालदास, फिर दीप जलेगा
10. नीरज, गोपालदास, कारवां गुजर गया
11. नीरज, गोपालदास, दर्द दिया है
12. हमारे लोकप्रिय गीतकार नीरज संपादक शेरजंग गर्ग, 2006, पृ0 131 वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली।
13. हमारे लोकप्रिय गीतकार गोपालदास नीरज संपादक शेरजंग गर्ग, 2006, पृ0 6 वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली।
14. डॉ0 गिरिजाशरण अग्रवाल एवं डॉ0 मीना अग्रवाल, हिन्दी साहित्यकार संदर्भकोश (दूसरा–भाग), 2006, पृ0 110, हिन्दी साहित्य निकेतन, बिजनौर, उ0प्र0
15. उ0प्र0 में कवि नीरज समेत पाँच को मंत्री का दर्जा (http://www. jagran.com/news/national-poet-Neeraj-Including-five-on-the-status-of-minister-in-up- 9632556.html)
16. कवि नीरज (http://www.poetneeraj.com)

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

समाचार पत्र 'प्रताप' का आरोह–अवरोह

डॉ0 राजेश कुमार पाण्डेय

अपनी स्वतंत्र नीति के कारण 'प्रताप' को अपने जीवन में समय–समय पर अनेक उतार–चढ़ावों का सामना करना पड़ा। प्रारंभ में विद्यार्थी जी और पण्डित शिवनारायण मिश्र ने इसे चार रूपये किराये के टूटे–फूटे अंधेरे मकान से आरंभ किया और जैसे–तैसे कारोनेशन प्रेस वालों को इसके मुद्रण के लिए सहमत किया। परन्तु वह सर्वप्रथम एक निजी प्रेस की व्यवस्था करने के लिए भी प्रयत्नशील रहे। उन्होने कुछ रूपये ऋण लिए और कारोरेशन प्रेस का पैसा चुकाकर एक प्रेस खरीद लिया। इस प्रेस का नाम 'प्रताप' रखा गया। विद्यार्थी जी महाराणा प्रताप के चरित्र से काफी प्रभावित थे। उनके जीवन पर महाराणा प्रताप के उच्च त्याग और उच्च स्वातन्त्र्यप्रियता, उच्च आत्म–गौरव एवं आत्म–सम्मान का बहुत प्रभाव था। इसी कारण अपने द्वारा प्रवर्तित पत्र का नाम भी उन्होंने उन्हीं के नाम पर 'प्रताप' रखा।[1]

सम्पादक का उत्तरदायित्व प्रारम्भ से ही विद्यार्थी जी ने स्वयं निभाया। प्रेस हो जाने पर विद्यार्थी जी स्वयं प्रकाशक और मुद्रक बन गये। उन्हें इस कार्य में सहयोग उनके परम मित्र श्री काशीनाथ का भी मिला। 'प्रताप' के लिए विद्यार्थी जी को लाला कमलापति और सेठ रामगोपाल ने जो आर्थिक मदद किया। वह निश्चय ही प्रशसंनीय कार्य है।[2]

आरंभ में 'प्रताप' के प्रकाशन का समस्त कार्य विद्यार्थी जी, पण्डित शिवनारायण तथा श्री नारायणप्रसाद अरोड़ा ये ही तीन व्यक्ति सारा काम देखते थे। उस समय पैसे के अभाव में सारा काम ये तीनों महानुभाव ही मशीनों की सफाई, कम्पोजिंग, समाचार समायोजन, प्रुफ पढ़ना देखना आदि समस्त कार्य करते थे। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रेस के चपरासी से लेकर सम्पादन तक का समस्त कार्य इन्हीं को करना पड़ता था। उस समय आर्थिक तंगी के कारण प्रेस में कुर्सिया तक भी नहीं थी, समस्त कार्य चटाइयों पर बैठकर किये जाते थे।[3]

अपने आरम्भिक काल में 'प्रताप' कानपुर में भी अधिक लोकप्रिय न हो सका। उस समय इसके ग्राहकों की संख्या प्रायः ढाई सौ थी तथा इसके अतिरिक्त चालीस पच्चास प्रतियां प्रतिदिन और बिक जाती थी। हाँ, संयुक्त प्रांत और बिहार के ग्रामीण क्षेत्रों में यह आरंभ में ही अच्छा लोकप्रिय हो गया था। ग्रामीण क्षेत्रों में जितनी लोकप्रियता 'प्रताप' को प्राप्त हुई, उतनी उस समय के अन्य किसी भी पत्र को प्राप्त नहीं हुई।[4]'प्रताप' गहन–गंभीर विषयों को अत्यन्त सरल–सीधी शैली के माध्यम से पाठकों के समक्ष रखता था। इसीलिए उसे शिक्षितों के साथ ही अल्पशिक्षित पाठक भी बड़ी रूचि से पढ़ते थे। 'प्रताप' की इसी लोकप्रियता की ओर संकेत करते हुए डॉक्टर ईश्वर प्रसाद वर्मा ने लिखा है –

प्रारंभ में 'प्रताप' कानपुर शहर में भी विशेष नहीं पढ़ा जाता था संयुक्त प्रान्त तथा बिहार प्रान्त के देहातों में अलबत्ता इसका बेहद प्रचार था। इतने अल्पकाल देहाती संसार और देशी रियासत में जितना प्रचार 'प्रताप' का हुआ, उससे पूर्व किसी हिन्दी पत्र का नहीं हुआ था। उसकी शैली निराली थी। गूढ़ से गूढ़ तत्वो को सीधे–सादे ढंग से प्रस्तुत किया जाता था, और यही कारण था कि विद्वान तथा अनपढ़ सभी उसे चाव से पढ़ने लगे थे। उसकी भाषा में प्रवाह होता।

उसकी एक–एक लाइन से ओजस्विता और राष्ट्रीयता टपकती थी। उसके एक–एक शब्द दिल में बैठ जाते थे। देहात की अनपढ़–कुपढ़ जनता भी इसीलिए 'प्रताप' पर फिदा थी और इसका श्रेय था उसके सम्पादक श्री गणेशशंकर विद्यार्थी जी को।[5]

'प्रताप' प्रारम्भ में एक साप्ताहिक पत्र के रूप निकला, किन्तु उसके संचालकों को शीघ्र ही यह अनुभव हुआ कि उसका दैनिक संस्करण भी निकालना चाहिए। इसके लिए पर्याप्त धनराशि और साधनों की आवश्यकता थी, फिर भी इसका दैनिक संस्करण निकालने का निर्णय ले ही लिया गया। 23 नवम्बर, 1920 से 'प्रताप' का दैनिक संस्करण भी प्रारंभ हुआ। अल्प समय में ही 'प्रताप' का दैनिक संस्करण भी पर्याप्त लोकप्रिय हो गया। इसके लगभग 5000 ग्राहक बन गये थे। साप्ताहिक 'प्रताप' से ही अग्रेंजी सरकार और उसकी अफसरशाही का कोपभाजन बना था। इसी प्रकार 'प्रताप' के दैनिक संस्करण को भी अनेक अघातों को सामना करना पड़ा।संयुक्त प्रान्त की सरकार ने इसके संचालकों से पन्द्रह–पन्द्रह हजार रूपयों की जमानतें और मुचलके मांगे। कई देशी रियासतों में इसका प्रवेश बन्द कर दिया गया। कुछ समय बाद ऐसी परिस्थिति हो गयी कि इसे निकालना असम्भव जैसे हो गया था। अन्ततः 6 जुलाई, 1921 से 'प्रताप' का दैनिक संस्करण बंद कर दिया गया।[6]

'प्रताप' के साप्ताहिक और दैनिक दोनों ही संस्करणों ने हिन्दी पाठकों में जिस नवीन चेतना का संचार किया, वह अपने आप में एक प्रशंसनीय कार्य था। 'प्रताप' के दोनों ही संस्करणों ने देशी नरेशों, अफशरशाही तथा जमीदारों–जागीरदारों आदि के पाशविक अत्याचारों के विरूद्ध सदा आवाज उठाईं यही कारण था कि 'प्रताप' के दोनों संस्करणों को सदा इनसे होन वाले अघातों का सामना करना पड़ा, फिर भी भले ही 'प्रताप' का दैनिक संस्करण लगभग सात माह बाद ही बन्द करना पड़ा, किन्तु 'प्रताप' अपने आदर्शो से कभी विचलित नहीं हुआ।[7]

नौ वर्ष तक 'प्रताप' का दैनिक संस्करण बन्द रहने के बाद 21 नवम्बर 1930 से यह पुनः प्रकाशित होने लगा। उस समय विद्यार्थी जी तथा उनके सभी पुराने सहयोगी जेलों में थे। कदम–कदम पर कठिनाईयाँ थी, फिर भी श्री प्रकाशनारायण शिरोमणि के सम्पादन में यह दैनिक संस्करण निकाला। उस समय इसमें संयुक्त प्रान्त की कांग्रेस के अध्यक्ष राजर्षि का एक संदेश प्रकाशित हुआ, जिसमें जनगणना का बहिष्कार करने के लिए कहा गया था। जब यह लेख प्रकाशित हुआ तब सम्पादक प्रकाशनारायण शिरोमणि 'क्रिमिनल एडेम्बडमेन्ट एक्ट' की धारा 17 अ के अंतर्गत 30 दिसम्बर, 1930 को बंदी बना लिए गये। उनपर अभियोग लागाया गया कि उन्होंने अवैधानिक कांग्रेस दल की विज्ञप्ति प्रकाशित करके विधि विरूद्ध कार्य किया है, जबकि वास्तविकता यह थी कि कांग्रेस को अवैध घोषित किया ही नहीं गया था। अतः 'प्रताप' सम्पादक पर लगा यह आरोप नितान्त निराधार था।[8]

इस अपराध के कारण प्रकाशनारायण शिरोमणि को छः मास का सश्रम कारावास और पचास रूपये का अर्थ दण्ड दिया गया।

इस मामले की सैशन जज के वहां अपील हुई। सैशन जज ने अपने निणर्य में पूर्व न्यायालय द्वारा दिये गये दण्डों को रद्द कर दिया। अतः 'प्रताप' सम्पादक एक महीनें के अंदर ही छोड़ दिए गये। इधर देश में राजनैतिक आन्दोलनों का जोर होने के कारण सरकार अत्यन्त निरंकुश हो गयी थी। अतः दैनिक संस्करण असम्भव हो गया और इस प्रकार पैतीस अंक निकालने के बाद 2 जनवरी, 1931 को 'प्रताप' का दैनिक संस्करण पुनः बन्द कर दिया गया।[9]

प्रारंभ में साप्ताहिक 'प्रताप' सोलह पृष्ठों का होता था। दूसरे वर्ष इसकी पृष्ठ संख्या बीस कर दी गयी। इसके दूसरे वर्ष कागज का मूल्य बढ़ जाने पर इसे पुनः सोलह पृष्ठों का कर

दिया गया। कुछ ही दिनों बाद 'प्रताप' पुनः बीस पृष्ठों का कर दिया गया। 25 मई 1925 से इसकी पृष्ठ संख्या बढ़ कर 24 हो गयी तथा सन् 1926 से 1929 तक इसके पृष्ठों में प्रतिवर्ष वृद्धि होती रही, 24 से 28 और 28 से 32 और फिर 1929 में इसकी पृष्ठ संख्या 36 हो गयी थी। सन् 1930 में प्रेस आर्डनेंस के कारण छः माह तक 'प्रताप' का प्रकाशन बंद रहा।[10]

अपनी स्वतन्त्र और निष्पक्ष नीति के कारण 'प्रताप' को बार–बार अंग्रेजी सरकार का कोपभाजन बनना पड़ा फिर भी विद्यार्थी जी अपने पत्रकार धर्म का पूरी निष्ठा के साथ निर्वाह करते रहे। 'प्रताप' अपनी नीतियों के कारण अल्प ही समय में एक लोकप्रिय पत्र वन गया था। तपोमूर्ति विद्यार्थी जी निष्काम भाव से अपनी साधना में लगे रहे। आश्चर्य की बात यह थी। 'प्रताप' के सर्वस्व विद्यार्थी जी पत्र से कम प्रसिद्ध थे। इसके पीछे एक कारण यह भी था कि उसमें सम्पादक विद्यार्थी जी का नाम नहीं छापा जाता था।[11]

प्रथम विश्वयुद्ध का समय 'प्रताप' अभी अपने जीवन का एक ही वर्ष पूरा कर चुका था कि 24 अप्रैल 1915 की रात्रि पुलिस ने आपत्तिजनक साहित्य जब्त करने के लिए 'प्रताप' प्रेस के कार्यालय को घेर लिया। और पुलिस ने कार्यालय का दरवाजा तोड़ डाला। कार्यालय के अंदर रखी अल्मारियों के ताले तोड़ डाले गये। सभी कागजों को तलाशी ली गयी। वहां कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ तो पुलिस वाले प्रेस के रजिस्टर, सादे लिफाफे, कार्ड, जर्मन, जासूसों की राम कहानियाँ तथा युद्ध की कहानियाँ, पुस्तकों की प्रतियाँ, जो भी हाथ लगा हुआ उठा ले गये। इस छापे का 'प्रताप' पर भी बुरा प्रभाव पड़ा। कई लोगों ने 'प्रताप' पढ़ना बंद कर दिया। कई ऐजेण्टों ने भय से अथवा पुलिस के दबाव के कारण ऐजिसिया छोड़ दी और कितने ही ग्राहकों ने 'प्रताप' से हाथ खींच लिया।[12]

'प्रताप' निरन्तर अपनी घोषित नीति पर चलता रहा। उसके 22 अप्रैल 1918 के अंक में नानकसिंह 'हमदम' की एक कविता सौदा–ए–वतन' प्रकाशित हुई। सरकार ने इस कविता को राजद्रोह फैलाने वाली घोषित कर दिया तथा 1916 में विद्यार्थी जी द्वारा दी गयी पूर्वोक्त जमानत जब्त कर ली गयी। सरकार किसी भी मूल्य पर 'प्रताप' को नष्ट करना चाहती थी। सौदा–ए–वतन' नामक कविता इसके लिए एक बहाना मात्र थी।[13]

सरकार की नीतियों के कारण 'प्रताप' को एक व्यक्तिगत सम्पत्ति के रूप में न रखकर इसे एक न्यास (ट्रष्ट) के अधीन कर दिया गया। 'प्रताप' ट्रष्ट का 15 मार्च 1919 को नियमानुसार पंजीकरण भी करा दिया गया।

'प्रताप' की निष्पक्ष नीति के कारण उस पर अनवरतरूप से मनहानी के मुकदमें चले, रायबरेली मनहानि मुकदमें, मैनपुरी मानहानि मुकदमें और साइखेड़ा मानहानि प्रकरण के साथ ही आदलत की आवमानना का एक मामला भी 'प्रताप' पर चला। यह मामला काकोरी काण्ड के अभियुक्तों के विषय में 'प्रताप' के एक लेख से सम्बद्ध था।[15]

सन् 1930 में स्वाधीनता आन्दोलन का सत्याग्रह अपनी चरम सीमा पर था। सरकार ने प्रेस अध्यादेश लागू कर दिया। अतः 'प्रताप' ने भी अपना प्रकाशन 4 मई, 1930 का अंक निकालने के बाद 6 मास के लिए बन्द कर दिया। अध्यादेश की अवधि समाप्त होने पर 9 नवम्बर 1930 से 'प्रताप' पुनः प्रकाशित होने लगा।[16]

'प्रताप' ने उस समय के भारतीय राष्ट्रीय सामाजिक और राजनीतिक जीवन में एक नवीन चेतना जगायी। उसका यह अवदान भारत के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगां विभिन्न आंदोलनों के विषय में 'प्रताप' ने जो लेख लिखे उनका अपने आप में एक अद्वितीय स्थान है। इसके लिए

उसे बार–बार भयंकर अघातों का सामना करना पड़ा। फिर भी वह ध्रुव तारे के समान अपने लक्ष्य पर सदा अटल रहा, उसने दृढ़ता के साथ इन आद्यातों का सामना किया, किन्तु अपने आदर्शो को कभी न डिगने दिया।[17]

समाज के उपेक्षित और दलित वर्गो के लिए भी 'प्रताप' ने महत्वपूर्ण कार्य किये। जनभावनाओं का 'प्रताप' पूर्ण आदर करता था। सामान्य से सामान्य व्यक्ति के पत्रों को भी उसमें स्थान दिया जाता था। उसकी सामग्री सामयिक और रोचक होती थी, किन्तु इसमें इस बात का पूरा ध्यान रखा जाता था कि केवल मनोरंजन के लिए न होकर उद्देश्यपूर्ण भी हो। लेख संक्षिप्त किन्तु उच्चस्तरीय होते थे। इसलिए 'प्रताप' अपने समय का एक लोकप्रिय पत्र था।[18]

लोकहित का 'प्रताप' में सदा ध्यान रखा जाता था। व्यक्ति चाहे कितना ही बड़ा हो, यदि उसकी बात अनुचित प्रतीत होती थी, तो 'प्रताप' उनकी आलोचना करने में पीछे नहीं रहता था, इसीलिए 'प्रताप' में एक दो बार महात्मा गाँधी के भाषणों की आलोचना भी हुई थी।[19]

संदर्भ सूची :

1. गणेशशंकर विद्यार्थी, पृ. –13
2. डॉ. भावना सिंह राणा, अमर शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी, पृ. 27
3. शास्त्री, देव व्रत, गणेशशंकर विद्यार्थी, पृ. 75
4. गणेशशंकर विद्यार्थी, पृ–17
5. गणेश स्मारक ग्रंथ पृ. 130
6. वाजपेयी श्री राककिशोर, गणेशशंकर विद्यार्थी और उनका 'प्रताप' पृ. 23
7. नवीन बालकृष्ण शर्मा, नवीन व्यक्ति एवं काव्य, पृ. 53
8. गणेश शंकर विद्यार्थी, अध्ययन और आत्म विकास, पृ. 16–17
9. व्यास श्री लक्ष्मीशंकर, पराड़कर जी और पत्रकारिता, पृ. 140
10. काल्पी स्मारक ग्रंथ, भारत में क्रांतिकारी आंदोलन तथा गणेश जी, पृ. 132
11. शास्त्री देवी व्रत, गणेश शंकर विद्यार्थी, प्रप्पम संस्मरण, पृ. 75
12. दुबे डॉ. लक्ष्मीनारायण, 'प्रताप' के प्रकाशन का इतिहास, राष्ट्रीय काव्य धारा पृ. 201
13. वाजपेयी श्री अम्बिका प्रसाद, समाचार पत्रों का इतिहास
14. शर्मा श्री राम, स्वर्गीय गणेशशंकर विद्यार्थी, पृ. 19–20
15. द्विवेदी श्री दशरथ प्रसाद, गणेश स्मारक ग्रंथ, पृ. 37
16. गुप्त श्री मैथिलीशरण 'सुधा' गणेश जी, नवम्बर,
17. गणेश शंकर विद्यार्थी, प्रतापी 'प्रताप' पृ. 123
18. 'साप्ताहिक प्रताप' 29 नवम्बर, 1920, पृ. 8
19. गणेश शंकर विद्यार्थी, 'प्रताप', पृ. 150

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

Education: The Root of Foresight and Reverence

Dr. Varsha Singh
Associate Professor
Department of English Deshbandhu College,
University of Delhi, Kalkaji, New Delhi-110019

Dr Santosh Bahadur Singh
Assistant Professor
Department of English
Lady Irwin College, University of Delhi
Sikandra Road, New Delhi-110001

Abstract

Education is only the way which discerns humansfrom the other species of the universe. This is how we empower wisdom to a person to conceive the idea of vaisudhaivakutumbakam (the world is one family). The growth of a person is the growth of a nation. It means the seeds of augmentation lie in the character of a person, what the father of our nation, Mahatma Gandhi used to say, "The end of all knowledge must be building up of character." He focused on the mental, physical and psychic expansion of a person. There must be such education which may embellish a person with the gems of intellectuality and spirituality, make the character bold and full of the vibes of constructive energy. If education creates a space between humans and humanity, there will be nothing but the death of civilisation. So, there is a serious challenge before this generation to protect the earth from such devastations created due to pseudo-education. There is a need to close the loophole in education and make it suitable for the sustainable future of the world. An individual's growth marks the growth of his/her family, society and nation. This paper is an attempt to justify education as the kalpvriksha which fulfils all the desires of a human, but wisdom is required to enable him/her to differentiate the wholesome and unwholesome objectives which decide the fate of an individual and the nation as well. Further, it encompasses some points which move rounds the components which make education valuable.

Keywords: Education report,*Kalpvriksha, Reverence, wisdom, Intellectuality*

Introduction

Education is one of the major parasols to protect a person from the cloud of darkness. The word education is sanctimonious in itself but the delinquency makes it diabolic (having the quality of the devil). The meaning of the term has been completely used as a cog of the wheel of mechanism (the way of physical and mental growth). As a person begins his life, the imposed ideologies (the expectations of parents irrespective of the potentialities of their ward) become the ascendant aphorisms. There is a scurry to chase others and go forward by hook and crook (irrespective of right or wrong). The building pressures subdue the space for the expansion of anticipation, aptitudes and visionary power. And in this way, the whole life is spoiled and shrouded in materialistic cobwebs. The vision of education has been confined only to cognitive learning and skill development, and we never see beyond. Education doesn't mean to shape the mind of a person as we want, but to ignite the hermeneutical rays which are blessed by the nature. Education is about organising the natural longing in human beings to know. For true education, there are some factors like strong character, wisdom, vision and rectitudewhich must be treated like four pillars. In the absence of these pillars, the world of education will be paralysed and the generated mind will be full of husk and straw, what is called pseudo-intellectualism. This is the gap from where a loophole is created in the system as well as in aspirants which affects the future of the nation. Education aims to generate kinetic energy which regenerates the sustainable atmosphere where humanity is nurtured. It strengthens the nation and transcends the vibes beyond time and space. Shri Aurobindo, Swami Vivekananda, the father of our nation Mahatma Gandhi, the educationist and philosopher SarvepalliRadhakrishnan, BinovaBhave, and MaulanaAbulKalam Azad among othervisionary power have stressed true education as the weapon to empower the society and the nation. It is like the Vedic *Kalpvriksha* loaded with fruits which provide a sustainable future to the generation, as is mirrored in the following image:

Education as *Kalpvriksha*

Here, the dark colour of this tree is suggestive of clouds which are full of primordial water (life-bearing substances), symbolising hope, fertility, peace and tranquillity. Education makes a person civilizedas the clouds convert even a barren land into fertile. The above chronology of all the integrated components empowers the education system which is the backbone of a nation. A nation stands with its power and falls with its weakness. Education is the brain of a nation; a nation can be extinguished by itshunting education.So a proper and well-nurtured education system is required to empower the brain of a nation. In the above symbolical tree of education, the pansophy, intellectuality, spirituality, compassion kindness etc. are reflected as its fruits but it stands on the trunk, the backbone that is the TEACHER (GURU). In the absence of the Guru, the education system can never sustain its life asa tree without its trunk. A guru recollects ideas from experiences, reading scriptures, relevant texts and deep meditation which he transcends to his disciples. And in this way, it fulfils the desires like the *kalpvriksha* which has everlasting potential. For one who comes under its shadow, there is nothing but peace, tranquillity and spiritual and intellectual prosperity. If we think about sustainable development, one has to come under the shadow of true education.

Educational Views of Thinkers and Philosophers

There is the utmost need for the proper harmonious relationship between *Manas* (mind), *Buddhi* (wisdom) and *Atman*(Soul) for holistic development. There are always conflictsbetween senses which can either disrupt the harmony of the spirit or just the opposite, the command over them can stabilize peace and ecstasy in the mind and heart which is the ultimate goal of true education. In this connection, we would like to review the view of Shri Aurobindo who has been widely acclaimed as a modern seer and Vedic scholar. According to Shri Aurobindo education should be in accordance with the needs of our real modern life. Butit is very important to identify the 'real need**s'** because needs are dynamic. They continue changing from time to time and place to place. In such circumstances, a person is deviated from the real path and cladded in the blood and mire of lust and greed due to the lack of wisdom to discern between right and wrong. So, the reign of horses must be in the control of the charioteer, and it is possible if there is proper physical, mental and psychic growth which must be the chief concern of education. Only that proper insight, which propels us to explore internal, eternal and external as well, can be the true education. To quote Shri Aurobindo, "Man cannot rest permanently until he reaches some highest good." It means there is a journey between the good and the highest good and during this journey education plays a pivotal role. The success of the journey is decided by the quality of education. So, education must be lashed with spirituality and moral values. Physical purity and mental growth lead toward the realm of spirituality where the "highest good" lies' which is the supreme truth. Education should move around the seeds of emotion, empathy, andrationality which grow up the pansophy to envision the truth of the terrestrial and celestial realm. The heart of a child should be so developed as to show extreme love, sympathy and consideration for all living beings. Education creates a turtle shield which protects the civilization from any type of calamities.

Mahatma Gandhi's Pragmatic View

Here, Shri Aurobindo's approach to education and the value of human life is highly philosophical. He takes education as the Vedic concept of *Kalpvriksha*, which fulfils all human desires and may sparkle our spirit with celestial light. Mahatma Gandhi too has a visionary concept of education but his approach is very pragmatic. To quote from his Autobiography, "I didn't believe in the existing system of education, and I had a mind to find out by experience and experiment…." Here, the experience and experiment should be the property of the education system because a true teacher doesn't teach but he transcends visionary power and inculcate the spirit of the disciple. Gandhi Ji is very particular regarding the quality of a teacher. A teacher must be pragmatic so that he may comprehend the internal culture of a student, then he can create a bold character. Gandhi Ji wrote in *The Story of My Experiment with Truth*:

> I had always given the first place to the culture at the heart of the building of character, and I felt confident that moral training could be given to all alike, no matter how different their ages and their upbringing……. I regarded character building as the proper foundation for their education and, if the foundation was firmly laid, I was sure that the children could learn all the other things themselves or with the assistance of friends.

As a school teacher in South Africa Gandhi Ji very apparently focused on "Character building", and "Moral training" asthe main aim of education. Further, he has stressed peer learning in the last line of the above quotation. In his opinion, the challenges of our life can be tackled if these two qualities are available. It is very relevant to the present time. In the current scenario, there is a hoard in the field of science and technology and a country is evaluated as stronger or weaker on this yardstick. Science and technology arebusy with the creation of the substitute for human beings,but the question arises: Can a human being be substituted? Where will it end? Will it end with the end of human civilization? Is it a boon or ban? This generation is missing the answer to these questions. For the answersto such questions, there is a need to revisit the Gandhian view of education. One who is aware of human values and knowstheir pros and con from all angles, the result will always be constructive and progressive. There must be an equation between the world of Newton and the world of visionary powers likeMahatma Gandhi. Stressing on the role of the character DrBhim Rao Ambedkar told, "I am a man of character. The educated man without character and humility is more dangerous than a beast." Further, he emphasised, that "character is more important than education." Here, the term 'character' has been taken in a very broad sense. Strong character means a vision which has multi-dimensional perspectives. It always leads our *karma* (deeds) toward humanity. The contribution of science and technology to the progress of a nation can never be denied but not in isolation of human welfare which is far from mere ego. The first prime minister of independent India, Pundit Jawaharlal Nehru had special attention to the development of science and technology. Under his realm, a lot of IITs were opened to shape the mind of the generation. And its result is quite visible in post-modern India. The Development of a nation will be paralysed in absence of the knowledge of advanced technology but,

wherever, such balance is equated science is a boon for human civilization and wherever, education is unbalanced, scientific knowledge is aban. It's waiting to bid adieu to the human civilization. The ultimate goal of education is to contribute to the civilization not counteract it. The scientific knowledge in isolation of humanities is incomplete so in our education system, these both have a specific place up to tenth class. It has been well discussed in University Education Report 1948-49. The role of education is very crucial in human life which has been briefly discussed in the next paragraph.

University Education Report 1948-49

After the independence on 15 August 1947, SarvapalliRadhakrishnan, who is globally acknowledged as one of the greatest academicians, philosophers, statesmen and thinkers of the twentieth century was solicited to chair the University EducationCommission. The commission's report assessed the state of university education and made recommendations for its improvements and extensions that may be desirable to suit the present and future requirements of the country. The commission first held its meeting on 6 august 1949, when the first Hon'ble Education Minister of our country MaulanaAbulKalam Azad addressed the meeting and explained that the aim of education is:

- To teach that life has a meaning.
- To awaken the innate ability to live the life of soul-developing wisdom.
- To acquaint with social philosophy which should govern all over institutions, educational as well as political.
- To train democracy.
- To train for self-development.
- To develop certain values like fearlessness of mind, strength of conscience, andintegrity of purpose.
- To acquaint with cultural heritage of its generation.
- To enable to know that education is life long process.
- To develop understanding of the present and past.
- To impart vocational and professional training.

Here, he has focussed on the very crucial role of education, which has an ever-lasting impact on the generation. A good education never isolates a person from their cultural heritage instead, connects. Nowadays, pseudo-intellectuals get isolated from their family, society and cultural heritage. Education teaches integrity, not disintegration. This is a serious question that as one becomes very educated, they migrate from their root, and even they don't want to be identified by their root but, why? There may be a lot of reasons which must be searched out and loopholesin the education system must be closed. Otherwise, the collected value of generations will exude.

Relationship between Education and Teacher

In the above discussion, we find that there is the exigency of integrated learning. Emphasizing the importance of teachersS. Radhakrishnan said in Education Report 1949, "Teacher is the cornerstone of the arch of education." So, in the entire process of teaching and learning, the role of a teacher is more significant, it can neither be negated nor be separated from each other. The relationship between teacher and education is

hub and cog. We spent our childhood to adulthood under the shadow of education and that is cultivated by the teachers. With the strength of educators, the education system stands and with their weakness, it falls. A sustainablefuture depends on qualitative education. A teacher doesn't impart knowledge only, but the personality, wisdom and spirituality also. Teachersare the role model ofthe generationbecause they are imitated and their personality affects the generation.Every action and the way of conduct of a teacher is a source of inspiration. So, the wisdom and insight of the teacher transcend the impact of education beyond time and space.

The Concept of *Acharya* and *Guru*

In our Indian tradition, the term teacher is taken as *Acharya* and *Guru*whose concepts are beyond the English word "teacher" in the literal sense. The word *Acharya* means *achar*(conduct). As a school teacher,Mahatma Gandhi always used to stress character and conduct. The teacher must acknowledge purities and detest impurities. A pleasant behaviour creates positive vibes. The other term *Guru* has been expounded in *Aranyak Upanishad,* verse 16:

गुशब्दस्त्वन्धकारः स्यात् रुशब्दस्तन्निरोधकः।
अन्धकारनिरो धत्वात् गुरुरित्य भधीयते॥ १६॥.

Gushabdasatvandhakarahsyatrushabdastanirodhakah,
Andhakarniridhitvatgururityabhidhiyate

In Sanskrit, the word*Guru* is the combination of two words- *Gu* and *Ru*. *Gu* means *Andhkar* (darkness) and *Ru* means to remove. It means one who "dispels the darkness of ignorance" or transcends from darkness to enlightenment, is a Guru. Andhkar is not intellectual ignorance but spiritual blindness. It means the role of *Acharya* and*Guru* is more than a teacher. Ateacher imparts cognitive learning and skills, but a*Guru* goes beyond mere knowledge. Fifteenth-century Indian mystic poet, Kabir Das has written:

Guru kumbharshishyakumbhhai, GadhigadhiKadhaikhotAntar hath sahara de,
baharbahaichot.

In the above couplet, the poet has very clearly encapsulated the role of a *guru* in our life. He represents a guru with the metaphor of a porter. He does his best to give the beautiful shape and future to a pitcher so that it may be sustainable. Here, the poet has stressed the emotion and sentiment of the guru during the process of the crystallisation of the future of spirants, as a porter does for the pitcher. Sometimes he has to be very callous but he gives abutment from another side so that it may sustain the hardness. This should be the virtue of a teacher. In the other couplet, the poet has focused on tolerance and patience as the quality of a teacher. He writes that even God can annoy and denies His disciple but a *Guru* can never, he is always kind and compassionate to his disciple. But according to the poet, if a guru is indignant, in such a condition, even God can't favour them. Symbolically, the poet wants to say that this cataclysmic (devastative) demerit is always beyond the possession of the*guru*.He teaches the *Datta, DayadhvamDamyata*(Give, be sympathetic and control). It brightens the personality and creates visionary power.

Shri Aurobindo's View on the Principle of Teaching

According to Shri Aurobindo, the first principle of true teaching is "that nothing can be taught." He explains that the knowledge is already dormant within the child.It means potentialities already lie in students. Swami Vivekananda also has the same view that a baby is born with diversified potentialities and every potentiality needs to be cared so that it can be manifested into its full bloom. He defines, "education is the manifestation of the perfection already in man." If a teacher presents himself as an emblematic,he cannot impart prudence and knowledge; only the anxieties and horror will be created while, a teacher's duty is to remove these impurities and ignite the potentialities. If the imposition of ideologies will be dominant in teaching, the life of student will be destroyed; creativity will be spoiled; and teaching learning will be nothing but a boring game. S. Radhakrishnan suggested in his University Education Report:

> The process of education becomes dull if we are unable to interest the live minds of the students. What they learn unwillingly becomes dead knowledge which is worse than ignorance.

Learning does not mean stuffing information in the mind of students. Stuffing the mind with mere cognitive learning cannot run for a long time; it cannot sustain the strong gust of the calamities. It must be pragmatic and full of interest. It must be cladded in the colour of wisdom and skills.Teachers must have the capabilityto peep into the mind and heart of the students. Then he can save from deviation and create interest in the field of aparticular discipline. So, the direct involvement of students is required in the teaching-learning process. For this purpose, teaching pedagogy should be interactive, innovative andcreative.

Conclusion

This is the time to reconstruct our history and much responsibility goes on us who are teachers and parents to educate our young ones about the realities of life. They should be free from the clutches of invisible colonization which still exist in the mind and hearts of our people. Their mind should be trained in such a way so that they could contribute to thenation-building sustainable development. To sum up with the lines of *Gurudev*Shri Rabindranath Tagore:

Where is the mind without fear
and the head is held high,
Where knowledge is free.
Where the world has not been broken up into fragments by narrow domestic walls.
Where words come out from the depth of truth,
where tireless striving stretches its arms towards perfection.

Education should never be connected only to materialistic achievement. A true education creates an azure sky for everyone and empowers a person with a vision to see one in many and many in one.Education ends the darkness, ignorance, and arrogance and creates the perpetual fountain of wisdom and beyond, which as a *kalpbriksha*always nurture sustainable development.

References

Banerjee, A. K. (1991). *DrRadhakrishnan*, B.H.U., Varanasi.
Das, Manoj. (2016). *Sri Aurobindo: The Hour of God.* Delhi: Sri Aurobindo Ashram.
Keer, Dhananjay. (1961). *Ambedkar: Life and Mission.* Bombay: Popular.
Mishra, Anil Dutta. (2012). *Understanding Gandhi*, B.H.U, Varanasi.
Tagore, Rabindranath. Gitanjali: A Collection of poems. New Delhi: General Press.
Waghmare, Prdeep D. (October 2016). Relevance of Educational Philosophy of DrAmbedkar in 21 Century. *Bodhi Journal*, Vol.I, No.I from www.bodhijournal.comhttp://schoolofeducators.com/2012/04/aurobindos-vision-on-education/pdfhttp://collections.infocollections.org/ukedu/en/d/Jh1767e/3.1.htm

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

Identity, Toxic Relation and Justification of Crime through Myth: A critical Study of *Private India: City on Fire*

Md. Monirujjaman
Research Scholar,
Dept. of English,
Veer Kunwar Singh University, Ara

Md. Aslam Parwez
Assistant Professor,
Dept. of English, Jagjiwan College,
Veer Kunwar Singh University, Ara

The tragedy of life is what dies inside a man while he lives.
—Albert Schweitze

Private India: City on Fire is the best selling novel written by the world best thriller writer James Patterson in collaboration with India's best selling contemporary writer AshwinSanghi. The novel covers the subgenre of crime fiction called psycho thriller. It provides 'an outward manifestation of the internal workings of the pathological individual psyche.' The outward manifestation gives an impression of the internal turmoil of the character. The central character Aditi Chopra transgendered as Akash embodies psychological imbalance that is caused by the pathetic family as well as social relationship. He grows with bad tempered environment of the family that causes in him the complicated socialization of the mind, as consequence, the growing traits shapes him a criminal mind that teaches him that society around him is not an ideal place to dwell; it is shaped and structured by the expressive and repressive notion of the complicated ideological mind. The long carrying habits takes the form of disease, it does not remain the habit anymore because the regular effect crosses the corporeal barrier and be the part of the psychic activities. The social structure also encourages the rate of madness, at consequence it remains the part of disease of bodily machinery.

The strong will of the individual remained passive or inactive loses the balance between material and immaterial perception. What the subject matter comes to an individual against the spontaneous reactions of the object, it is justified by the imbalance and socially wrong created mind and knowledge of nuances. At a certain point, the nervous system does not allow the personal to respond to the possible better. For him, the belief system and social relations become absurd. He feels that he has been damned in this world to carry a life as burden. This is how he does not relate himself to the cause but he wishes to fulfill his demands essentially comes from inside out. The most renowned psychiatrist, Henry Maudsley states

> "No one now-a-days who is engaged in the treatment of mental disease doubts that he has to do with the disordered function of a bodily organ – of the brain. ... Insanity is, in fact ... a disorder of the supreme nerve-centres of the brain – the special organs of the mind – producing derangement of thought, feeling and action." (Responsibility in Mental Disease 15)

The above line though carries the condition of the patient, why not a criminal could be treated as a patient. As a consequence, we find in the individual growing with derangement of thought, feeling and action that are quite unnatural of the society. He explains that the patient and criminal produce inability to be sensitive to his disordered function of the supreme nerve of the brain-the special organs of the mind.

The criminal character takes step to kill all those persons specially women who he thinks that they tarnish his personality or abuses him. He thinks that all those responsible persons dehumanize his identity and make his life a disaster. He embodies his life as Durga, the goddess of feminine epitome of strength, this is how he takes his weapon of justification as his inner justification allows him to do criminal act. But he does not realize the fact that he has been suffering from a neurotic disorder that makes him cruel and unkind for tolerance. As Patterson writes:

> "*The mother goddess—Durga—has three basic forms and each of these has three manifestations thus resulting in a total of nine avatars. Each night of the nine-day festival of Navratri is dedicated to one of the nine avatars—* "(P-114)

The central character assumes that he is devotee of Durga, Whatever the criminal acts he commits he sublimates his criminal acts through the religious structure of belief and this is how he omits his crime. As Patterson extends the undergoing sublimation of the character."Yes, Mother was a worshiper of Durga. 'Pray to Durga if you're ever in trouble, Aditi.' And you know what? I did. And you know what good it did me? Fuck all. It brought me to the orphanage, where I met ElinaXavier—the enforcer from hell, who'd cane me mercilessly, hold my head under water, make me piss my pants with fear." (P-234) This is how he justifies himself through his characterization and mental set up.

In his criminal act, he first make victim of Dr. KanyaJaiyen from Bangkok. It is she who did his plastic surgery but he kills her; her dead body was found by her maid of Marine Bay Plaza, SunitaKadam. The reason of his killing to the doctor is quite apparent that is she tried to blackmail him because he was found to be full of irresponsible mind and disordered mind. He can be an easy prey as instrument to take revenge. He takes in his account Shailputri avatar of goddess Durga in which she holds a trident in one hand and a lotus in another hand. "There was a moment of hushed awe when they saw the image of the avatar holding a trident in one hand and a lotus flower

in the other". (P-114) He takes more power through the mythical character Durga who is holding a trident in one hand and a lotus in another hand. By doing crime, he purifies his wayward soul and mind. His act can be analyzed as illogical, bullied, unreasoned or unnegotiated but he concentrates to justify his act of doing, that is all the consequence of his wishes.

He makes another prey by killing of a journalist of Afternoon Mirror, BhhvnaChoksi who tried to interfere in his life and career, she disturbed his so called normal life and created restlessness in him as she tried to delve deep into his life and career that scared him of being exposed before completing his mission. While killing he uses the second Avatar of goddess Durga called Brahmacharini in which she holds water pot in one hand and a rosary in another hand. Nisha quickly flipped the page and found that the second Avatar was called Brahamcharini."She was pictured with one hand holding a water pot, and another holding a rosary."This ties in perfectly with the murder of BhavnaChoksi," said Nisha excitedly."(P-115) This shows that his killing gives him impression of doing enterprises and adventure in his life and career and he wishes to make saga of criminal acts in his life that is governed by the mythical rites. He also appeared to be fearless and doing killing makes him feel as he going to fit the whole matter to right position. Priyanka Talati, a famous Bollywood singer becomes the third victim of his killing. He goes to hunt upon in the third Avatar of goddess Durga named Chandraghanta in which she holds a bell and keeps a semicircular moon painted on her forehead."Nisha browsed the pages to find the third avatar, Chandraghanta. This avatar of Durga was shown riding a tiger. She was holding a bell and had a semicircular moon painted on her forehead. "Priyanka Talati," whispered Nisha to Jack." (P-115) Killing of Priyanka was the matter of sanguine vengeance because the incident gives reference that Priyanka tried to know his secret and torn his clothes being drunk. In addition to this, she had also made him of fun in Thailand. This creates anger in the character and arouses his deranged mind to take action and justifies his inner voice.. "Drunk one night, she tore at my clothes and discovered my secret. Her laughter cost her life." (P-237). The strangest mind is filled with beat fast when he is mocked by Priyanka, he loves the moment to take revenge . It is easy for the criminal to take revenge but it is equally extremely difficult to prevent his arousing emotion to do criminal act. He makes the fourth victim by killing Mrs. Elina Xavier, a widow in her mid-fifties and Principal of the orphanage school Aakash attended. He kills her in the fourth avatar of Durga called Kushmanda which is considered to be the creator of the egg-shaped universe. "The name Kushmanda is derived from two separate Sanskrit words," Jack read out, "kushma, which means warmth; and anda, which refers to the cosmic egg. So Kushmanda is considered to be the creator of the egg-shaped universe.""Elina Xavier was left on her bed with a dozen eggs placed in an oval patternaround her," Nishaconfirmed."(P-115) He targets further to Elina Xavier, he strangles her by a yellow scarf to take his revenge, he does this because Elina was extremely torturous to him along with his other classmates. "It brought me to the orphanage, where I met ElinaXavier—the enforcer from hell, who'd cane me mercilessly, hold my head under water, make me piss my pants with fear." (P-234) His

mother Lara Omprakash (real name Jamuna Chopra) famous actor-turned director is his fifth victim. As she borne him illegally impregnated by Attorney GenralNalin D'Souza, she did not bring him out before people as her child. She threw him in an orphanage to his own fate so that he cannot become a hurdle in her glamorous career in the Bollywood world.

In this consequence he uses the fifth avatar of Goddess of Durga named skandamata for his mother in which she holds her son on her lap "Jack hurriedly turned the page to the fifth form of Durga. Her name was Skandamata. She was depicted as holding her son—aninfant—on her lap. "Lara …" Jack sighed, slumping in his seat."(P-116) In the sense of cruelty he moves further to target his sixth victim Ragini Sharma who was once a prostitute, by degrees she becomes the owner of the brothel and later an MLA. He strangles his sixth target and leaves her dead body in the sixth Avatar of goddess Durga called Katyavani in which she is depicted seated on a lion. The seventh victim lies on the target of Mrs. Justice Anjana Lal in the Avatar of Kaalratri in which she is depicted sitting on a donkey. His eight victim is Devika Gulati and ninth one is NishaGandhe herself. He takes the lives of the last three because he thinks that the last three are responsible for his misery and suffering in jail. NishaGhandhe has arrested him for drug smuggling, Justice Anjana Lal had sentenced him imprisonment and there he was suffered by DevikaGulati."Yes. Evil sex-mad bitch that she was. She violated me repeatedly in the most disgusting and demeaning manner possible." He shuddered at the thought. "She was an angry woman—confused about her sexuality—and took out all her anger on me."(P-237) But finally NishaGandhe is saved from the mouth of death when she was under strangulation. Mr. Santosh was a RAW officer and now working under a private detective organization named Private India and jack Morgan who is the founder of the Private India appeared on the spot and put up a strong fight and defeated Aakash.

Apart from the main plot of the novel, there are many subplots that deal with multiple themes of the subcontinent such as the dark reality of the developed industrial megacity like Mumbai and the other side crime, terrorism and increasing graph of hustle and bustle. The subplot of the novel brings forth very interesting level of the concept of the thug. The portrayal of the Mr. Santosh in the novel fits into the befitting zone of developing crime and offence and settle the authoritative system of the institution. The yielding of the word thug comes into the mind of the character as he takes a vivid description of the life and act of thug in the past referring to the middle part of the nineteen century during the British time. The imagination comes into the mind with a picture of a group of people who assist travellers being too gentle towards them; when they make the travellers come to the destination, they cheat them and show their appearances as they are thugs. It was the time of William Bentik, an honest administrator of the British Empire in India; he took initiative to eradicate this profession. An army officer of Bentik Contemporary, a civil servant William H Sleeman who spoke that thugs spoke a secret language and it was decoded by other groups of thugs like Highwaymen of the social history of English Society.Mr. Wagh

comes with summation that they used to maintain some principles as not harming them, neither looting poor but they used to loot some foreigners, film stars, journalists, musicians and some rich men of the time.

The recurrent scene of the novel is also contextualised as there was a heinous terrorist activities of the ISI in India especially in Kashmir. There were some active terrorist organisation working in that province like Laskar-e-Taiba and Indian Mujahideen were destroying the peace of the state Kashmir by backed up the country Pakistan :"Investigations by security agencies had revealed that the Indian Mujahideen was actually a front for the Pakistan-based Lashkar-e-Taiba. The avowedpurpose of the Lashkar was to create an Islamic caliphate across South Asia and, to that end, it had been sponsoring acts of terror in Kashmir as well as other parts of India, having been provided with moral, strategic, and financial support by Pakistan's premier intelligence agency, the ISI." (P-95). All these organisation were committed to destroy lives of innocent people. Further, Mr. Wagh remembers the terrible incident of terrrorist attack in Mumbai. The terrorists related to these organizations plotted RDX on the running trains and blew the suburban railway stations. The incident killed almost two hundred people and many injured . "*SANTOSH REMEMBERED THAT week vividly. It was impossible to forget.*

> *Seven bomb blasts had taken place during a period of eleven minutes inMumbai starting at 6:25 p.m. The bombs had been set off on trains runningalong the Western Line of the railway network and had gone off in the vicinity ofsuburban railway stations—Matunga, Mahim, Bandra, Khar, Jogeshwari,Bhayander, and Borivali. Pressure cookers had been used to increase theafterburn of the thermobaric explosions. During those eleven minutes, twohundred and nine people had been killed and over seven hundred injured."* (P-98)

Mumbai is supposed to be the top most industrialist mega city and dream land for the people of India where people from every corner of the country come to fulfill their dream i.e. encashing their black money and sparing a luxurious lives. The other side the state is rich because there is a bid film industry of Bollywood, it is instrumental to attract people who have their curious interest in this zone. There are some geographical places like Juhu beach and Chowpatthy Beach celebrated by some rich and money making people. But the author of the novel also describes lives of gangster, mafia \, highwayman, smugglers and all those who are engaged in women and drugs trafficking. All these activities have been shown in the cinema called Slumdog Millionaire in 2008. The movies captures the life of a character who comes from slum area and he becomes millionaire highlighting how children choose the option of trafficking as children shown amputated by the leader of begging syndicate to draw sympathy of the passersby and thereby collect a lot of money. It is mentioned that Mr. Wagh has connection with an amputated man as a resource person. The story of his life is pathetic. The young character escapes from the father's oppression and come to Mumbai and joins the criminal activities. Being a child he does not have option to earn

so he prefers to beg on the street to survive. In trap of some other beggars, he comes to a hospital where his arm is amputated by the doctor who is given bribe to do so. All the money collected by the hapless kids is siphoned off by leader of the begging syndicate.

> "He had soon been placed in a taxi and taken to one of the municipal hospitals of Mumbai, where a doctor had been bribed to amputate his healthy arm. He had been deliberately handicapped so that he could be used as an object of pity, begging at street corners, traffic lights, and the religious sites of Mumbai. This was part of an organized racket known as the begging syndicate, and the boy spent the next five years of his life doing precisely that. At the end of each day, his handler would round up the unfortunate kids he had put on the streets and siphon off the daily take, leaving them with next to nothing." (P-107)

There is one more interesting theme that the writer shows a sort of political corruption in the Indian Politics, it is hard reality that Indian politicians are corrupt and engaged themselves in the political corruption and making money. The novel presents the story of Ragini Sharma who was just a prostitute, later became an owner of the brothel, social worker and later a renowned politicians as a member of parliament. There is another story regarding the life of Phoolan Devi, she is also known as Bandit Queen who killed twenty people. She also became a renowned politician and member of parliament. The story also reflects the life of a famous member of parliament, Nalin D'Souza, a person of the highest rank of Government administration in Attorney General. He is also known as a corrupt administrator who is indulged with many women besides being a married fellow. Akash (Aditi Chopra) is a psycho killer of the story. He is an illegitimate child conceived by Lara Omprakash (Jamini Chopra) through Nalin D' Souza and throw away to live a life on the destiny. "Stranger things have happened in Indian politics," argued Nisha. "Over thirty percent of Members of Parliament have criminal cases pending against them. The figure is even higher in the state assemblies. Phoolan Devi, the famous Bandit Queen, who had killed twenty-two villagers in cold blood during her life as a *dacoit*, was subsequently elected to parliament even though she had thirty criminal cases conducted against her. Ragini Sharma pales in comparison." (P-152) It is shown throughout the narratives that almost all politicians mentioned are corrupt and committed crimes in their career. That is a big irony of the nation.

Above all, the criminal activities committed by the central Aditi Chopra transgendered as Aakash as well as the amputated man who firstly becomes himself a victim of the begging syndicate and later a lord of another syndicate created by him and acts as a resource person for Mr Wag, in this crime fiction can be considered to be the product of the situation and the socio-political environment they have gone through. In his book Serial Murders and Their Victims, Eric W. Hickey puts it rightly, 'Social structure theories focus on individuals' socioeconomic standing, suggestingthat poor people commit more crimes because they are stifled in their quest forfinancial or social success. Specifically, offenders, as a result of their racial, ethnic,or subcultural standing, are blocked in various ways from achieving the"American Dream" through legitimate means. Consequently, they seek successthrough deviant methods.' (P- 87)

The anti-social behavior of Aakash can be considered as the result of deprivation of his parents' caring as in their book Criminal Behaviour : A Psychological Approach, Curt R. Burtol and Anne M. Burtolwrite;'Protective factors, characteristics, or experiences found in a nurturing environment can shield children from serious antisocial behavior. Warm and caring parents and a high-quality educational experience are examples. In general, a nurturing environment minimizes biologically and socially toxic conditions that influence healthy development (Biglan*et al*., 2012)'. (P- 31) The exact nature of the relationship between poverty and violence is not well understood.This is because poverty is intertwined with a large number of influences that are called povertyco-factors (Yoshikawa, *et al*., 2012). And others mentioned in this crime fiction like prostitution, child trafficking and begging syndicate is rooted in poverty, 'For example, poverty is often accompanied not only byinequitiesin resources, but also by discrimination, racism, family disruption, unsafe living conditions,joblessness, social isolation, and limited social support systems (Evans, 2004; Hill, Soriano,Chen, &LaFromboise, 1994; Sampson &Lauritsen, 1994)'. (P- 32, Criminal Behaviour : A Psychological Approach by Curt R. Burtol and Anne M. Burtol). At orphanage, during his childhood, Aakash suffers from a trauma called Enuresis as Elina Xavier, the Principal of his orphanage school tortures to 'make me piss my pants with fear', 'The trauma some children experience as the result of physical, sexual, or emotional abuse can trigger frequent bed-wetting. Like those who practice animal torture or experimentation, chronic bed-wetters appear to cease the maladaptive behavior as they approach adulthood. Defined as unintentional bed-wetting during sleep, persistent after the age of five, enuresis evokes emotional and social distress for the child sufferer.' (P-101). Thus all these factors like physical abuses, maltreatment and parents' negligence that makes him suffer from identity problem, make him a pathological character and leads him to commit the crimes turning him into a serial killer.

References:

Bartol, Curt. R. Bartol, M. Anne. *Criminal Behaviour: A Psychological Approach*. New York: Pearson Publishing;2013.

Hicky, Eric. W. *Serial Murders and Their Victims*. Wadsworth Publishing; 2009.

Maudsley, Henry. *Responsibility in Mental Disease*. New York: D Appleton; 1899.

Patterson, James. SanghiAshwin. *Private India: City on Fire*. New York: Grand Central Publishing; 2006.

Rzepka, Charles. Horsley, Lee. *A Companion to Crime Fiction*. Wily-Blackwell Publishing; 2010.

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

काव्य में बिम्ब का महत्त्व

रेणु बाला
एसोसिएट प्रोफेसर,
आत्माराम सनातन धर्म कॉलेज,
पता– 109, मनचाहत अपार्टमेंट, प्लॉट– 42, सेक्टर– 10, द्वारका,
नयी दिल्ली–110075

काव्य में बिम्ब का महत्त्व इस बात पर निर्भर करता है कि काव्यात्मक उत्कर्ष में वह किस सीमा तक सहायक होता है, दूसरे शब्दों में कविता के काव्यात्मक उत्कर्ष में उसका क्या योगदान है। काव्य में बिम्ब स्थापना को प्रधान वस्तु मानते हुए आचार्य शुक्ल का कहना है कि "काव्य चित्रविधा और संगीत दोनों की पद्धतियों का कुछ–कुछ अनुसरण करता है। विभाव और अनुभाव दोनों में रूप–विधान होता है जिसका उसी प्रकार कल्पना द्वारा स्पष्ट ग्रहण वांछित होता है जिस प्रकार नेत्र द्वारा चित्र का। अतः मूर्त–भावना की आवश्यकता सबको स्वीकार करनी पड़ती है।"[1] इस मूर्त–भावना की आवश्यकता को स्वीकार करने के कारण ही वे काव्य में अप्रस्तुत–विधान को उसी सीमा तक उक्ति मानते हैं जिस तक उससे "बिम्ब–ग्रहण करने में, दृश्य का चित्र हृदयगम करने में, श्रोता या पाठक को बाधा न पड़े।"[2]

काव्य में बिम्ब के महत्व को लेकर आलोचकों में पर्याप्त मतभेद हैं। एकओर तो वे आलोचक है जो भाषा को काव्य–भाषा में रूपांतरित करने के लिए बिम्ब की अनिवार्यता को स्वीकार करते हुए उसे काव्य–मूल्यांकन के प्रतिमान–रूप में प्रतिष्ठित करते हैं, तो दूसरी ओर वे आलोचक हैं जो बिम्बों को काव्य के लिए हानिकारक मानते हुए उसे वास्तविकता के साक्षात्कार से बचने का उपकरण स्वीकार करते हैं।

बिम्ब को काव्य के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मानते हुए 'तीसरा सप्तक' में केदारनाथ सिंह ने घोषणा के स्वर में कहा– "कविता में सबसे अधिक ध्यान देता हूं बिम्ब–विधान पर। बिम्ब का सम्बन्ध जितना काव्य की विषय वस्तु से होता है, उतना ही उस के रूप से भी। विषय को वह मूर्त और ग्राह्म बनाता है, रूप को संक्षिप्त और दीप्त।"[3] आगे काव्य–बिम्ब को मूल्यांकन के प्रतिमान–रूप में स्वीकार करते हुए कहा कि "एक आधुनिक कवि की श्रेष्ठता की परीक्षा उसके द्वारा आविष्कृत बिम्बों के आधार पर ही की जा सकती है। उसकी विशिष्टता और उसकी आधुनिकता सबसे अधिक उसके बिम्बों में व्यक्त होती है।"[4] काव्य में बिम्ब का स्थान निर्धारित करते हुए कहा कि "प्राचीन काव्य में जो स्थान 'चरित्र' का था, आज की कविता में वही स्थान 'बिम्ब' अथवा 'इमेज' का है।"[5] इसके विपरीत डॉ. नामवर सिंह का कहना है कि "कविता में बिम्ब–रचना सदैव वास्तविकता को ही मूर्त नहीं करती, कभी–कभी यह वास्तविकता का अमूर्तन भी करती है। (वैसे मूर्त और अमूर्त शब्दों का प्रयोग पर्याप्त अनिश्चित अर्थों में होता है।) कविता में बिम्ब वास्तविकता के साक्षात्कार का सूचक नहीं होता, प्रायः वह वास्तविकता से बचने का एक ढंग रहा है। काव्य–भाषा के लिए भी बिम्ब–योजना हानिकारक सिद्ध हुई है। बिम्बों के कारण कविता बोलचाल की भाषा से अक्सर दूर हटी है, बोलचाल की सहज लय खण्डित हुई है, वाक्य विन्यास की शक्ति को धक्का लगा है, भाषा के अन्तर्गत क्रियाएं उपेक्षित हुई हैं, विशेषणों का

आवश्यक भार बढ़ा है और काव्य–कथ्य की ताकत कम हुई है।"[6] वस्तुतः डॉ. नामवर सिंह ने काव्य में बिम्ब का नहीं अपितु बिम्बवादी रूझान का विरोध किया है, क्योंकि बिम्ब का बोलचाल, उसकी सहज लय, वाक्य–विन्यास की शक्ति, क्रियाओं, विशेषणों और काव्य–कथ्य की सबलता से कोई विरोध नहीं है। इसीलिए डॉ. नामवर सिंह ने जिस सपाटबयानी की चर्चा की है वह भी बिम्ब से रहित नहीं है। वास्तव में देखा जाए तो बिम्ब साक्षात्कार से बचने का ढंग नहीं है, अपितु वह अमूर्त विचारों की परिधि से बाहर ले जाकर जीवित और ठोस वस्तुओं से हमारा साक्षात्कार कराता है। बिम्ब भाषा की सहज लय को खण्डित नहीं करता बल्कि भाषा के जीवंत स्वर रूपांतरित होकर उसके काव्यगत अर्थ में गतिशीलता लाता है। इसी गतिशीलता के द्वारा काव्य तथा बिम्ब दोनों की आन्तरिकता का निर्माण होता है क्योंकि काव्य की भाववस्तु के साथ बिम्ब की घनीभूत एकता दोनों को परस्पर विकसित एवं नियंत्रित करती है। इसलिए कुछ आलोचकों की यह मान्यता है कि कविता को एक घनीभूत बिम्ब के रूप में देखना चाहिए, क्योंकि बिम्ब कविता का केन्द्रीकरण करता है अर्थात् उसे बिखरने से बचाता है। समृद्ध बिम्ब योजना के अभाव में कविता में न तो ठोस संगठन मिलता है और न ही सार्थक नियंत्रण।

वस्तुतः काव्य में बिम्ब का महत्त्व प्रयोक्ता की क्षमता पर निर्भर करता है। गिरिजा कुमार माथुर का कहना है– "चमत्कार के लिए प्रयुक्त बिम्ब कलात्मक नहीं होते क्योंकि वे उपमान और उपमेय में खाई पैदा करते हैं। फलतः बिम्ब वस्तु छवि को अंकित करने की जगह उसे पूर्णतः मिटा देते हैं।"[7] अर्थात् बिम्ब विधायिनी कविता कमजोर वहां होती है जहाँ कवि वास्तविक और ठोस स्थितियों से साक्षात्मकार के बजाय केवल चमत्मकार के लिए बिम्ब का विधान करता है। कवि काव्य में बिम्ब के माध्यम से बिखरी हुई अनुभूतियों और जटिल संवेदनाओं को रूपायित करता है, इसके अभाव में कविता बिखरे हुए असम्बद्ध बिम्बों का अभाव मात्र लगती है। जिन बिम्बात्मक कविताओं में अनुभवों का सरलीकरण और भाषा तथा अनुभव के बीच गहरी खाई होती है वे कलात्मकता की दृष्टि से कमजोर होती हैं। बिम्ब की सार्थकता काव्य में तभी होती है जब वह वास्तविकता से गहरे स्तर पर सम्पृक्त होता है। रामस्वरूप चतुर्वेदी बिम्ब को यथार्थ से साक्षात्मकार का दक्ष उपाय मानते हैं– "यथार्थ अनुभव को उसकी सम्पूर्णता और गतिमयता में पकड़ने के लिए बिम्ब रचना साक्षात्कार का दक्ष उपाय है। साधारण शब्द अनुभव को जड़ और निःशेष कर देता है, पर बिम्ब अनुभव को न केवल उसकी वर्तमान स्थिति में वरन् उसकी संभावनाओं में भी उसकी पूरी जटिलता और सूक्ष्मता के साथ अंकित करता है।"[8] बिम्ब में ऐन्द्रियता की अनिवार्यता और उसके फलस्वरूप मूर्तिमत्ता के आग्रह के कारण कविता का यथार्थ से सुदृढ़ सम्बन्ध स्थापित हुआ है।

काव्य में बिम्ब का होना आवश्यक होता है। किन्तु प्रश्न यह उठता है कि क्या बिम्बों की सजीवता, ऐन्द्रियता, समृद्धता, प्रसंगानुकूलता, वैविध्य एवं वैचित्र्य के आधार पर अन्य गुणावगुण समान रहने पर भी किसी काव्यकृति को दूसरी से श्रेष्ठ ठहराया जा सकता है। इस सम्बन्ध में डॉ. नगेन्द्र का कहना है कि "जिस कृति में प्रयुक्त बिम्ब अधिक सजीव और ऐन्द्रिय हैं वह, अन्य गुणावगुण बराबर रहने पर भी, दूसरी की अपेक्षा अधिक मूल्यवान है"[9] परन्तु बिम्बों का प्रेरक तत्व वे अनुभूति को मानते हैं और अनुभूति की तीव्रता के आधार पर काव्य की श्रेष्ठता, अश्रेष्ठता व काव्यात्मकता, अकाव्यात्मकता का निर्णय करते हैं "बिम्ब अमूर्त अनुभूति को शब्द–मूर्त करने के अत्यन्त प्रभावी माध्यम–उपकरण या दूसरे शब्दों में मूर्तन–प्रक्रिया के अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग हैं, इसमें सन्देह नहीं– परन्तु इनका स्वतन्त्र महत्त्व नहीं है : इनमें जो प्रभावी शक्ति है वह अनुभूति की ही है; काव्य–बिम्ब में जो काव्य–तत्त्व है उसका आधार अनुभूति–भावानुभूति ही है। भाव से असम्पृक्त या अत्यन्त परोक्ष रूप में सम्पृक्त इन्द्रिय बोध या कल्पना (क्योंकि भाव से सर्वथा

असम्पृक्व इन्द्रियबोध या कल्पना हो ही नहीं सकती) बिम्ब की सृष्टि कर सकती है, काव्य–बिम्ब की नहीं। अतः अनुभूति के उत्कर्ष से बिम्ब का उत्कर्ष होता है यही सत्य है।"[10]

अनुभूति तथा बिम्ब दोनों का उत्कर्ष अन्योन्याश्रित है इस तथ्य को उदाहरण देकर सिद्ध किया जा सकता है–

"चिन्ता करता हूं मैं जितनी
उस अतीत की, उस सुख की
बनती जाती है अनन्त में
उतनी रेखाएं दुःख की।"[11]

इन पंक्तियों में अनन्त में बनती हुई दुःख की रेखाओं का कोई स्पष्ट बिम्ब हमारे सामने नहीं आता क्योंकि दुःख अपने आप में अमूर्त है। इसलिए दुःख की रेखाओं का कोई भौतिक रूप हमारी आंखों के आगे अंकित नहीं होता। परन्तु, अनुभूति की तीव्रता के कारण बिम्ब का स्वरूप अस्पष्ट रहने पर भी काव्यात्मक उत्कर्ष की दृष्टि से ये पंक्तियां अपना विशेष महत्त्व रखती हैं। ऐन्द्रिय बोध की अस्पष्टता के कारण हमें इन पंक्तियों का ग्रहण भौतिक स्तर पर न होकर संवेदना के स्तर पर होता है जहां इनका अभीष्ट प्रभाव पड़ता है।

"चींटी को देखा?
वह सरल, विरल, काली रेखा
तम के तागे–सी जो हिल–डुल
चलती लघुपद पल–पल मिल–जुल
वह है पिपीलिका–पांति।"[12]

इन पंक्तियों में बिम्ब तो स्पष्ट है किन्तु अनुभूति की तीव्रता न होने के कारण इनका काव्यात्मक मूल्य अधिक नहीं आंका जा सकता। काव्य में बिम्ब अनुभूति को तीव्र बनाता है और जब वह उसे तीव्र करने की अपेक्षा उसका सरलीकरण करता है अथवा उसमें शैथिल्य लाता है तो वह अलंकरण मात्र रह जाता है।

"और उस मुख पर वह मुस्कान
रक्त किसलय पर ले विश्राम
अरुण की एक किरण अम्लान
अधिक अलसाई हो अभिराम"[13]

इन पंक्तियों में मुस्कान के अनुभव को कवि ने संश्लिष्ट और सूक्ष्म रूप में व्यंजित किया है। उदित होते हुए सूर्य की दूर से आती हुई किरण, थकी–सी, एक रक्तिम कोमल किसलय को पाकर क्षण भर के लिए विश्राम की मुद्रा में अलस–भाव से लेटी है। यह पूरा बिम्ब भाव के स्तर पर कई तत्त्वों से निर्मित हुआ है और इन तत्वों के पारस्परिक संश्लेषण से ही मुस्कान का सूक्ष्म रूप व्यंजित हो सका है। रक्त–किसलय और अरुण–किरण विशेषणों के द्वारा प्रसाद ने अधरों की गहरी लालिमा से मुस्कान की हल्की लालिमा को अलगाते हुए सूक्ष्म वर्णबोध का परिचय दिया है। अलसायी विशेषण से किरण शब्द में अधिक मूर्तता आ गई है और मुस्कान क्षण भर के लिए

अधरों पर ठहर गयी है। उसकी ताजगी, सूक्ष्मता, रंगमयता, आलस्य भाव, सौन्दर्य सब मिलकर एक संश्लिष्ट बिम्ब का निर्माण करते हैं और साथ ही कवि की अनुभूति के वैशिष्ट्य को भी प्रकट करते हैं। इन पंक्तियों में काव्य अनुभूति तथा बिम्ब दोनों एक दूसरे को प्रभावित करते हैं, बिम्ब की स्पष्टता के कारण अनुभूति में तीव्रता आई है और अनुभूति की समृद्धता के कारण बिम्ब में सम्पन्नता।

इस प्रकार अनुभूति और बिम्ब एक दूसरे को समृद्ध बनाते हैं। फिर भी, बिम्ब काव्य का साधन ही है साध्य नहीं और काव्य में बिम्ब का महत्व इसी रूप में है। डॉ. नगेन्द्र के शब्दों में कहें तो "बिम्ब काव्य का अत्यन्त प्रभावी माध्यम है और इसीलिए काव्य के सन्दर्भ में उसका मूल्य असंदिग्ध है, परन्तु वह स्वतन्त्र नहीं है—माध्यम ही है, प्राणतत्त्व नहीं है : काव्य का सहकारी मूल्य अवश्य है, प्राथमिक मूल्य नहीं है।"[14]

संदर्भ सूची :

1. रस मीमांसा, पृ. 326—327
2. वही, पृ. 123
3. वक्तव्य, पृ. 114
4. वक्तव्य, पृ. 115
5. वक्तव्य, पृ. 116
6. कविता के नये प्रतिमान; पृ. 139
7. अवन्तिका, काव्यालोचनांक, पटना, जून— 1954; पृ. 248
8. आलोचना, जनवरी—मार्च, 1970, अंक 12, पृ. 14
9. काव्य—बिम्ब, पृ. 57
10. वही, पृ. 62
11. कामायनी (चिन्तासर्ग)— प्रसाद, पृ. 8
12. युगवाणी, पंत, पृ. 9
13. कामायनी (श्रद्धा संर्ग), प्रसाद, पृ. 22
14. काव्य—बिम्ब, डॉ. नगेन्द्र, पृ. 62

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

पारिवारिक वातावरण के सन्दर्भ में माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन

शोध निर्देशक
डॉ0 प्रवीन कुमार सिंह
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
शिक्षक शिक्षा विभाग (बी0एड0)
सल्तनत बहादुर पी0जी0 कालेज,
बदलापुर, जौनपुर (उ0प्र0)

शोधकर्त्ता
अतुल कुमार सिंह
एम0ए0, एम0एड्0, नेट (शिक्षाशास्त्र)
वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय,
जौनपुर (उ0प्र0)

सारांश

समस्या कथन **''पारिवारिक वातावरण के सन्दर्भ में माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन'' करना है।** अध्ययन में सहसम्बन्धात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। अध्ययन हेतु जनसंख्या में प्रयागराज जनपद में उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद द्वारा सम्बद्ध माध्यमिक विद्यालयों में कक्षा–11 के विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन हेतु न्यादर्श का चयन प्रयागराज जनपद के माध्यमिक विद्यालयों में से किया है। इन विद्यालयों के 10+2 स्तर के समस्त छात्र समष्टि है तथा शोध अध्ययन के लिए चयनित विद्यार्थी न्यादर्श है। प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श के चुनाव हेतु यादृच्छिक प्रतिदर्शन विधि का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में प्रयागराज जनपद के 5 उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद से सम्बद्ध माध्यमिक विद्यालयों का चयन कर माध्यमिक विद्यालयों में से कुल 200 विद्यार्थियों (छात्र एवं छात्राओं) का चयन यादृच्छिक विधि से किया गया है। उपकरण के रूप में शैक्षिक उपलब्धि के लिए विद्यार्थियों की हाईस्कूल परीक्षा में प्राप्त प्राप्तांकों को तथा डा0 करूणा शंकर मिश्रा द्वारा निर्मित ''पारिवारिक वातावरण अनुसूची'' का प्रयोग किया गया है। आँकड़ों के विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन, मानक त्रुटि एवं टी–अनुपात सांख्यिकी विधियों का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष में पाया गया कि– उच्च एवं मध्यम पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में अन्तर नहीं है। उच्च एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में अन्तर है। मध्यम एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में अन्तर है।

मुख्य–शब्द– पारिवारिक, वातावरण, माध्यमिक, छात्र–छात्राएँ, शैक्षिक उपलब्धि

प्रस्तावना–

अनौपचारिक अभिकरण मे परिवार का स्थान सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है जहाँ पर बालक माता–पिता से शिक्षा प्राप्त करता है क्योंकि माता–पिता परिवार की धूरी है उन्हीं के इर्द गिर्द समपूर्ण परिवार संगठित रहता है प्रेम स्नेह एवं सौहार्द परिवार के आधार है बालक परिवार मे जन्म लेता है वही पर वह उठना बैठना खाना पीना दौडना चलना सभी कुछ सीखता है भाई बहनो से बाते कारना माता पिता अतिथि आदि का आदर करना वह सभी गुण परिवार से सीखता है परिवार मे उसे लेक्चर नही दिया जाता। वहा पर सिद्वान्तों का साक्षात दर्शन होता है अतः बालक के मानसिक पटल पर सीखी गई बाते स्थायी होती है। **महामना पण्डित मदन मोहन मालवीय** जी कहते है कि मैने बचपन से ही जो कुछ सीखा था वही मेरी शिक्षा है। **महात्मा गांधी** ने अपनी माता से धार्मिक आचरण की सही शिक्षा प्राप्त की थी। **जगदीश चन्द बसु** को अपने महान वैज्ञानिक अन्वेक्षण की सूझ बचपन मे अपनी माता की उक्ति से मिली थी जीजाबाई ने ही शिवाजी मे वीरता की भावना भर दी थी। इसलिए सभी महापुरूषाो ने माता पिता का ऋण स्वीकार किया माता को भारतीय साहित्य मे आदि गुरू कहा गया है।

परिवार के संदर्भ में प्रसिद्ध समाजशास्त्री **आगबर्न निमकॉफ ने लिखा है–** ''परिवार वह संगठन है जिसमें पति और पत्नी का कम या अधिक स्थायी संगठन हो, जिसमें बच्चे हो भी सकते है और नही भी या जिनमें केवल एक पुरुष हो या केवल एक नारी जिन्हें बच्चे हो सकते हैं।'' परिवार की यह परिभाषा सदस्यों की

संख्या की दृष्टि से सही है परन्तु आत्मीयता, व्यवस्था, लालन–पालन ओर यौन सम्बन्धों की निश्चितता का अभाव पाया जाता है। इस कारण इन तत्वों को जोड़कर परिवार की परिभाषा को पूर्ण किया जाता है।

इस संदर्भ में **डॉ0 आर0एस0पी0 सिंह ने लिखा है–** ''पारिवारिक वातावरण से विद्यार्थियों की शैक्षिक प्रगति प्रभावित होना निश्चित है। यह प्रभाव सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों हो सकता है।'

पारिवारिक वातावरण में अभिभावक का बालक के समर्थन, बालकों की बात पर ध्यान देना एवं उनको सुनना, बालकों को स्नेह के साथ–साथ प्यार, बालकों को आराम देना, बालकों की स्वतंत्रता पर विशेष ध्यान देना, बालकों के प्रकटीकरण, विश्वास, बालकों को सुझाव एवं सलाह, बालकों की जरूरतों का पूरा करना, बालकों के जेब एवं शैक्षिक खर्चों का निर्वाह, बालकों के साथ खुले विचार, उनके साथ समय व्यतित करना तथा विद्यालय के शैक्षिक कार्यों के साथ सामाजिक, सांस्कृतिक कार्यक्रमों में सहयोग प्रदान करना इत्यादि बालकों में उत्साह के साथ–साथ उनके व्यक्तित्व, मानसिक, सांवेगिक तथा शैक्षिक विकास में वृद्धि का सबसे बड़ा कारक बताया गया है।

वैसे भी सामान्यतः यह देखा जाता है कि माध्यमिक स्तर पर अपव्यय तथा अवरोधन की समस्या के अतिरिक्त शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करने वाले अनेक कारक उत्तरदायी हैं। जैसे– सामाजिक आर्थिक स्थिति, भौगोलिक दशायें, जनसंचार साधनों से पृथकता, अप्रांसगिक पाठ्यक्रम, अनुपयुक्त शिक्षण विधियों बालकों के प्रति शिक्षकों की अभिवृत्ति, रुचि, बुद्धि आकांक्षा स्तर, संवेगात्मक बुद्धि तथा उच्च मानसिक स्वास्थ्य एवं निम्न मानसिक स्वास्थ्य, विद्यालय का सामाजिक–मनोवैज्ञानिक पर्यावरण, पारिवारिक पर्यावरण, समायोजन एवं माता–पिता का प्रोत्साहन इत्यादि।

अतः अध्ययनकर्ता द्वारा अपने विषय में माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर पारिवारिक वातावरण के प्रभाव देखने का प्रयास किया गया है।

समस्या कथन–

''पारिवारिक वातावरण के सन्दर्भ में माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन।''

अध्ययन का उद्देश्य–

1. माध्यमिक स्तर के उच्च एवं मध्यम पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना।
2. माध्यमिक स्तर के उच्च एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना।
3. माध्यमिक स्तर के मध्यम एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ–

अध्ययन में निम्नलिखित शून्य परिकल्पनाओं का परीक्षण किया गया है–

1. माध्यमिक स्तर के उच्च एवं मध्यम पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. माध्यमिक स्तर के उच्च एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. माध्यमिक स्तर के मध्यम एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध–विधि–

वर्णनात्मक अनुसंधान के उपर्युक्त प्रकारों में से सहसम्बन्धात्मक सर्वेक्षण विधि को अध्ययनकर्त्ता ने अपनी समस्या के अध्ययनार्थ उपयुक्त पाया। अतः अध्ययन में सहसम्बन्धात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या–

अध्ययन हेतु जनसंख्या में प्रयागराज जनपद में उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद द्वारा सम्बद्ध माध्यमिक विद्यालयों में कक्षा–11 के विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया है।

न्यादर्श–

प्रस्तुत अध्ययन हेतु न्यादर्श का चयन प्रयागराज जनपद के माध्यमिक विद्यालयों में से किया है। इन विद्यालयों के 10+2 स्तर के समस्त छात्र समष्टि है तथा अध्ययन के लिए चयनित विद्यार्थी न्यादर्श है।

न्यादर्श चयन विधि–

प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श के चुनाव हेतु यादृच्छिक प्रतिदर्शन विधि का प्रयोग किया गया है।

प्रस्तुत अध्ययन में प्रयागराज जनपद के 5 उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद से सम्बद्ध माध्यमिक विद्यालयों का चयन कर माध्यमिक विद्यालयों में से कुल 200 विद्यार्थियों (छात्र एवं छात्राओं) का चयन यादृच्छिक विधि से किया गया है।

प्रयुक्त उपकरण–

शैक्षिक उपलब्धि

शैक्षिक उपलब्धि के लिए विद्यार्थियों की हाईस्कूल परीक्षा में प्राप्त प्राप्तांकों को सम्मिलित किया गया है।

पारिवारिक पर्यावरण अनुसूची

डा0 करूणा शंकर मिश्रा द्वारा निर्मित ''पारिवारिक वातावरण अनुसूची'' का प्रयोग किया गया है।

सांख्यिकी विधियाँ–

आँकड़ों के विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन, मानक त्रुटि एवं टी–अनुपात सांख्यिकी विधियों का प्रयोग किया गया है।

आँकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या–

उद्देश्य–1 माध्यमिक स्तर के उच्च एवं मध्यम पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना–

H_{01} माध्यमिक स्तर के उच्च एवं मध्यम पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका संख्या–1

माध्यमिक स्तर के उच्च एवं मध्यम पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–मान एवं सार्थकता स्तर

समूह	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (SD)	मुक्तांश (df)	टी–मान (t-value)	सार्थकता स्तर
उच्च पारिवारिक वातावरण	52	398.04	53.12	145	2.20	.01
मध्यम पारिवारिक वातावरण	95	378.97	44.35			

*.01 सार्थकता स्तर पर असार्थक

सारणी 1 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि उच्च पारिवारिक वातावरण एवं मध्यम पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान क्रमशः 398.04 एवं 378.97 तथा मानक विचलन क्रमशः 53.12 एवं 44.35 है। परिगणित टी–अनुपात का मान 2.20 है, जो .01 सार्थकता स्तर पर असार्थक है। अतः शून्य उपपरिकल्पना ''माध्यमिक स्तर के उच्च एवं मध्यम पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है'' स्वीकृत की जाती है। प्राप्त परिणाम से स्पष्ट है कि, उच्च एवं मध्यम पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में अन्तर नहीं है।

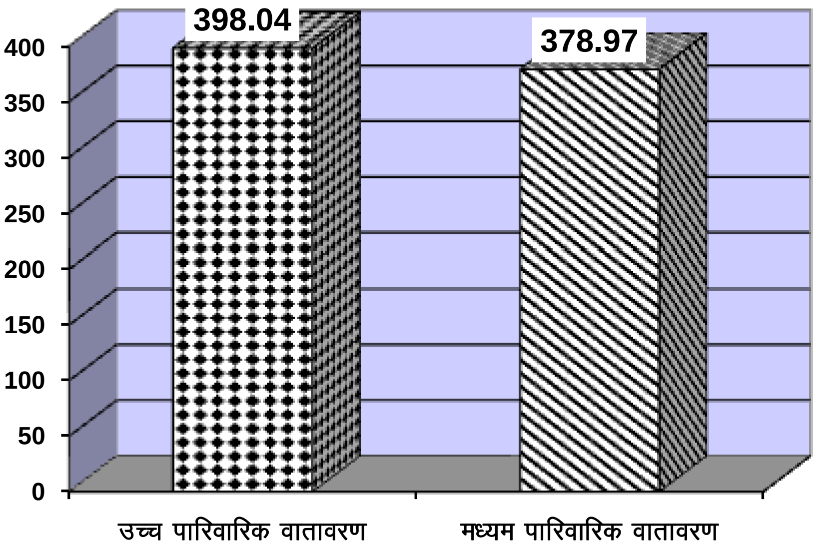

उद्देश्य–2 **माध्यमिक स्तर के उच्च एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना–**

H_{02} माध्यमिक स्तर के उच्च एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका संख्या–2
माध्यमिक स्तर के उच्च एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–मान एवं सार्थकता स्तर

समूह	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (SD)	मुक्तांश (df)	टी–मान (t-value)	सार्थकता स्तर
उच्च पारिवारिक वातावरण	52	398.04	53.12	103	6.26	.01
निम्न पारिवारिक वातावरण	53	340.52	40.02			

*.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक

सारणी 2 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि उच्च पारिवारिक वातावरण एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान क्रमशः 398.04 एवं 340.52 तथा मानक विचलन क्रमशः 53.12 एवं 40.02 है। परिगणित टी–अनुपात का मान 6.26 है, जो .01 सार्थकता स्तर पर सार्थक है। अतः शून्य उपपरिकल्पना ''माध्यमिक स्तर के उच्च एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है'' अस्वीकृत की जाती है। प्राप्त परिणाम से स्पष्ट है कि, उच्च पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की अपेक्षा उच्च है।

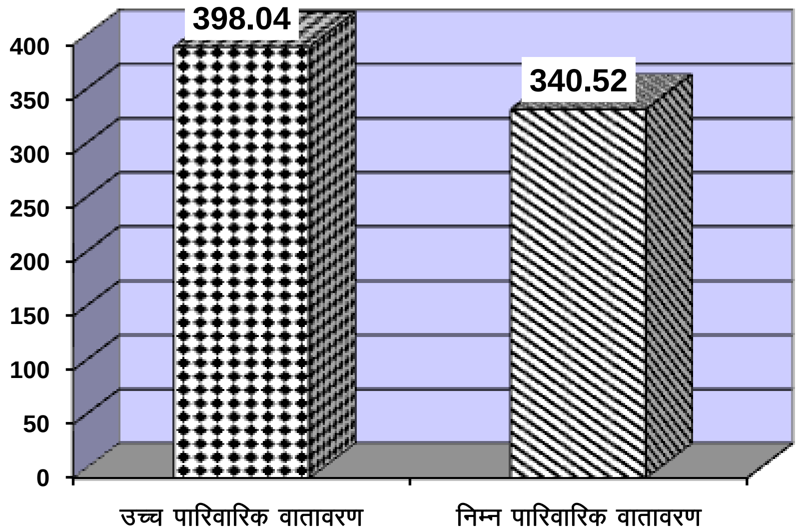

उद्देश्य–3 **माध्यमिक स्तर के मध्यम एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना–**

H_{03} माध्यमिक स्तर के मध्यम एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका संख्या–3

माध्यमिक स्तर के मध्यम एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–मान एवं सार्थकता स्तर

समूह	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (SD)	मुक्तांश (df)	टी–मान (t-value)	सार्थकता स्तर
मध्यम पारिवारिक वातावरण	52	378.97	44.35	146	5.39	.01
निम्न पारिवारिक वातावरण	53	340.52	40.02			

*.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक

सारणी 3 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि मध्यम पारिवारिक वातावरण एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान क्रमशः 378.97 एवं 340.52 तथा मानक विचलन क्रमशः 44.35 एवं 40.02 है। परिगणित टी–अनुपात का मान 5.39 है, जो .01 सार्थकता स्तर पर सार्थक है। अतः शून्य उपपरिकल्पना ''माध्यमिक स्तर के मध्यम एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है'' अस्वीकृत की जाती है। प्राप्त परिणाम से स्पष्ट है कि, मध्यम पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की अपेक्षा उच्च है।

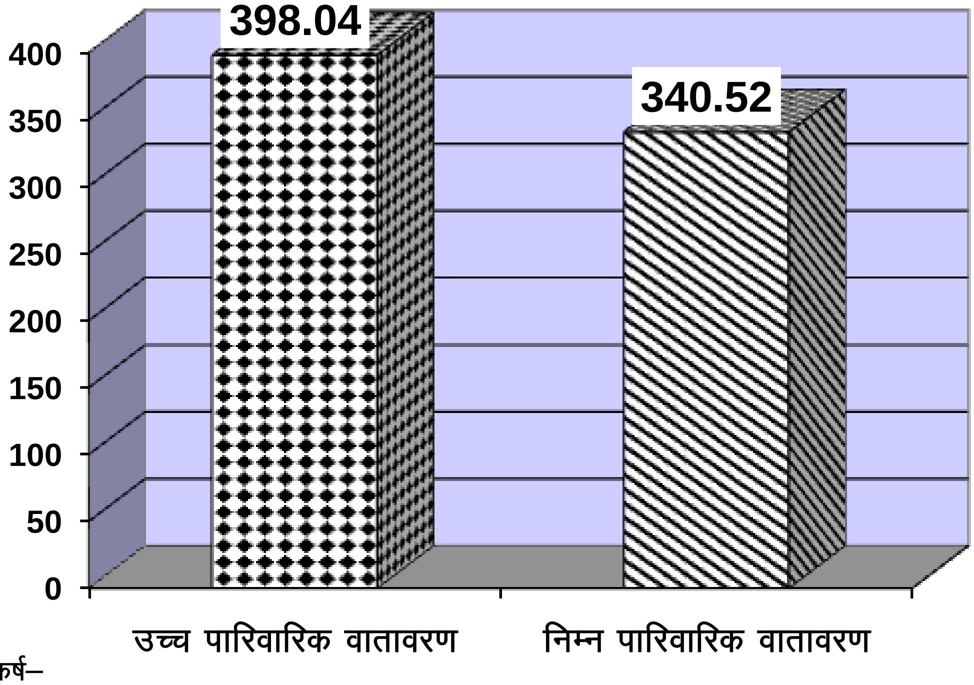

निष्कर्ष–

अध्ययन में निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुये–

- उच्च एवं मध्यम पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में अन्तर नहीं है।
- उच्च पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की अपेक्षा उच्च है अर्थात् उच्च एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में अन्तर है।
- मध्यम पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की अपेक्षा उच्च है अर्थात् मध्यम एवं निम्न पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में अन्तर है।

अध्ययन में प्राप्त निष्कर्ष के आधार पर पूर्व अध्ययन के निष्कर्ष में **साहू, मोनिका (2021)** ने अध्ययन में पाया कि– माध्यमिक स्तर के उच्च, मध्यम एवं निम्न पारिवारिक वातावरण वाले विद्यार्थियों, छात्रों, छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में अन्तर है अर्थात् विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव है। **वर्मा, पूनम जगदीश (2017)** ने अध्ययन के निष्कर्ष में पाया कि– उच्च पारिवारिक वातावरण वाले किशोरों में उच्च शैक्षिक उपलब्धि पायी गयी। प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर कहा जा सकता है कि जिस विद्यार्थी के परिवार में माता–पिता, अभिभावक या सदस्यों द्वारा उनके शैक्षिक कार्यों में संलग्नता के साथ–साथ शैक्षिक वातावरण अच्छा नहीं बना पाते हैं वहीं अभिभावकों, माता–पिता एवं परिवार के सदस्यों द्वारा उनकी शिक्षा में साथ नहीं देते है एवं ऐसा वातावरण का निर्माण नहीं करते हैं जिससे विद्यार्थी की पढ़ाई अच्छी तरह से हो सके तब उसका प्रभाव विद्यार्थी के शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ना स्वाभाविक है। अतः ऐसे में माता–पिता, अभिभावक एवं परिवार के सदस्यों द्वारा अपने बच्चों की पढ़ाई–लिखाई हेतु ऐसे वातावरण का निर्माण करना चाहिए जिससे बच्चा स्वयं शिक्षा के प्रति अभिप्रेरित हो तथा पढ़ाई में मन लगाकर अच्छे उपलब्धि प्राप्त कर सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- बन्दना एवं शर्मा, दर्शन, पी. (2012). होम इन्वार्मेन्ट, मेन्टल हेल्थ एण्ड ऐकेडमी एचिवमेन्ट एमंग हायर सेकेण्डरी स्कूल स्टूडेन्ट्स, *इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ साइंस एण्ड रिर्सच पब्लिकेशन,* वाल्यूम–2, इश्शू–5, पृ0 1–4।

- भाटिया एवं चौधरी (2012). कामकाजी व गैर कामकाजी महिलाओं के किशोर बच्चों के आपसी सम्बन्धों का शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन, *अरहत मल्टीडिसिप्लिनरी इण्टरनेशनल एजुकेशन रिसर्च जर्नल,* वॉल्यूम–I, इश्शू–III, पृ0 19–24
- मूलयादी, सेतो एवं अन्य (2016). द रोल ऑफ पैरेन्ट–चाइल्ड रिलेशनशिप, सेल्फ–स्टीम, एकेडमिक सेल्फ–इफीकेसी टू एकेडमिक स्ट्रेस, *प्रोसिडिया– सोशल एण्ड बिहैविरल साइंसेस,* 217 (2016). 603–608
- रानी, सुनीता एण्ड सिद्दीकी, एम0ए0 (2015). ए स्ट्डी ऑफ होम एनवायरमेन्ट, एकेडेमिक एचिवमेण्ट एण्ड टीचिंग एटीट्यूड ऑफ ट्रेनिंग सक्सेस ऑफ प्री–सर्विस एलीमेण्ट्री टीचर्स इन इण्डिया, *जर्नल ऑफ एजूकेशन एण्ड प्रैक्टिस,* 6(28). पृ0सं0 91–96
- वर्मा, पूनम जगदीश (2017). इफेक्ट ऑफ फैमिली क्लाइमेट एण्ड पैरेन्टल इन्क्रेजमेण्ट ऑफ ऐकेडमिक एचिवमेण्ट ऑफ स्कूल गोइंग एडोवलेन्ट्स, द *इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ इण्डियन साइकोलॉजी,* वॉल्यूम–4, इश्शू–4, पृ0 5–17
- वासुकी एवं राज (2015). होम इन्वायरमेण्ट एण्ड स्कूल एडजेस्टमेण्ट ऑन ऐकेडमिक एचिवमेण्ट एमंग सेकेण्डरी लेवेल स्टूडेन्ट्स, वॉल्यूम–1, इश्शू–3, पृ0 159–165
- सिंह, अमित (2020). माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य, वंचन एवं पारिवारिक वातावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन, शोध प्रबन्ध (शिक्षाशास्त्र). नेहरू ग्राम भारती (मा0वि0). प्रयागराज।
- साहू, मोनिका (2021). माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पारिवारिक वातावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन, लघु शोध प्रबन्ध, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी।
- श्रीवास्तव एवं गुप्ता (2016). शिक्षित–अशिक्षित परिवारों का विद्यार्थियों के समायोजन व शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन, *एस.आर.एस.डी. मेमोरियल शिक्षा शोध संस्थान,* आगरा, इण्डिया, वॉल्यूम–1, इश्शू–1, पृ0 32–34

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

मन्नू भण्डारी का उपन्यास महाभोज (1979) : एक संक्षिप्त विवेचन

डॉ0 विकास कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
श्री वार्ष्णेय महाविद्यालय, अलीगढ़, उत्तर प्रदेश
सम्पादक– International Literary Quest एवं World Translation

''महाभोज'' आधुनिक हिन्दी के उपन्यासों में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करता है जिसके कारण उपन्यासकार मन्नू भंडारी को बड़े आदर के साथ नाम लिया जाता है। इस उपन्यास में अध्यायों के आरम्भ में लेखिका ने तीन गिद्धों का चित्र भी दिया है। ये गिद्ध बड़े भाव व्यंजक और यथार्थवादी हैं। हिन्दू समाज की स्थिति यही है। जिस तरह गिद्ध लाश खाने के लिये टूट पड़ता है, उसी तरह अत्यन्त क्रूर और अमानवीय भाव से उच्च जाति के लोग अथवा सुविधा सम्पन्न लोग शासक और प्रशासक वर्ग के लोग देश में चारों तरफ सिर उठा रही अछूत जातियों या युगों-युगों से पद दलित या शोषित जातियों पर क्रूर गिद्धों की तरह टूट पड़े हैं। इससे केवल सामाजिक विघटन ही नहीं गृह युद्ध का संकट उत्पन्न हो गया है या दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि छोटे पैमाने पर गृह युद्ध लड़ा जा रहा है।

शहर के पास बीस मील दूर सरोहा गांव से यह कथ आरम्भ होती है। वहीं बिसेसर हरिजन मारा जाता है। उस गांव का एक परिदृश्य देते हुए लेखिका ने लिखा है- ''महीने भर पहले की ही तो बात है- गांव की सरहद से जरा परे हटकर जो हरिजन टोला है, वहां कुछ झोपड़ियों में आग लगा दी गयी थी, आदमियों सहित। दूसरे दिन लोगों ने देखा तो झोपड़ियाँ राख में बदल चुकी थी और आदमी कबाब में। लोग दौड़े-दौड़े थाने पहुँचे पर थानेदार साहब उस दिन छुट्टी पर थे और जो दो लोग वहाँ ड्यूटी पर थे उन्होंने यह कह कर बात टाल दी कि थनेदार साहब के आने पर ही मौके पर आयेंगे और तहकीकात होगी। इसके बाद पता नहीं गांव वालों को कौन सा जहरीला सांप सूंघ गया कि सबके मुँह सिल गये।''[1] धीरे-धीरे यह खबर अखबार वालों तक पहुँचा और मंत्रियों तक इसकी सूचना जा पहुँची। राख की फोटो खींची गई। अनेक लोगों ने सहानुभूति प्रकट की। विरोधी दल के नेता ने इसे तूल दिया क्योंकि सबसे अधिक कष्ट उन्हें ही हुआ था, इस दुःख का वर्णन करते हुए लेखिका ने लिखा है- ''इस दर्दनाक हादसे से विरोधी दल के नेताओं के हृदय तो चकनाचूर हो गये। विधान सभा में उनके फटे गले से निकली चीख पुकार वास्तव में उनके फटे हृदय की अनुगूंज थी। पुनः मंत्रियों ने आत्मग्लानि में डूबकर सधे गले से खेद प्रकट किया और भविष्य के लिये आश्वासन दिये। पुनः बड़े अफसरों ने अपना बड़कपन और मुस्तैदी दिखाने के लिये तुरत-फुरत दोनों कोस्टेबुलों को सस्पेंड कर दिया।''[1] लेखिका ने हरिजन पक्ष स्थिति का भी उल्लेख किया है। उनके शब्दों में- ''वैसे तो चमार जल कर मर गये थे और उनके भाई बन्धु जो आँसू बहाने के लिये बच गये वे ही कौन बड़े तोपे थे।''[2] कुछ दिन तक बस्ती में हाय-हाय की स्थिति थी, जैसा कि भारत में हरिजनों के जलाये जाने पर अन्य स्थानों में होती आई है।

उपरोक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि लेखिका ने किस प्रकार हरिजनों पर हुए अत्याचार का चित्रण किया है। बिसेसर की मृत्यु को भुनाने का सभी प्रयत्न करते हैं। शुक्ल बाबू चुनाव सभ में आते हैं। तो वे न्यय, अपराधियों की तलाश और हरिजनों की रक्षा आदि की बड़ी-बड़ी बातें कर रहे हैं, लेकिन चाहे सत्तारूढ़ पक्ष हो या चाहे विपक्ष हो, चाहे अफसर वर्ग सभी अपने-अपने स्वार्थ के लिये असन्तुष्ट और पागल हैं। आज के मनोविज्ञान का चित्रण करते हुये लेखिका ने एक जोरदार प्रहार किया है। ''सब अपने-अपने को लेकर परेशान हैं। वह भी प्रमोशन के लिये छटपटा रहा है। स्वभाव है आदमी का। जो जहां है, वहां से संतुष्ट नहीं है। और चाहिये.....और चाहिये।''[3] इस बीच नये मुख्यमंत्री दा साहब पुलिस से मिलकर डी0आई0जी0 के माध्यम से मृतक विसू को अपराधी ओर नक्सलवादी सिद्ध करने का प्रयत्न कर रहे हैं। दूसरी तरफ जनता में भ्रम फैलाने के लिए आत्महत्या का व्यक्तव्य भी दिया जा रहा है। मुख्यमंत्री दा साहब ने आत्महत्या का समाचार जनता में प्रचारित करने के लिये 'मशाल' समाचार पत्र के सम्पादक दत्ता बाबू से साठ-गांठ कर इस संबंध में समाचार प्रकाशित करवा दिया। उधर मृत्यु से पहल विसेसर हरिजनों में स्कूल खोलकर शिक्षा का प्रचार करता था, उन्हें संगठित करता था, अपने अधिकार के लिये लड़ने की बात भी कहता था कि सरकारी रेट से कम मजदूरी लेकर कोई काम न करे। उसका दोस्त ब्रिन्दा था। ब्रिन्दा हर दुःख-सुख में बिसेसर के साथ रहता था। बिसेसर को असल में मारा पुलिसवालों ने, क्योंकि उच्च वर्ग में बिसू की हरिजन क्रान्ति और विद्रोह पसन्द नहीं था। अन्त यहाँ चार घटनाएँ हमारे सामने स्पष्ट होती हैं-

1. पुलिस द्वारा क्रांतिकारी बिसू की हत्या करना।

2. आत्महत्या का प्रचार करना।

3. ब्रिन्दा द्वारा अपने मित्र बिसू को मारने का केस खड़ा करना।

4. बिसू को नक्सलवादी सिद्ध करना।

पुलिस द्वारा हत्या की बात तो कभी सामने नहीं आयी, परन्तु शेष बातें खूब उड़ाई गई। लेखिका ने इस उपन्यास में दिखाया है कि हरिजनों का दमन करने के लिये समाज का यह वर्ग पूरी तरह प्रतिबद्ध है। उधर शुक्ल बाबू चुनाव भाषण में नीलम, मूंगा, मोती की चार अंगूठियां पहन कर हरिजनों को ललकार रहे हैं। लेखिका ने शुक्ल बाबू के भाषण में आज के हरिजनों की भावी आवश्यकता पर पूरा प्रकाश डाला है जो चुनौती के रूप में हमारे सामने खड़ी है। ''बात केवल बिसू की मौत की नहीं है.....ये आप सब लोगों के जिन्दा रहने का सवाल है। .....अपने पूरे हक के साथ जिन्दा रहने का। यह मौत कुछ हरिजनों की या एक बिसू की नहीं है। .....आपके जिन्दा रहने के हक की मौत है। आपका यह हक जरा से स्वार्थ के लिए गांव के धनी किसानों के हाथ बेच दिया गया है। ....और यही हक मुझे आपको वापस दिलवाता है।''[1] यहाँ लेखिका ने शुक्ल बाबू के माध्यम से हरिजनों या शोषितों और धनी किसानों के दो वर्गों के वर्ग युद्ध को स्पष्ट कर दिया। धीरे-धीरे धनी और गरीब का यह वर्ग युद्ध शहरों के उद्योग केन्द्रों से आगे बढ़कर गांव तक पहुंचने लगा है और हरिजन वर्ग अब अपने अधिकार के लिये खड़ा होने लगा है। लेखिका का ऐसा मानना है कि यह संघर्ष सरल नहीं है। आरम्भ में बिसू और ब्रिन्दा जैसे कुछ नवयुवक मारे जायेंगे और जलाये जायेंगे और उच्च जाति के लोग उनकी लाश का महाभेज करेंगे, किन्तु यह संघर्ष अन्त दबने वाला नहीं है। उच्च जातियों के लोग अपने स्वार्थों के अन्तर्विरोध के कारण इस संघर्ष को बढ़ावा देंगे। ज्यों-ज्यों सामन्तवाद भरेगा और पूंजीवाद का विकास होगा, त्यों-त्यों वह संघर्ष उस से उग्रतर होता जायेगा। यही इस उपन्यास का केन्द्रीय सिद्धान्त है।

पुलिस और थानेदार के प्रति घृणा व्यक्त करते हुये लेखिका ने यह मत व्यक्त किया है कि आज देश के अपराध का सबसे बड़ा केन्द्र पुलिस विभाग है, जिसमें आई0जी0, डी0आई0जी0, एस0एस0पी0 और इंस्पेक्टर सभी शामिल हैं। दा साहब ने जनता के सामने कहा- ''पुलिस के सामने जनता को अधिक सुरक्षित महसूस करना चाहिये, आतंकित नहीं। जनता यदि डरती है तो कलंक है यह पुलिस वालों के लिये, मेरे अपने लिये भी। जाइये, जैसे भी हो उन्हें भरोसा दीजिये....निडर बनाइये कि वे सच कहें।''[1] जोरावर क्षेत्र का गुंडा है। धीरे-धीरे ब्रिंदा को पुलिस ने उसके दोस्त बिसू की हत्या में फंसा दिया है। जब पुलिस अफसर बिसू को मौत के असली कारण का पता लगाने के लिये कहता है तब घृणा से ब्रिन्दा कह उठता है- ''मेरे चाहने से क्या होता है- जोरावर की रखैल इस थानेदार ने रिपोर्ट तैयार करके दे ही दी है। भरी सभा में दा साहब भी कह गये कि बिसू ने आत्महत्या की। ''मशाल'' वालों ने छाप भी दिया। बस, आप लोगों के लिये तो बात खत्म हो गयी। पर मैं नहीं मान सकता। मरते दम तक नहीं मान सकता कि बिसू....।''[2] इस अनुच्छेद में लेखिका ने समाज के सभी संचालक शोधक उच्च वर्गों को एक साथ एकत्र कर दिया है। जोरावर गुंडा और अपराधी है। थानेदार इस समाज में अपराध का सबसे बड़ा केन्द्र और शोषक वर्ग की कानूनी शक्ति है। दा साहब कानूनी सरकार के बड़े संचालक हैं। ''मशाल'' के सम्पादक समाज की वाणी है।

ब्रिन्दा की अंतिम स्थिति का वर्णन लेखिका के शब्दों में- ''पुलिस के बेतों और ठोकरों की बौछार के बीच ब्रिन्दा कह रहा है मैंने बिसू को नहीं मारा.....मैं बिसू को मार ही नहीं सकता। मुझे तो उसकी आखिरी इच्छा पूरी करनी है। मैं उसे पूरी करके ही रहूँगा। चाहे जैसे भी हो, जो भी हो.....मार डालो, मार डालो। तुमने बिसू को मार डाला, मुझे भी मार डालो, लेकिन देखना बिसू की इच्छा को कोई नहीं मार सकता और तब ब्रिन्दा भी बिसू की तरह इस पूंजीवादी व्यवस्था के महाभेज का शिकार है।''[3]

प्रस्तुत उपन्यास हरिजन समाज के शोषण और नव जागृति के संबंध में लिखा गया है, लेखिका ने संक्रमण कालीन संघर्ष उसका दमन, आज की कुत्सित राजनीति और आगामी कल का संदेश भी इस उपन्यास में दिया है। तात्पर्य यह है कि हरिजन मुक्ति का संघर्ष जारी है और जारी रहेगा।

संदर्भ :

1. महाभोज : मन्नू भण्डारी, पृ0 7
2. महाभोज : मन्नू भण्डारी, पृ0 8
3. वही, पृ0 9
4. वही, पृ0 19
5. वही, पृ0 31
6. वही, पृ0 38
7. वही, पृ0 11
8. वही, पृ0 58

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

कबीर और भारतीय समाज : एक संक्षिप्त परिचय

डॉ0 सुरेन्द्र पाण्डेय
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, कूबा पी0जी0 कॉलेज,
दरियापुर, नेवादा, आजमगढ़

कबीर हिन्दुओं के लिए ''वैष्णव भक्त'', मुसलमानों के लिए ''पीर'', सिक्खों के लिए ''भक्त'', कबीर पंथियों के लिए ''अवतार'', आधुनिक राष्ट्रवादियों के लिए ''ऐक्यविधायक'' तथा प्रगतिशील तत्वों के लिए ''समाजसुधारक'' थे।

आधुनिक मानव समाज में ''मूल्यों के विघटन'' का कष्ट सभी जागरूक विचारकों को कचोट रहा है। इस कचोट की टीस का दिग्दर्शन विभिन्न साहित्यिक–कलात्मक अभिव्यक्तियों में भी होता रहा है। विभिन्न सामाजिक और धार्मिक तंत्र भी इस दिशा में पर्याप्त चिन्तित एवं सक्रिय दिखायी देते हैं। यहां तक की ''आम जनता की नाड़ी के पारखी'' कतिपय राजनीतिक विचारक भी विषय की चर्चा आवश्यक समझते हैं। लेकिन नैतिक मूल्यों के सम्बन्ध में सबसे बड़ी ''अनैतिक'' विडम्बना यह है कि इनके पतन, और ह्रास पर जितनी पीड़ा का अनुभव किया जा रहा है, उस पीड़ा को कम करने के लिए उसका सटीक उपचार का रचनात्मक प्रयास नही है। इसके लिए आज भी कबीर का काव्य प्रासंगिक और महत्वपूर्ण है।

कबीर का जन्म एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से हुआ। लोक–लाज के भय से उन्हें त्याग दिया। नीरू एवं नीमा नामक जुलाहा दंपति ने उनका पालन–पोषण किया। कबीर रामानन्द को अपना गुरु समझते थे, लेकिन रामानन्द जातिगत भेदभाव को नहीं मानने वाले थे वे मुस्लिम समुदाय के लोगों को अपना शिष्य नहीं बनाते थे। बावजूद इसके कबीर रामानन्द को प्रभावित करने के लिए, तड़के गंगा की सीढ़ियों पर लेट गये और फिर जब रामानन्द का पैर कबीर पर पड़ा तो राम–राम का शब्द बोलते हुए उन्होंने कबीर को देखा तथा यही राम–राम कबीर को गुरु–मंत्र के रूप में मिला। तत्पश्चात् कबीर रामानन्द के शिष्य बन गये। वे जाति–पांति, लिंग–भेद, साम्प्रदायिकता, बाह्याचार आदि पर तीव्रता से कटाक्ष करते थे। फलतः अधिकांश वर्ग में उनकी स्वीकार्यता सार्वभौमिक थी।

कबीर का सामाजिक दृष्टिकोण लोक व्यवहार पर टिका था। उन्होंने 'आंखो देखी' पर विश्वास किया 'कागज की लेखी' पर नहीं। उनके समय में सामाजिक स्तर पर भेद भाव बहुत बढ़ गया था। कबीर के बहुत बाद तुलसी जैसे वर्ण व्यवस्था के समर्थक ब्राह्मण को भी जातिगत उच्चता और नीचता के प्रश्न पर अपमानित होकर कहना पड़ा था –

धूत कहौ, अवधूत कहौ, रजपूत कहौ, जोलहा कहौ कोऊ

काहू की बेटी सो बेटा न ब्याहब, काहू को जाति बिगार न सोऊ।[1]

फिर कबीर तो शूद्रों के प्रतिनिधि थे उन्हें न मालूम क्या–क्या सहना पड़ा होगा? उनकी सहज मेधा में तो यह भेद धंसता नहीं था। जब सभी की उत्पत्ति एक ही ब्रह्म से हुई है तो यह भेदभाव क्यों है?[2] मानवीय स्तर पर तो सभी समान है। हिन्दू, मुस्लमानों, पंडित, मुल्ला और औलिया का भेद किसने खड़ा किया। सबसे बड़ी सिद्धि तो समानता का व्यवहार करने में है।

आत्म और पर के भेदों को मिटा देने में ही वास्तविक निर्वाण है। यह मन्दिर और मस्जिद वेद और कुरान, पूजा और नमाज तीर्थ और हज का आडम्बर किसलिए? क्या ईश्वर सर्वव्यापी नहीं है? क्या वह अणु में व्याप्त नहीं है? यदि वह मन्दिर मस्जिद में ही सीमित है तो शेष समाज में कौन रम रहा है। कौन–कौन साधक है? पंडित को पांडित्य का गर्व है, योगी अपने 'अहमेव' में ऐठें हैं, तपस्वी तपश्चर्या में लीन होकर मत्त हो गये हैं।[3] ऐसे ज्ञानियों से संसारी जीव अच्छे हैं।[4] ऐसा ज्ञान जो मुक्ति नही बन्धन की शिक्षा देते हैं उसे लेकर क्या होगा? फिर समाज में धार्मिक स्तर पर ही भेदभाव नही है, आर्थिक स्तर पर भी असमानता है। जो निर्धन है, उनका कोई आदर नहीं करता। सभी चेतन जीव धारियों में कबीर परमात्मा की व्याप्ति मानते हैं। अतः किसी भी श्रेणी के जीव हिंसा को निषिद्ध करते हैं क्योंकि हिंसादि कठोर कर्म परमात्मा से दूर ले जाने वाला है। सभी जीवधारियों में परम चैतन्य की व्याप्ति है इसलिए प्रत्येक जीवधारियों के प्रति व्यक्ति का व्यवहार क्षमा, करुणा एवं दया पर आधारित होना चाहिए। यदि निर्धन व्यक्ति धनी के घर जाता है तो वह मुंह फेर लेता है, किन्तु वही धनी जब निर्धन के घर जाता है तो वह आदर करता है। इन लोगों को कौन समझाये कि धनी और निर्धन तो भाई–भाई हैं। यह तो प्रभु की लीला है जो भिन्न–भिन्न रूपों तथा परिस्थितियों में मनुष्य को दिखाई पड़ते हैं। वास्तविक रूप से निर्धन तो वे हैं, जिनके हृदय में भक्ति नही है।[5] ऐसे भेदभाव पूर्ण समाज को अस्वीकार कर देना ही कबीर ने उचित समझा। यह भेदभाव तब भी था और अभी है परन्तु वर्तमान समय में कबीर के समान समाज की सच्चाई को उजागर करने वाला सशक्त व्यक्तित्व नहीं है। कबीर का व्यक्तित्व ध्वंसात्मक प्रवृत्ति का था परन्तु उनके मन कुछ निश्चित जीवन मूल्य थे जिन पर उनका अखण्ड विश्वास था। प्रेम, अहिंसा और समता, मनोनिग्रह कर्तव्य विचार की एकता, जीवन की सहजता, आडम्बरहीनता, सत्यता, सत्संगति और विनय। कबीर के शिक्षा सिद्धान्तों में वैज्ञानिक विषयों को जोड़कर विद्यार्थी को स्वतंत्र चिन्तन के लिए यदि प्रेरित किया जाय तो निश्चित ही शिक्षा के क्षेत्र में खाये हुये सम्मान को भारतीय नागरिक प्राप्त कर सकते हैं। कबीर की यही पूंजी थी इसके बल पर वे समाज की सच्चाई को उजागर कर सकें। ये जीवन मूल्यों शुद्ध मानवीय तत्व हैं जिनका समन्वित उत्कर्ष उस महामानव, दिव्य मानव या आदर्श मानव की सृष्टि करता है जिसे कबीर ने 'आत्माराम' और चंडीदास ने 'मनेर मानुष' कहा है। कबीर के धार्मिक विचारधारा की अवधारणा को हिन्दू एवं इस्लाम के मिथ्याचार बहुत विकृत रूप की प्रतिक्रिया का परिणाम समझा जा सकता है। कबीर के इस धार्मिक दृष्टिकोण को 'सहज धर्म' या 'मानव धर्म' की संज्ञा से विभूषित किया जाता है। इनका यह स्व–प्रतिपादित धर्म ह्रदय की सात्विक, सत्याचरण प्रवणता और मन की विशुद्धता पर आधारित है। अहंकार मूलक कर्मकाण्डों में इनको रंचमात्र विश्वास नहीं है। परमतत्व के सत्याराधना का परित्याग कर जप–तप जैसे मिथ्याडम्बरपूर्ण धार्मक कृत्यों को वे व्यर्थ समझते हैं।

कबीर की गणना भौतिक विचारकों में की जाती है और उनके विश्वव्यापी प्रभाव को श्रद्धा से स्वीकार किया जाता है। कबीर की शिक्षाएँ जीवन में सभी छात्रों को स्पर्श करता है। जीवन की गहन समस्या को सुलझाने में समर्थ होती है। कबीर की शिक्षा में आध्यात्मिक सिद्धान्त मात्र नहीं है, उसमें जीवन के अन्य आवश्यक सिद्धान्तों का समावेश है। इसको कबीर सच्चे अर्थों में शिक्षा दार्शनिक थे। शिक्षा का बाहरी ढाँचा भले ही बदल दिया जाय पर मूल में कबीर का आदर्श ही व्यक्ति और समाज को स्वस्थ्य और सुव्यवस्थित बनाने की योग्यता रखता है।

कबीर की शिक्षाएँ जीवन के सभी क्षेत्रों को स्पर्श करती है, तथा जीवन की गहन समस्याओं को सुलझाने में समर्थ होती है। कबीर की शिक्षा में आध्यात्मिक सिद्धान्त मात्र नहीं है वरन् उसमें जीवन के अन्य आवश्यक सिद्धान्तों का भी समावेश है। इसी से गीर की शिक्षाओं में

हमें व्यक्ति, समाज, धार्मिक जगत, राजनैतिक जगत, आर्थिक और नैतिक जगत का विवेचन मिलता है। अतः कबीर की शिक्षा सर्वांगीण परिपूर्ण कृति है।

कवीन्द्र रवीन्द्र ने इन्हीं जीवन मूल्यों को मानव धर्म की संज्ञा दी है। इस ओर संकेत करते हुए वे कहते हैं कि ''भारतवर्ष में ऐसे मनुष्य हुए हैं जिन्होंने मानव धर्म के विषय में अध्ययन पूर्ण ग्रन्थ नहीं रचे हैं, किन्तु जिनमें इनकी उपलब्धि की अदम्य इच्छा रही है और जिन्होंने इसके लिए सतत् अभ्यास किया है उनकी जिन्दगी प्रमाणित करती है कि उन्होंने उस व्यक्ति से जो सब व्यक्तियों में है और उसका निराकार मानव तत्व से जो सभी मानव–आकृतियों में है, नैकट्य प्राप्त किया था।6

इस प्रकार कबीर की दृष्टि उस मानव सत्य को पहचानने में हमारी सहायता करती है, जिसके आधार पर समस्त भेदों से ऊपर उठकर व्यवहारिक स्तर पर मानवीय धर्म की प्रतिष्ठा की जा सकती है। कबीर जनता के गुरू, मार्गदर्शक, साथी, मित्र और साम्प्रदायिक ऐक्य के प्रतिष्ठाता थे। आज के भारतीय समाज में कबीर का सत्य बड़ा प्रासंगिक है। आज के भारतीय समाज के लिए कबीर का सच बहुत ही महत्वपूर्ण है। समाज की उन्नति के लिए उसकी महती आवश्यकता है।

सन्दर्भ :

1. तुलसी ग्रन्थावली, पृ0 223, कवितावली पद 106
2. गर्भवास महि कुल नहिं जाति। ब्रह्मविद ते सब उत्पाती– कबीर ग्रन्थावली, पद 01
3. कबीर ग्रन्थावली, पृ0 302, पद 131
4. भले इन ग्यानियन थे संसारी– कबीर ग्रन्थावली, पृ0 182, पद 276
5. कबीर ग्रन्थावली, पृ0 302, परिशिष्ट
6. The Religions of the man by Ravindra Nath Tagore Page 112

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

वामन का रीति सिद्धाँत : उपलब्धियाँ एवं सीमाएँ

डॉ0 कमलेश सिंह
सहायक आचार्य हिन्दी
धर्म समाज महाविद्यालय
अलीगढ़, 202001

संस्कृत काव्यशास्त्र एक सतत प्रक्रिया है अर्थात ई0पू0 200 से आज तक का संस्कृत काव्य शास्त्र अनेकों विद्वानों के चिन्तन की पृष्ठभूमि पर खड़ा है। प्रत्येक सिद्वाँत की अपनी उपलब्धियाँ एवं सीमाएं होती है। उसकी प्रासंगिकता एवं अप्रसांगिकता का निहितार्थ उसकी विशेषता में छिपा रहता है। गुण–दोष, उपलब्धियाँ सीमाएं बताते समय सिद्धाँत का बोध अनिवार्य हो जाता है।

रीति सिद्धाँत के प्रवर्तक वामन माने जाते हैं। जिनका समय 8 वीं – 9वीं शताब्दी के मध्य का है। वामन के 'काव्यालंकार सूत्र वृत्ति' में रीति को काव्य की आत्मा घोषित किया है– ''रीतिरात्मा काव्यस्य।''

रीति सिद्धाँत अलंकार के आगे का विकसित चिन्तन है। प्रकारान्तर से हम कह सकते हैं कि अलंकार सिद्धान्त की नींव पर ही रीति–सिद्धाँन्त का निर्माण हुआ। रीति – सिद्धाँत में विभिन्न प्रकार की संघटनाओं को उनकी विशेषताओं के आधार पर अलग–अलग संज्ञाएं दी गयी। जैसे–वैदर्भी, गौड़ी आदि, जब कि अलंकार सम्प्रदाय में मुख्यतः सघंटनाश्रित काव्य–बंध पर विचार किया गया है। यद्यपि रीति सिद्धाँन्त के वामन से पूर्ववर्ती आचार्य भी परिचित थे किन्तु रीति शब्द का विशिष्ट अर्थ में सर्वप्रथम प्रयोग वामन ने किया। रीति – सिद्धान्त को अलंकार सम्प्रदाय के आगे की मंजिल बताते हुए डॉ0 पी0वी0 काणे का मत है कि – ''अलंकार सम्प्रदाय अलंकार को (जो वस्तुतः गौण स्थान का अधिकारी है) बहुत महत्व देता है। रीति सिद्धान्त अलंकार सम्प्रदाय के आगे की मंजिल है। यद्यपि काव्य के मूल तत्व तक उसका अधिगम नहीं है, फिर भी यह उसके निकट तक पहुँच गया है।'' वामन ने रीति को परिभाषित करते हुए लिखा है– '' विशिष्ट पद रचना रीतिः। विशौषौगुणात्मा''। विशिष्ट पद रचना रीति है। विशिष्ट का यहॉ अर्थ है गुण या काव्य शांभाकारक धर्म। (शब्द व अर्थ)। चूंकि काव्य शोभाकारक धर्म अलंकार भी होते हैं, इस लिए वामन ने गुणों तथा अलंकारों में स्पष्ट विभाजन किया है। काव्य स्वरूप क्या है? इसे स्पष्ट करते हुए वामन ने लिखा है कि '' काव्य स्वरूशब्दोडयं गुणालंकार संस्कृतयों शब्दयोवर्तते।'' अर्थात गुणों तथा संस्कृत शब्द और अर्थ के लिए काव्य शब्द का प्रयोग होता है। गुण तथा अलंकार दोनो ही शब्दार्थों के शोभाकारक धर्म है। वामन गुण को नित्य तथा अलंकार को अनित्य

मानते हैं। वामन ने काव्य के लिए गुणों का होना अनिवार्य बताया, जब कि अलंकार की उपेक्षा की, उसके विना जा`काव्य का होना सम्भव बताया। वामन ने तीन रीतियाँ मानी – वैदर्भी, गौड़ी, पंचाली। परवर्त्ती आचार्यो में आनन्दवर्धन ने रीति को 'पद संघटना रीति' कहा एवं कुन्तक ने रीति को मार्ग कहा जो कवि स्वभाव पर आधारित है। वामन ने भी भौगोलिक अर्थात देश भेद पर आधारित रीतियों को नहीं माना। वामन के अनुसार यदि ऐसा मान लिया जाये तो जितने देश उतनी रीतियाँ होंगी।

इस प्रकार यदि इसके क्रमिक विकास को देखा जाये तो कहना न होगा कि अलंकार की तरह उसकी व्याप्ति भी संकीर्णता में परिणति हो गई। वामन रीति तथा गुण को अभिन्न मान कर रीति को एक अखण्डता एवं पूर्णता दी परन्तु परवर्ती आचार्यो आनन्दवर्धन, मम्मट एवं विश्वनाथ ने उसे रस का साधन घोषित किया। रीति सिद्धान्त की उपब्धियों पर विचार करते समय हम देखते हैं कि रीति सिद्धान्त अलंकार सिद्धान्त की अगली सीढी है। इस सिद्धान्त के सर्वप्रथम काव्य की ओर ध्यान देते हुए उसकी आत्मा के बारे में विद्धानों ने विचार किया। गुणों की महत्ता काव्य के लिए किस प्रकार है और गुणों के विविध आयामों को रीति सिद्धान्तों ने प्रतिस्थापित किया। रीति–सिद्धान्त में अर्थ–गुण से जो रस निष्पत्ति होती है, इसका प्रथम विवेचन वामन ने किया। वामन ने गुणों की विस्तृत चर्चा की और काव्य की शोभा के लिए उसे अनिवार्य बताया। इससे अलंकारों को गौण स्थान मिला। इस सिद्धान्त ने साहित्य के मूल्यांकन अर्थात उसके विविध आयामों को स्पष्ट करने के लिए एक वस्तुपरक शैली अपनाई जो औरों से पृथक है। यह शब्दों के प्रयोग पर निर्धारित था। शब्द प्रयोग के माध्यम से काव्य का मूल्यांकन किया जाये, यह 8वीं –9वीं सदी में एक मौलिक एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण था। रीति सिद्धान्त शब्दों की महत्ता को परिभाषित करता है। इस सिद्धान्त के माध्यम से गुणों को सम्बन्ध एवं शब्दगत और अर्थगत गुणों की स्पष्ट व्याख्या हुई है।

गौरलतव है कि जहाँ हम स्पष्ट वस्तुपरक एवं वैज्ञानिकता का पुट रीति सिद्धान्त में देखते है, वहीं इसकी अपनी सीमाएं भी हैं। सीमाओं के क्रम में सर्वप्रथम हम देखते हैं कि इस सिद्धान्त में गुणों की इतनी अधिक चर्चा है कि विद्धानों ने इसे रीति–सिद्धान्त की जगह गुण सिद्धान्त कहना बेहतर समझा। किसी सिद्धान्त पर यदि इस पर आरोपित समझा। किसी सिद्धान्त पर यदि इस पर आरोपित वस्तु ही भारी पड़ने लगे तो निश्चित रूप से उस सिद्धान्त का महत्व स्वयमेव कम हो जाता है। दूसरी बात यहाँ स्पष्ट रूप से आती है कि साहित्य के पाठन या काव्य के ग्रहण से एक आनन्द की निष्पत्ति का वर्णन कवि करता है यानी सौन्दर्य का आनन्द किन्तु प्रश्न यह उठता है कि यदि संवेदना की जागृति नहीं होती तो शब्दों के प्रयोग एवं उससे निष्पन्न विभिन्न गुणों से पाठक आनन्दित होता भी है कि नहीं? संवेदना के जागरण में जिस आनन्दानुभूति का सर्वप्रथम पाठकों को होता है, इसका समाधान रीति सिद्धान्त में नहीं होता। शब्द प्रयोग से उत्पन्न आनन्द की व्याख्या नहीं की गई है। शब्द प्रयोग के वैशिष्टय पर विचार है जो साधारणीकरण की वजह से सम्भव है। तीसरी एवं महत्वपूर्ण बात यह है कि रीति के रूपों की बनावट कृत्रिम है। यह जरूरी नहीं है कि जिस प्रदेश से प्रमाणित रीति हो उसमें सभी रचनाकार

एक जैसी रचना करे, एक जैसे गुणों को आरोपित करे। सबसे अन्तिम एवं महत्वपूर्ण बात यह है कि साहित्य कोई यान्त्रिक पद्धति पद्धति नहीं है, जिसमें समस्त गुण उपस्थित हो। इसी की सीमाओं को स्पष्ट करने में डॉ0 एस0 के0 डे0 की निम्न पंक्तियाँ सहायक है– ''रीति मत में वैदर्भी, गौडीय तथा अन्य प्रकार की शैलियों के परस्पर भेद निरूपण का ईर्ष्यापद तथा निरर्थक प्रत्यन किया गया। इस लिए इसकी आलोचना तथा विरोध स्वभाविक ही था, क्यों कि इन शैलियों का वास्तविक रूप से मतभेद रहना अनिवार्य या। इसी प्रकार न्यनाधिक औपचारिक विश्लेषण के आधार पर सभी काव्य गुणों तथा दोषों को निश्चित सीमाओं में रूढ़ का देने का प्रयत्न युवितसंगत न हो सका।''

इस प्रकार हम देखते है कि भारत के प्रादेशिक आधार पर विभाजन वाली संकीर्ण मानसिकता से ऊपर उठकर रीति को गुण के आश्रित विशिष्ट पदरचना के महत्वपूर्ण पद प्रतिष्ठित किया। आगे के आचार्यो के विवेचन से यह काव्य की आत्मा की जगह इसका एक अंग बनकर रह गया। उसका कारण ध्वनिवादी आचार्यो का काव्य के आन्तरिक पक्ष पर विशेष ध्यान दिया जाना था।

सन्दर्भ ग्रन्थ :–

1. 'संस्कृत काव्यशास्त्र का इतिहास – डॉ0 एस0के0डे0
2. 'भारतीय काव्यशास्त्र'–डॉ0 सत्यदेव चौधरी।
3. 'भारतीय काव्यशास्त्र'–डॉ0 तारक नाथ वाली।
4. 'काव्य शास्त्र'–डॉ0 भागीरथ मिश्र।
5. 'भारतीय काव्य शास्त्र की भूमिका' डॉ0 योगेन्द्र प्रताप सिंह।

विद्यालयों में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) की उपयोगिता

शोध निर्देशक
विनय कुमार सिंह
विभागाध्यक्ष
शिक्षक–शिक्षा विभाग
तिलकधारी स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
जौनपुर (उ0प्र0)

शोधकर्त्री
नाजिया
एम0एड्0, नेट
तिलकधारी स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
जौनपुर (उ0प्र0)

सारांश

आधुनिक युग में शिक्षा एवं कक्षा–कक्ष शिक्षण में गुणवत्ता, परिवर्तन तथा शैक्षिक अभियंत्रण तथा प्रबन्धन में आने वाली विभिन्न समस्याओं के समाधान के विशिष्ट साधनों के रूप में सूचना एवं संचार तकनीकी का प्रयोग सफलतापूर्वक किया किया जा रहा है। राष्ट्र की आवश्यकता एवं शैक्षिक परिवेश को ध्यान में रखते हुए शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में भी तकनीकी के प्रयोग एवं उपयोगी की आवश्यकता है। प्रतियोगितात्मक दौर में यह प्रत्येक विद्यार्थी की प्रथम आवश्यकता होती है, अपने ज्ञान को अद्यतन करना और ऐसे में जब शिक्षा एवं विज्ञान के क्षेत्र में नित–नये परिवर्तन हो रहे हैं तो सूचना एवं संचार तकनीकी की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो जाती है क्योंकि यह ही वह साधन है जिसके द्वारा विद्यार्थियों को सही एवं प्रामाणिक जानकारी प्राप्त होती है। शिक्षक विद्यालय में सूचना एवं संचार तकनीकी का प्रयोग करके समय–समय पर आने वाली कठिनाईयों को एक आरे जहाँ दूर करता है वहीं दूसरी ओर अपनी शिक्षण तकनीकी का मूल्यांकन करके अपने शिक्षण में गुणात्मक परिवर्तन एवं सुधार लाता है।

मुख्य शब्द– सूचना, संचार, प्रौद्योगिकी, विद्यालय, उपयोगिता, महत्व

शिक्षा मानव जीवन की आधार शिला है। किसी देश की प्रगति एवं विकास के लिए शिक्षा अति आवश्यक है। शिक्षा को तीसरा नेत्र कहा गया है। पं0 नेहरू ने भारतीय संस्कृति के विषय में लिखा है कि ज्ञान की खोज ही भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता है। भारतीय विचारधारा में मोक्ष को ही परम पुरुषार्थ बताया गया है। अतः उसी विद्या को सफल स्वीकार किया गया है जिसमें मोक्ष मिल सके। शिक्षा से मनुष्य को प्रकाश मिलता है। जिसके पास ज्ञान की ज्योति नहीं है वह नेत्रविहीन की भाँति है। अतः विद्याविहीन मनुष्य को पशु कहा गया है। जैसा कि कहा भी गया है–

साहित्य, संगीत, कला विहीनः

साक्षात् पशु पुच्छविषाण हीनः। (नीतिशतकम्)

बिना विद्या प्राप्त किये मनुष्य विप्रपद नहीं पा सकता, वह केवल शूद्र या अधिक से अधिक द्विज कहलाएगा।

शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से मानव जाति द्वारा अर्जित सहस्र वर्षों के अनुभव बालक को हस्तान्तरित कर दिये जाते हैं ओर शिक्षा के माध्यम से ही वह अपने समाज की संस्कृति को ग्रहण करता है। मानव के ज्ञान–विज्ञान की प्रगति में शिक्षा की प्रक्रिया सर्वाधिक आश्चर्य जनक, सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एवं सर्वाधिक क्रान्तिकारी खोज है।

मानव जीवन–दृष्टि चाहे जो भी रही हो, उसने शारीरिक शक्ति, मानसिक विकास, बौद्धिक विकास, भौतिक सुख समृद्धि एवं आध्यात्मिक पूर्णता के लिए एकमात्र शिक्षा का सहारा लिया।

किसी भी राष्ट्र की प्रगति का मूलाधार उस राष्ट्र की शिक्षा और अपनायी गयी तकनीकी है। आधुनिक युग में प्रत्येक राष्ट्र अपने आपको अत्याधुनिक बनाने हेतु शिक्षा और तकनीकी के अधिकाधिक परिशोधन, परिमार्जन और विकास की दिशा में अग्रसर है। शिक्षा में नित नयी मान्यताएँ, नये आयाम जुड़ रहे हैं। शिक्षा में अभ्युदित नवीन आयाम, शिक्षा को नयी दिशा प्रदान कर रहे हैं। आधुनिक युग सूचना और संचार तकनीकी का युग है। कम्प्यूटर, इन्टरनेट, ई–मेल, ई–गर्वेनस, ई–कॉमर्स, ई–एजूकेशन, मोबाइल और भी न जाने कितनी ऐसी प्रणालियाँ जिन्होंने मनुष्य के जीवन को न केवल सुगम ही बनाया है अपितु श्रम शक्ति के समुचित अधिकतम उपयोग का मार्ग प्रशस्त किया है। विद्यालयीन शिक्षा भी सूचना एवं संचार तकनीकी के प्रभाव से अछूती नहीं है।

आज का विद्यालयी शिक्षक एवं विद्यार्थी इन्टरनेट और ई–मेल के माध्यम से नित नवीन खगोलीय, भौगोलिक, वैज्ञानिक और सामान्य ज्ञान की जानकारी प्राप्त करके अपने ज्ञान भण्डार का विस्तार कर रहे हैं। आज शिक्षक और विद्यार्थी को सूचना एवं संचार तकनीकी के साधनों के माध्यम से शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया, प्रभावी सम्प्रेषण और शिक्षा में नवाचारों से शीघ्रातिशीघ्र जानकारी उपलब्ध हो रही है। भू–मण्डलीकरण और वैश्वीकरण के इस युग में सूचना एवं संचार तकनीकी के माध्यम से शिक्षा जगत पूर्णतः प्रभावित है। आज के शिक्षक व विद्यार्थी को ऐसी शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है जिसकी पूर्ति के लिए तकनीकी के इन साधनों का समावेश और प्रयोग पाठ्यक्रम में अपेक्षित है।

इक्कीसवीं सदी में भारतीय शिक्षा–व्यवस्था के महत्त्वपूर्ण अंग के रूप में उभरे सूचना–तकनीकी–चिकित्सा–संचार और प्रबंधन के अध्ययन को व्यवस्थित करने का कार्य प्रमुख रूप से राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने किया। इक्कीसवीं शताब्दी के प्रमुख प्रेरक बल के रूप में ज्ञान को स्वीकार करते हुए, वैश्विक स्तर पर एक प्रतियोगी खिलाड़ी के रूप में उभरने की भारत की क्षमता की ज्ञान संसाधनों पर निर्भरता को स्वीकार करते हुए और 25 वर्ष से कम आयु के 55 करोड़ युवकों सहित भारत की मानवीय पूँजी को सामर्थ्यवान बनाने की आवश्यकता को स्वीकार करते हुए 13 जून, सन् 2005 को श्री सैम पित्रोदा की अध्यक्षता में राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का गठन किया गया। सन् 2006 में राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने सिफारिशें दीं कि पुस्तकालय, अनुवाद, अंग्रेजी भाषा अध्यापन, राष्ट्रीय ज्ञान तंत्र (नेटवर्क), शिक्षा का अधिकार, व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण, उच्चतर शिक्षा, राष्ट्रीय विज्ञान और समाज विज्ञान प्रतिष्ठान तथा ई–अधिकारिता के क्षेत्रों में त्वरित विकास किया गया। सन् 2007, 2008 और 2009 में क्रमशः मुक्त शैक्षिक पाठ्य विवरण, प्रबंध शिक्षा, बौद्धिक संपदा अधिकार, नवाचार, स्कूल शिक्षा, उत्तम पी–एच.डी., उद्यमशीलताय कृ षि, जीवन–स्तर में सुधार लाना आदि प्रमुख सिफारिशें दी गईं। प्रधानमंत्री के सलाहकार के रूप में कार्य करने वाले राष्ट्रीय ज्ञान आयोग की सिफारिशों के आधार पर प्रत्येक राज्य में एक केंद्रीय

विश्वविद्यालय, एक चिकित्सा संस्थान, एक प्रबन्धन संस्थान और एक प्रौद्योगिकी संस्थान खोलने की दिशा में प्रयास किये गये और इनमें अपेक्षित सफलता भी प्राप्त हुई।

शिक्षा—व्यवस्था के निजीकरण की अवधारणा के विकसित होने के साथ ही निजी विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों, इण्टर कॉलेजों और पब्लिक स्कूलों की संख्या भी देश में तेजी से बढ़ी है। शिक्षा के निजीकरण ने जहाँ एक ओर ज्ञान की सुलभता के अवसरों की वृद्धि की है, वहीं दूसरी ओर शिक्षण—प्रशिक्षण प्रविधियों, शिक्षा के क्षेत्र में तकनीक के अनुप्रयोगों, कक्षाओं के स्वरूप बदलावों, सूचनाओं की असीमित उपलब्धताओं और व्यावहारिकताओं को, खुलेपन को बढ़ावा दिया है।

इन्टरनेट के कारण कोई भी व्यक्ति मानव द्वारा अर्जित सम्पूर्ण ज्ञान को अपने अध्ययन कक्ष में बुला सकता है। इस दृष्टि से देखे तो प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की यह बात सही लगती है कि सूचना एवं संचार तकनीकी ने अधिगम के उच्च स्तरों तक पहुँचने के मार्ग की सभी बाधाओं को दूर कर दिया है। आवश्यकता इसका उचित उपयोग करने की है।

स्कूलों में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) योजना दिसम्बर, 2004 में माध्यमिक स्तर के छात्रों को मुख्यतः अपनी आईसीटी कौशल क्षमता बढ़ाने और कम्प्यूटर सहायक शिक्षण प्रक्रिया के माध्यम से सीखने के अवसर प्रदान करने हेतु किया गया था। यह योजना छात्रों के विभिन्न सामाजिक, आर्थिक डिजिटल डिवाइड और अन्य भौगोलिक अवरोधों को पार करने का सेतु है। योजना राज्योंध्संघ राज्य क्षेत्रों को चिरस्थायी आधार पर कम्प्यूटर प्रयोगशालाएं स्थापित करने के लिए सहायता प्रदान करती है। इसका केन्द्रीय विद्यालयों और नवोदय विद्यालयों में स्मार्ट स्कूल स्थापित करने का उद्देश्य भी है जो भारत सरकार के 'प्रौद्योगिकी प्रदर्शकों' के रूप में काम करने और आईसीटी कौशल को पड़ोस के स्कूलों में प्रसारित करने हेतु गति प्रदान करने वाली संस्थाएं हैं।

अब तक अर्जित अनुभव के आधार पर यह योजना जुलाई, 2010 में संशोधित की गयी थी— प्रथम है माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक, सरकारी और सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों को कम्प्यूटर सहायक शिक्षा प्रदान करने के लिए राज्य सरकार और संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों के साथ भागीदारी। दूसरा है स्मार्ट स्कूलों की स्थापना करना जो प्रौद्योगिकी प्रदर्शक होंगे। तीसरा घटक है शिक्षक—संबंधित हस्तक्षेप जैसे — विशिष्ट शिक्षक की नियुक्ति, आईसीटी में सभी शिक्षकों की क्षमता—बढ़ाना और प्रेरणा के रूप में राष्ट्रीय आईसीटी पुरस्कार हेतु योजना। चौथे का संबंध मुख्यतः केन्द्रीय शिक्षा प्रौद्योगिकी संस्थान (सीआईईटी), 6 शिक्षा प्रौद्योगिकी संबंधी राज्य संस्थानों (एसआईईटी) और 5 प्रादेशिक शिक्षा संस्थानों (आरआईई) और आउटसोर्सिंग के माध्यम से भी, ई—विषयवस्तु का विकास किया जा रहा है।

विद्यालयों में सूचना एवं संचार तकनीकी की उपयोगिता से तथ्यों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाया जा रहा है, विद्यालयों में विद्यार्थियों को नवीन जानकारी को असली रूप में उनके पास पहुँच जा रहा है तथा शिक्षा जगत में हो रहे परिवर्तनों से अवगत किया जा सकता है तथा दूरस्थ स्थान पर बैठे विशेषज्ञ अध्यापक या वैज्ञानिक से टैली कॉन्फ्रेंन्सिग द्वारा गाँवों तक जानकारी प्राप्त कर ले रहा है तथा विद्यार्थियों—शिक्षकों के मध्य अन्तःक्रिया को बढ़ावा मिल रहा है तथा इन्टरनेट द्वारा उनकी जिज्ञासाओं को शान्ति मिल रही है।

वर्तमान समय में सूचना एवं संचार तकनीकी के द्वारा विषयों की जटिलताओं को स्पष्टीकरण किया जा रहा है, विभिन्न क्रियाओं, परिवर्तनों एवं संरचनाओं को प्रैक्टिकल रूप में

देखा जा रहा है। ग्रामीण छात्रों में सूचना एवं संचार तकनीकी के माध्यम से पुस्तकों एवं शिक्षा से सम्बन्धित अन्य पाठ्यक्रम आसानी से उपलब्ध हो जा रही है।

सूचना एवं संचार तकनीकी का शिक्षण में प्रयोग से कक्षा शिक्षण को प्रभावशाली बनाया जा रहा है। बालकों में नवीन चेतना का विकास, निर्णय लेने की क्षमता में वृद्धि सम्प्रेषण का विकास, अभिरूचियों में वृद्धि, सकारात्मक अभिव्यक्ति, वैज्ञानिक अभिवृत्ति का विकास, अनुशासन में वृद्धि, अनावश्यक तनाव से मुक्ति, कठिन विषयों को जल करने में सहायता, जिज्ञासाओं की शान्ति एवं उनके आत्म विश्वास में वृद्धि आदि देखने को मिल रहा है।

बदलते भारत की गुंज भारतीय भूगोल को लांघ चुकी है। बदलाव के बयार को पूरी दुनिया स्वीकारने लगी है। संचार क्रांति ने तो बदलाव की गति को और तीव्र कर दिया है। गांवों में बसने वाला भारत अब ई–क्रांति का अग्रदूत बनने की राह पर है।

शिक्षा व्यवस्था में बदलाव गाँवों तक पहुंचे, यह विकसित होते भारत की नितांत आवश्यकता है। लेकिन गांवों में डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर शहरों के मुकाबले काफी कमजोर है। यही कारण है कि देश में इंटरनेट का उपयोग करने वाली गरीब 23 फीसदी आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है। जबकि इंटरनेट का इस्तेमाल करने वाले उपभोक्ताओं की संख्या के आधार पर भारत दुनिया में चीन और अमेरिका के बाद तीसरा स्थान रखता है। वह भी तब जब, 2014 के अंत तक देश की केवल 19.19 फीसदी आबादी ही इंटरनेट से जुड़ी थी।

तकनीक हमेशा से नवयुग में प्रवेश का माध्यम रही है। चाहे वह पेपर हो, प्रिंटिंग प्रेस हो, ब्लैकबोर्ड हो, पुस्तकें हों अथवा इक्कीसवीं सदी का मोबाइल ब्रोड्बैंड और इन्टरनेट–सुविधा हो। अब देखना यह होगा कि इस नव–क्रांति का हम कितना सकारात्मक उपयोग करते हैं। पर इतना तो अवश्य कहा जा सकता है कि जैसे–जैसे ग्रामीण भारत, सूचना तंत्र से जुड़ता जाएगा, भारत में ज्ञान का उत्पादन भी बढ़ता जायेगा और एक बार पुनः हम वैश्विक स्तर पर अपना ज्ञान–पताका फहरा पायेंगे!

संचार माध्यम एवं शिक्षा का घनिष्ट सम्बन्ध है। संचार माध्यम शिक्षा प्रदान करने का एक सशक्त माध्यम है। संचार माध्यम के अनेक साधनों – टी0वी0, केबिल, मोबाइल, इण्टरनेट, अखबार, कम्प्यूटर आदि के द्वारा विद्यार्थियों मे मौलिकता, प्रवाह, किसी समस्या के प्रति संवेदनशीलता आदि गुणों का विकास किया जा सकता है।

निष्कर्ष–

आधुनिक युग में शिक्षा एवं कक्षा–कक्ष शिक्षण में गुणवत्ता, परिवर्तन तथा शैक्षिक अभियंत्रण तथा प्रबन्धन में आने वाली विभिन्न समस्याओं के समाधान के विशिष्ट साधनों के रूप में सूचना एवं संचार तकनीकी का प्रयोग सफलतापूर्वक किया किया जा रहा है। राष्ट्र की आवश्यकता एवं शैक्षिक परिवेश को ध्यान में रखते हुए शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में भी तकनीकी के प्रयोग एवं उपयोगी की आवश्यकता है। प्रतियोगितात्मक दौर में यह प्रत्येक विद्यार्थी की प्रथम आवश्यकता होती है, अपने ज्ञान को अद्यतन करना और ऐसे में जब शिक्षा एवं विज्ञान के क्षेत्र में नित–नये परिवर्तन हो रहे हैं तो सूचना एवं संचार तकनीकी की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो जाती है क्योंकि यह ही वह साधन है जिसके द्वारा विद्यार्थियों को सही एवं प्रामाणिक जानकारी प्राप्त होती है। शिक्षक विद्यालय में सूचना एवं संचार तकनीकी का प्रयोग करके समय–समय पर आने वाली कठिनाईयों को एक आरे जहाँ दूर करता है वहीं दूसरी ओर अपनी शिक्षण तकनीकी का मूल्यांकन करके अपने शिक्षण में गुणात्मक परिवर्तन एवं सुधार लाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अग्रवाल, जे.सी. (2005). शैक्षिक तकनीकी तथा प्रबन्ध के मूल तत्व, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
2. उपाध्याय, राजेश्वर व पाण्डे, सरला (2001). शैक्षिक तकनालॉजी के आयाम, विश्वविद्यालय, प्रकाशन, वाराणसी।
3. राजपूत, प्रो. जगमोहन सिंह (2009). क्यों तनावग्रस्त है शिक्षा–व्यवस्था?, शिक्षा से दूर होते मूल्य एवं संवेदनाएँ, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. पाण्डे, के.पी. (1983). एडवॉन्सड एजुकेशनल साइकोलॉजी फॉर टीचर्स, अमिताश प्रकाशन, मेरठ।
5. पाण्डेय, प्रो0 रामसकल (1988). आधुनिक भारतीय शिक्षा दर्शन, भारतीय जनतंत्र और शिक्षा (व्याख्यान), केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा।
6. माथुर, एस.एस. (2007). शिक्षण कला एवं शैक्षिक तनीकी, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
7. शाह, माधुरी, आर तथा अन्य (1974). इन्सट्रक्शन इन एजुकेशन, सोमाया पब्लिशर्स, मुम्बई।
8. शर्मा, आर.ए. (1980). शिक्षा तकनीकी, माडर्न पब्लिशर्स, मेरठ।
9. सिंह, सुदेश (2005). शैक्षिक तकनीकी के मूलाधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा, 2005।

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

भारत में चुनावीय समस्याएं एवं समाधान : एक नजर

देवी लाल
तदर्थ सहायक प्राध्यापक,
राजनीति विज्ञान विभाग,
आर.के.एस.डी. (पी.जी.) महाविद्यालय, कैथल

सारांश :—भारत में चुनाव आयोग एक स्वतंत्र व संवैधानिक निकाय है। लोकतंत्र को प्रभावी बनाने में इसकी अहम भूमिका है। शुरू में चुनाव आयोग एक सदस्य निकाय था। परन्तु 1989 के बाद यह बहुसदसीय निकाय बन गया और इसकी भूमिका में भी परिवर्तन आ गया। भारत जैसे विभिन्नताओं वाले देश में जहां जातिवाद एवं सांप्रदायिकतावाद, धार्मिकता, भाषावाद, क्षेत्रवाद बहुत अधिक देश को प्रभावित करता है वहां पर निष्पक्ष एवं स्वतंत्र चुनाव करवाना चुनाव आयोग की बहुत बड़ी उपलब्धि भी है और चुनौती भी। चुनाव आयोग के सामने भारत जैसे देश में बहुत सी ऐसी समस्याएं हैं जैसे कि अपराधिक प्रवृत्ति के उम्मीदवारों को राजनीति में आने से रोकना, धार्मिक आधार पर चुनाव आयोग में मुद्दा बनने से रोकना, सभी लोगों के वोट पहचान पत्र तैयार करवाना ताकि उसमें कोई धांधली ना हो। जाली वोट बनाने से रोकना, सही समय पर चुनाव संपन्न करवाना, चुनाव आयोग स्वयं को किसी राजनीतिक विचारधारा की प्रभाविकता से अपने आप को बचाना यह भी चुनौती है। वर्तमान में समय व धन की बचत व सुरक्षा की दृष्टि से तकनीकी का प्रयोग ज्यादा से ज्यादा करना जैसे ई.वी.एम. इत्यादि का प्रयोग। चुनाव प्रचार के दौरान भाषणों में भी आचार संहिता का कोई उल्लंघन ना हो इस पर भी पैनी नजर रखना सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। 2019 के इलेक्शन में बहुत से राजनेताओं पर चुनाव आयोग ने शिकंजा कसा उन पर एफ.आई.आर. भी हुई। चुनाव आयोग व राजनीतिक पार्टियां आमने सामने भी हुई। लेकिन चुनाव आयोग संवैधानिक एवं स्वतंत्र निकाय होने के नाते वह इन चुनौतियों से डरने वाला नहीं है। उसका कार्य स्वतंत्र व निष्पक्ष चुनाव करवा कर अपनी भूमिका बेदाग व स्पष्ट साबित करनी होती है। उसके सामने बहुत सारी ऐसी चुनौतियां समय.समय पर आती रहती हैं और वह अपने कार्य निरंतर व निष्पक्ष रुप से कर रहा है। भविष्य में भी चुनाव आयोग से जनता यही उम्मीद रखती हैं ताकि लोकतंत्र को और अधिक मजबूत किया जा सके और इन समस्याओं को कम किया जा सके। चुनाव आयोग इसके लिए निरन्तर प्रयास कर रहा है।

संकेत शब्द :— चुनाव आयोग, स्वतन्त्र एवं निष्पक्ष, तकनीकी, चुनौतियाँ, राजनैतिक प्रक्रिया।

भारत के संविधान के भाग 15 में आर्टिकल 324 से लेकर 329में चुनाव आयोग की व्याख्या की गई है । प्रारंभ में चुनाव आयोग आयोग एक सदस्य निकाय था परंतु 1989 में यह बहु सदस्य निकाय बन गया । भारत जब स्वतंत्र हुआ तो भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था को अपनाया और लोकतांत्रिक व्यवस्था को बढ़ावा देने के लिए चुनाव प्रणाली को अपनाया गया है।

भारत में प्रारंभ से ही चुनाव आयोग को एक संवैधानिक निकाय बनाया गया है। चुनाव आयोग एक स्वतंत्र एवं संवैधानिक निकाय है।चुनाव आयोग का महत्वपूर्ण कार्य भारत में राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति एवं लोकसभा के चुनाव राज्य विधानसभा के चुनाव समय–समय पर शांतिपूर्ण तरीके से करवाना है। क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत एक बहुत बड़ा राज्य है एक ही समय पर पूरे भारतवर्ष में चुनाव करवाना असंभव सा लगता है। फिर भी चुनाव आयोग समय–समय पर लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के चुनाव करवाता है। इन चुनाव में अनियमितताएं अधिक ना हो इसलिए चुनाव आयोग को बहुत सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है एवं बहुत महत्वपूर्ण कार्य करने पड़ते हैं। चुनाव आयोग के महत्वपूर्ण कार्यों को निम्न प्रकार से वर्णित किया गया है।

स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव करवाना।

चुनाव आयोग के सामने सबसे महत्वपूर्ण समस्या यही है कि पूरे भारतवर्ष में स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव करवाना है चुनाव आयोग की यह सबसे बड़ी जिम्मेवारी है कि इन चुनावों में कोई अनियमितताएं ना हो। किसी भी तरह का कोई किसी के साथ भेदभाव ना हो। सही समय पर चुनाव संपन्न करवाई जाए यह भी चुनाव आयोग की जिम्मेवारी है। भारत जनसंख्या की दृष्टि से विश्व का दूसरा बड़ा देश है। इतनी आबादी वाले देश में एक ही समय पर चुनाव संपन्न करवाना इतना संभव नहीं है हालांकि सरकार अभी भी यही प्रयास कर रही है कि एक चुनाव एक राष्ट्र की थ्योरी को अपनाया जाए लेकिन यह इतना संभव और इतना आसान नहीं लगता यह चुनाव आयोग के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती है।

अपराधिक प्रवृत्ति के उम्मीदवारों पर रोक

चुनाव आयोग के सामने दूसरी सबसे बड़ी समस्या यह है कि चुनाव के अंदर कोई भी आपराधिक प्रवृत्ति का उम्मीदवार ना खड़ा हो और ना ही वह इलेक्शन या चुनाव जीत कर आए। क्योंकि इससे लोकतंत्र कमजोर होता है और जनता का लोकतंत्र से विश्वास उठता है। हालांकि भारत में 100% अभी तक यह बंद नहीं हो पाया है जिसके कारण राजनीति के अंदर हमें भ्रष्टाचार देखने को मिलता है। भ्रष्टाचार की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलता है लोकतंत्र के ऊपर भी बाहरी देशों से उंगलियां उठती हैं क्योंकि भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र देश है।

वोट पहचान पत्र तैयार करवाना

भारत में चुनाव आयोग का एक महत्वपूर्ण कार्य व समस्या यह भी है कि पूरे भारतवर्ष में सभी व्यक्तियों की वोट पहचान पत्र बनवाए जाएं परंतु प्रत्येक व्यक्ति का वोट पहचान पत्र तैयार करवाने में बहुत सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है । राज्य चुनाव आयोग को यह जिम्मेवारी सौंप दी जाती है ताकि वह पूरा डाटा कलेक्ट कर के सभी व्यक्तियों के वोट पहचान पत्र तैयार करवाए जाएं ताकि इलेक्शन में प्रत्येक व्यक्ति अपने वोट के अधिकार का प्रयोग कर सकें।

जाली वोट को रोकना

भारत में चुनाव के समय एक समस्या यह भी देखने को मिलती है कि लोग अपनी वोट का दुरुपयोग करते हैं एक व्यक्ति दो या तीन जगह से ही अपनी वोट बनवा लेता है और दो और तीनों जगह पर चुनाव के समय में अपने वोट का प्रयोग करता है। कई बार जिस व्यक्ति का वोट नहीं बना होता वह भी वोट कर देता है। यह भी भारत में चुनाव के समय एक समस्या देखने को मिलती है

चुनाव आचार संहिता को लागू करना

भारत में चुनाव के समय चुनाव आयोग का सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह होता है कि चुनाव आचार संहिता को लागू करवाया जाए। चुनाव आचार संहिता के समय राजनीतिक दल अपने पक्ष में वोट करवाने के लिए जगह–जगह पर रेलिया निकालते हैं उन रैलियों में या सभाओं में धर्म के आधार पर जाति के आधार पर सांप्रदायिक भावनाओं को भड़का कर वोट को अपने पक्ष में करने का प्रयास करते हैं। इस तरह चुनाव आचार संहिता के मामलों को देखना भी चुनाव आयोग के लिए एक समस्या है।वर्तमान समय में भी चुनाव आयोग इसके ऊपर नजर रखता है और जहां पर भी चुनाव आचार संहिता का दुरुपयोग होता है वहीं पर चुनाव आयोग स्वतंत्र रूप से कार्यवाही करता है लेकिन चुनाव आयोग के लिए यह भी एक बहुत बड़ी चुनौती है।

तकनीकी का प्रयोग

भारत में चुनाव को संपन्न करवाने के लिए चुनाव आयोग के सामने बहुत सी ऐसी समस्याएं हैं जिसमें से एक महत्वपूर्ण समस्या है तकनीक का प्रयोग। प्रारंभ में चुनाव आयोग मतपत्रों के माध्यम से चुनाव को संपन्न करवाता था। परंतु अब तकनीकी के युग में इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन के माध्यम से वोटिंग करवाई जाती है । इन वोटिंग मशीनों को अरेंज करना उनकी सुरक्षा उनके अंदर कोई तकनीकी खराबी ना हो इसके लिए भी टेक्नीशियन को प्रोवाइड करवाना चुनाव आयोग के लिए सही समय पर चुनौती बन जाता है।

सत्तारूढ़ दल की प्रभाव कारिता से बचना भी एक चुनौती है

भारत में चुनाव आयोग के सामने एक महत्वपूर्ण समस्या यह भी होती है कि जिस समय में सत्तारूढ़ दल राजनीति में होता है तो वह चुनाव आयोग पर किसी भी तरह का नियंत्रण स्थापित करने का प्रयास करता है। लेकिन चुनाव आयोग के सामने यह एक समस्या है कि वह उसकी प्रभाव कारिता से बचें ताकि स्वतंत्र निष्पक्ष व लोकतंत्र को मजबूत बनाने के लिए चुनाव करवाए जा सकें।

भारत में चुनाव आयोग को एक महत्वपूर्ण दर्जा प्राप्त है भारत के संविधान में इसको संवैधानिक दर्जा दिया गया है और यह एक स्वतंत्र निकाय है चुनाव आयोग समय–समय पर अपनी महत्वपूर्ण कार्यों से अपने निर्णयों से अपनी प्रभाव कारिता को दर्शाता है। भारत जैसे देश में जहां इतनी विभिन्नताए पाई जाती हैं जहां पर व्यक्ति धर्मों में, जातियों में, संप्रदायों में बटे हुए होते हैं

वहां पर चुनाव करवाना असंभव सा होता है लेकिन चुनाव आयोग अपनी जिम्मेदारियों को समझते हुए निरंतर 1952 से लेकर अब तक 2022 तक चुनाव संपन्न करवा रहा है और यह उसके लिए उपलब्धि भी है और एक बहुत बड़ी चुनौती भी। आने वाले भविष्य में भी चुनाव आयोग के सामने और भी बहुत सी समस्याएं आ सकती है। इन समस्याओं से निकलना चुनाव आयोग के ऊपर ही निर्भर करता है कि वह उन चुनौतियों को कितना मानता है या फिर उन चुनौतियों से किस तरह से निकलता है यह चुनाव आयोग की प्रभाव कारिता को दर्शाता है।

वर्तमान में चुनाव आयोग ने निम्नलिखित सदस्यों के खिलाफ आदेश वह चार्ज शीट जारी किया है वह कारण बताओ नोटिस भी जारी किए हैं उनकी सूची निम्नलिखित प्रकार से है :–

i. श्री टी. राजा तेलंगाना विधानसभा क्षेत्र।
ii. श्री मयंक केश्वर शरण सिंह 178 तिलोई विधानसभा क्षेत्र यूपी भाजपा उम्मीदवार।
iii. राघवेंद्र प्रताप सिंह बीजेपी उम्मीदवार डुमरियागंज विधानसभा क्षेत्र यूपी।
iv. सुहेलदेव भारतीय समाजवादी पार्टी 356 मऊ विधानसभा क्षेत्र यूपी
v. श्री नरेंद्र नाथ चक्रवर्ती 275 पांडेश्वर विधानसभा क्षेत्र

निष्कर्ष :– निष्कर्ष के तौर पर यह कहा जा सकता है कि चुनाव आयोग ने जिन व्यक्तियों के खिलाफ कारण बताओ नोटिस जारी किया है उनकी सूची बहुत लंबी है वर्तमान में यह समस्या चुनाव आयोग के सामने बढ़ती ही जा रही है भविष्य में भी ऐसी ही समस्याओं का सामना चुनाव आयोग को करना पड़ सकता है।

इसलिए चुनाव आयोग समय–समय पर सतर्क रहता है तथा इन चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार भी रहता है।भारत जैसे विभिन्नता वाले देश में चुनाव आयोग के सामने यह समस्या दिन प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। चुनाव आयोग निरंतर अपने कार्यों में लगा हुआ है। चुनाव आयोग स्वतंत्र निकाय भले ही हो लेकिन इसके ऊपर सत्ताधारी सरकार का प्रभाव भी देखने को हमें मिलता है फिर भी चुनाव आयोग इन समस्याओं से तथा चुनौतियों से समय–समय पर जूझता रहा है तथा अपने सामर्थ्य को साबित भी करता है।

References :

1 चुनाव सुधार (सुशासन की ओर एक कदम), मनोज अग्रवाल।
2 भारत की राजव्यवस्था, एम लक्ष्मीकांत, टाटा मैकग्रा हिल।
3 राज्य सभा टीवी, डिबेट विद एस वाई कुरैशी, पूर्व मुख्य चुनाव अधिकारी।

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

रवीन्द्र संगीत में पाश्चात्य संगीत प्रभाव

डॉ0 रूमा चटर्जी
असि0 प्रोफेसर
दाऊ महिला (पी.जी.) कॉलेज, फिरोजाबाद

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा रचित 'रवीन्द्र संगीत' का पश्चिम बंगाल के संस्कृति से अटूट सम्बन्ध है। वास्तव में देखा जाए तो रवीन्द्र संगीत में शास्त्रीय संगीत, लोक संगीत एवं पाश्चात्य संगीत तीनों का समावेश है। इस पत्रिका में मेरा चर्चा विषयवस्तु पाश्चात्य संगीत का रवीन्द्र संगीत में प्रभाव है। यदि हम रवीन्द्रनाथ जी के पारिवारिक पृष्ठभूमि पर जाए तो पता चलता है कि उनके पितामह द्वारिका नाथ ठाकुर में विदेशी सभ्यता व रहन–सहन साफ झलकता था। वे पाश्चात्य संगीत में विशेष रुचि रखते थे एवं अपने साथ एक जर्मन संगीतकार को हमेशा रखते थे। द्वारिका नाथ जी के पुत्र एवं रवीन्द्र नाथ के पिता देवेन्द्रनाथ पाश्चात्य संगीत की शिक्षा प्राप्त किये थे। इसी वातावरण के चलते रवीन्द्रनाथ व अन्य भाइयों का पाश्चात्य संगीत के प्रति रुझान था।

पाश्चात्य संगीत का विकास 250 वर्षों से पुराना नहीं है। स्वरों का मिश्रण जो भाषाओं को प्रभावित करे वही पाश्चात्य संगीत है जबकि भारतीय संगीतज्ञों के अनुसार गायन, वादन व नृत्य की एकीकरण को ही संगीत कहा जाता है।गायन व नृत्य में भावनाओं की प्रधानता होती है। इस प्रकार संगीत की परिभाषा चाहे भारतीय दृष्टिकोण से हो अथवा पाश्चात्य, दोनों का लक्ष्य मनुष्य की भावनाओं को प्रभावित करता है। पाश्चात्य संगीत रचनाओं में मुख्यतः दो प्रकार पाए जाते हैं एक जिसमें केवल वाद्य संगीत का प्रचलन है और दूसरा जिसमें वाद्य संगीत के साथ कण्ठसंगीत भी चलता है। मुख्य रूप से कैनन, राउण्ड, मिरर कैनन, फग, सैण्डो, सिम्फौनी इत्यादि वाद्य संगीत में प्रचलित है।

भारतीय संगीत के रागों के स्थान पर जो संगीत बजाया जाता है उसे पाश्चात्य संगीत में थीम्स कहते हैं। भारतीय संगीत का आधार मैलोडी और पाश्चात्य संगीत का आधार हारमोनी होता है। जब एक स्वर को इस प्रकार रखा जाए कि स्वर रचना मनमोहक बन जाए तो उसे मैलोडी कहते हैं। परन्तु जब कम से कम दो स्वरों अथवा अधिक स्वरों को मैलोडी के साथ बजाकर रचना की जाए उसे हारमोनी कहते हैं। आन्तरिक भावनाओं को उत्पन्न करने की शक्ति केवल भारतीय संगीत अथवा मैलोडी में होता है। बाह्य भावनाओं जैसे भय, आश्चर्य का सृजन

सिर्फ हारमोनी में सम्भव है। पाश्चात्य संगीत में भावनाओं को प्रभावित करने के लिए काईस का सहारा लिया जाता है। यह संगीत सामूहिक मनोरंजन के उद्देश्य से उत्पन्न हुआ है।

रवीन्द्र संगीत में पाश्चात्य संगीत का प्रभाव :

रवीन्द्रनाथ को सर्वप्रथम अपने ज्योति दादा से पाश्चात्य संगीत सुनने को मिला। उनके अपनी रचनाओं में इसका उल्लेख मिलता है। हमारे घर में कई पन्नों में क्यूर की रची हुई आइरिश मैलोडी थी। अक्षय बाबू से उस कविता को कई बार सुनी। इस कविता ने मेरे ह्रदय में आयरलैण्ड के प्रति एक अद्भुत खिंचाव ला दिया था। इस आइरिश मैलोडी को मैं गीत रूप में सुनूँगा, सिखूँगा एवं सीख कर अक्षय बाबू को सुनाऊँगा— ऐसी तीव्र इच्छा बन गई थी। किन्तु विलायत जाकर मुझे शुरू से अन्त तक सम्पूर्ण करने की इच्छा अब न रही।[1]

बाद में सुनते सुनते व सीखते सीखते विदेशी गीतों के प्रति रुचि बढ़ी। पुनः उन्होंने लिखा कि छोटे उम्र में चौपीन व अन्य को मैंने सुना था। रवीन्द्रनाथ जी ने देशी व भारतीय (शास्त्रीय या लोक संगीत) पर जितने गीत बनाए उससे कम मात्रा में पाश्चात्य संगीत पर आधारित गीत बनाए। उसके अन्तर्गत केवल 12 गाने आते हैं जो कि विदेशी सुर को तोड़कर बांग्ला गीत बनाए गए हैं। इनको विदेशी संगीत ना बोलकर विलायती गीतबोलना ही सही होगा। इनमें आयरलैण्ड व स्कॉटलैण्ड का प्रभाव मिलता है। तालिका निम्न है जिनमें विलायती मूल गानों के स्वरों को बांग्ला गानों में प्रयोग किया गया है।[2,3]

1.	पुरानो सेई दिनेर कौथा	Auld Lang Syne स्वरवितान	32
2.	कोतो बार भेवे छिनू	drink to me only	35
3.	आहा आजि ए बसन्त	Go where glory waits three	48
4.	काली काली चौल के आज	Nancy lee	49
5.	सौकोली फुरालो स्वौप्नौ प्राय	Robin Adair	29
6.	तुई आये के काँधे आए	The British Grandiers	25
7.	ओ देखते के भाई आये रे	The Viear of Bray	29
8.	फुले फुले टौले टौले	Ye banks & braes	–
9.	तौवे आय सौवे आय	(unknown)	49

विदेश से लौटकर रवीन्द्रनाथ जी ने जो रचनाएँ लिखीं उसमें स्वाभाविक तौर पर पाश्चात्य स्वर लहरियाँ उभरीं। 'कालमृगया' व बाल्मीकि प्रतिभा के गीतों में ऐसा प्रभाव साफ रूप से झलकता है।

रवीन्द्र स्मृति में इन्दिरा देवी ने ऐसे गीतों का उल्लेख किया जिसमें सर्वप्रमुख राष्ट्रगान 'जन गण मन अधिनायक जय हे' है।[4] अन्य प्रमुख गीत हैं–

मातृमन्दिर पुण्य अंगन
भालो बेसे जोदि सुख नाहि
मायो जीवन निकुंजे।

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ के विलायती गानों को अगर भौगोलिक आधार पर देखा जाए तो–

(1) Scottish सुर के गाने– Auld lang syne ye banksbraes

(2) Irish सुर के गाने– Go where glory waits three

(3) English सुर के गाने– Drink to me only Nancy lee

रवीन्द्रनाथ के कुछ गाने जिसमें पाश्चात्य संगीत का प्रभाव साफ झलकता है–

1. आगूनेर परसमणि छुवाओ प्राणे
2. आजि शुभ दिने पितारो भोवोने
3. आमारा नूतन यौवनेरी दूत
4. एनेछि मोरा एनेछि मोरा
5. तोमार होलो शुरू
6. खौरोवायु कौये वेगे
7. प्राण चाए चोक्शू न चाए।[5]

उनके अनुसार– ''यूरोपीय संगीत मुझे आकर्षित करता है। मुझे उनके गाने रोमान्टिक लगते हैं। उनके गानों में मानव जीवन के विचित्रता को भी अनुवाद करके प्रकाश किया है। हमारे संगीत में इसकी कमी है।

रवीन्द्रनाथ विदेशी धुनों से प्रभावित थे। 1860 में लगभग एक माह विलायत में रहे यह उनका दूसरा आगमन था। इसी बीच उन्होंने बच्चों को गीत सिखाए एवं पाश्चात्य संगीत का अध्ययन किया। सरला देवी (उनकी भाँजी) उन दिनों पियानों का प्रशिक्षण ले रही थी। उनके अनुसार रवि मामा ने कुछ गीतों में विदेशी कौर्ड लगाकर गाया था। हार्मोनी के लगाने से उनके गीतों में नया रंग आने लगा था जैसे–

1. आयि चिनी गो चिनी तोमारे
2. सुखे आछि सौखा आयोन मोने
3. एसो एसो बौसोन्तो धोरातोले
4. ममोचित्ते निजो नृत्ये

तत्कालीन लोगों ने पश्चिमी संगीत के प्रयोग को सराहा। 'बाल्मीकि प्रतिभा', 'कालमृग' इत्यादि के अतिरिक्त 1874 में ज्योतिन्द्र नाथ के सरोजिनी नाटक में भी विदेशी सुर सुनने को मिलता है–

1. प्रेमेर कौथा आर बोलोना
2. देख रे जौगोत मेलिए नोयोन

कवि रवीन्द्र का मानना है कि यूरोपीय संगीत मनुष्य के जीवन के साथ विशेष रूप से जुड़ा है और लोगों को आकर्षित करता है। इसलिए यह देखने को मिलता है कि सभी तरह के घटना व वर्णन को आधार मानकर यूरोपीय गीतों के सुरों का उपयोग किया जा सकता है, किन्तु यह प्रयोग भारतीय सुरों के साथ किया जाए तो एक अद्भुत स्थिति की सृष्टि होती है जिसमें रस बिल्कुल नहीं आएगा।[6]

संदर्भ ग्रन्थ :

1. जीवनस्मृति, रवीन्द्र रचनावली (भाग– 10), पृ0 89
2. रवीन्द्र संगीत विचित्र (शान्तिदेव घोष), पृ0 24
3. रवीन्द्र स्मृति, इन्दिरा देवी चौधरानी, पृ0 13
4. विलायती गान, भाग रवीन्द्र संगीत, अनुराधा पाल चौधरी, पृ0 2
5. रवीन्द्र संगीतायन में रवीन्द्र नाथ व पाश्चात्य संगीत, पृ0 15–16, लेखक भास्कर मित्र
6. ज्योतिर्नाथेर जीवन स्मृति– वसन्त कुमार चट्टोपाध्याय

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

''आजादी के अमृत महोत्सव में अंग्रेजी हुकूमत तथा स्त्री अस्तित्वबोध : अपमान और सम्मान''

प्रज्ञा पाण्डेय
शोध छात्रा
महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी

हम अंग्रेजों की हुकूमत से आजाद हुए 15 अगस्त 1947 को......। लेकिन अंग्रेजी हुकूमत से आज 15 अगस्त 2022 तक भी नहीं हो पाए। इस आधी–बादी, औने–पौने आजादी से हम पूर्ण सन्तुष्ट नहीं हैं? और आज आजादी के अमृत महोत्सव के 75वें वर्ष का जश्न मना रहे हैं। हमारा ध्यान अंग्रेजी हुकूमत से आजादी की ओर कभी गया ही नहीं। आखिर क्यों? आज भी सर्वोच्च न्यायालय का सरकारी कामकाज अंग्रेजी में होता है। भारत में ऐसे बहुत से विभाग हैं जहाँ आज भी कामकाज अंग्रेजी में होता है। प्रधानमंत्री जी के आदेश के बावजूद (देश का हर सरकारी कामकाज हिन्दी में होगा) आज भी दक्षिणी भारत में प्रबुद्ध लोग अंग्रेजी भाषी हैं।

अंग्रेजी हमारे देश के लिए वैकल्पिक भाषा न रहकर एक (स्किल) कौशल बन गयी है। यदि आप अंग्रेजी नहीं जानते तो कुछ नहीं जानते। एयरपोर्ट, होटल्स जैसे सार्वजनिक स्थान पर भी यदि आप अंग्रेजी नहीं बोलते समझते तो आपको अनपढ़ और गंवार माना जाता है। क्या हमारी भाषा विकलांग है कि उसे अंग्रेजी जैसी वैशाखियों की जरूरत है?

अंग्रेजी संस्कृति, रहन–सहन को हमने तेजी से अंगीकृत किया। उसे आगे भी बढ़ा रहे हैं उसका प्रचार–प्रसार भी कर रहे हैं। उसी अंग्रेजी हुकूमत में हम रच–बस गए हैं। इससे यही सिद्ध होता है कि हम अंग्रेजों से तो आजाद हो गए लेकिन अंग्रेजी से आजाद आज तक नहीं हो पाए। चाइना अंग्रेजी हुकूमत को नहीं मानता तो क्या वह किसी मामले में पीछे है? वह एक स्वतंत्र सत्ता रखता है अपनी भाषा, संस्कृति, रहन–सहन और सोशल मीडिया का।

हमारे यहाँ ब्लॉग या ट्वीट भी अंग्रेजी में किए जाते हैं। हमारे देश में एक नम्बर दबाने पर अंग्रेजी तथा दो नम्बर दबाने पर हिन्दी का प्रावधान है। इस हद तक अंग्रेजी का हुकूमत है हमारे ऊपर और हम स्वयं को आजादमानते हैं अंग्रेजों से...

अंग्रेज हमें शारीरिक रूप से आजाद करके गए लेकिन मानसिक रूप से हम आज भी गुलाम हैं अंग्रेजी के। हमारे देश में जो जितनी अच्छी अंग्रेजी बोलता, जानता, लिखता, पढ़ता है और अंग्रेजी वातावरण को बनाए रखता है, अंग्रेजी संस्कृति का अनुसरण करता है उसे आदर्श नागरिक और विद्वान विदुषी माना या समझा जाता है।

ये बात उस देश की है जहाँ हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्तान का नारा दिया गया है। इस अंग्रेजी हुकूमत में हिन्दी कहाँ है? आज देश को आजाद हुए 75 वर्ष हो गए किन्तु भारत आज भी पूर्णतः ''हिन्दी'' नहीं हो पाया। यह अंग्रेजी परस्त आज भी है तो स्वतंत्रता किस बात की और कहाँ तक स्वतंत्रता कोई सीमित वस्तु नहीं है जिसे कपड़े की तरह उठाया जाय और धारण किया जाए यह अमृत के समान मीठी विराट और विस्तृत है। स्वतंत्रता एक भाव है, संवेदना है जो भीतर से आती है। इसे जबरन थोपा नहीं जाता, स्वतंत्रता स्वयं में स्वतंत्र, व्यापक और पूर्ण है। इसे किसी अवलम्ब, आधार या सहायता की जरूरत नहीं है।

इसलिए स्वतंत्रता या तो पूर्णरूपेण होती है या होती ही नहीं। इसका मध्य का कोई मामला नहीं है। आजादी के अमृत महोत्सव के उद्बोधन में माननीय प्रधानमंत्री जी ने कहा– नारी का अपमान स्वीकार नहीं किया जाएगा। नारी सम्मान देश के विकास में बहुत भूमिका निभाने वाला है।

देश की आधी आबादी को आज तक स्वतंत्रता नहीं मिली क्यों?

पितृसत्तात्मक समाज में नारी बचपन में पिता द्वारा रक्षिणी है, जवानी में पति द्वारा रक्षिणी है और वृद्धावस्था में पुत्र द्वारा रक्षिणी है। ये बैसाखी कब तक साथ रहेगी...

सारी इज्जत का उत्तरदायित्व नारी पर ही क्यों डाला गया? पुरुष के ऊपर क्यों नहीं? नारी का अपमान इसलिए होता है कि उसने स्वयं की शक्ति को पहचाना ही नहीं। उसने अपनी सारी ऊर्जा पुरुष को बढ़ाने में लगाया चाहे वो पुरुष पिता, पति, भाई, पुत्र या मित्र किसी भी रूप में हो।

नारी में पुरुषों की अपेक्षा अधिक सहनशीलता, कर्मठता, धैर्य और आत्मविश्वास होता है फिर भी सक्सेज रेट पुरुषों का अधिक है...। विद्यालय या कोचिंग में नामांकन और उपस्थिति महिलाओं की अधिक है फिर भी सफलता की प्रतिशत पुरुषों की अधिक है।

चाहे वो न्यायालय हो, राजनीति हो, शिक्षा विभाग हो या देश का कोई भी क्षेत्र हो। ऐसा इसलिए है कि महिलाओं ने अपने ''स्वयं'' पर ध्यान नहीं दिया। इसने तो अपनी सारी ऊर्जा सौन्दर्य और प्रजनन में लगा दिया जिससे पुरुष का विकास हो। इसने अस्तित्व के विषय में सोचा ही नहीं।

नारी जब एक पुरुष को स्वयं को समर्पित करती है तब वह उसे आर्थिक और सामाजिक सुरक्षा देता है। इस समर्पण के साथ अस्तित्व भी तो होना चाहिए 'स्वयं' का। बिना अस्तित्व के समर्पण महत्वहीन होता है। तभी नारी अपमान की पात्र बनती है।

ओशो ने कहा है कि आप जिस पर ध्यान देते हैं वही चीज बढ़ती है। इससे यह सिद्ध होता है कि नारी ने पुरुष पर ध्यान दिया इसलिए पुरुषों की सत्ता है आज भी समाज में।

इसी कारण नारी का अपमान होता आया है और यदि अभी भी स्वयं के अस्तित्व पर महिलाओं ने ध्यान नहीं दिया तो आगे भी ऐसे ही अपमानित होती रहेंगी। नारी को सम्मान पाने के लिए स्वयं के तेज को जगाना पड़ेगा। ''आपन तेज सम्हारौ आपै।''

तुम अधूरे नहीं तुम अभागे नहीं

बात इतनी ही है

आप जागे नहीं।

जब से जग जाइए प्रात तब से सही

वरना बढ़ पाएंगे आप आगे नहीं।

निराशा और कुण्ठा को हटाकर आगे बढ़ने की जरूरत है। स्वयं को पहचानने की अंधकार को मिटाने के लिए दीपक की जरूरत है।

तुम स्वयं अपना दीपक जलाओ सखे

सो गयी चेतना को जगाओ सखे

रोशनी खुद तुम्हें देखने आएगी

यह निराशा की चादर हटाओ सखे।

अन्ततः देश की आधी आबादी से मेरी अपील है कि स्वयं को जगाए। अपनी ऊर्जा को स्वयं के अस्तित्व के निर्माण में लगाए। प्रधानमंत्री जी के कथनानुसार स्वयं के सम्मान से देश के विकास में योगदान दें और ये सम्मान तभी सम्भव होगा जब आप अपने अन्तस की ऊर्जा को जगाएंगे तभी नारी का अनमान बन्द होगा।

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

लिंग के आधार पर माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों के शैक्षणिक पर्यावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन

शोध निर्देशक
डॉ0 आलोक कुमार सिंह
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
शिक्षक शिक्षा विभाग
सल्तनत बहादुर पी0जी0 कालेज,
बदलापुर, जौनपुर (उ0प्र0)

शोधकर्त्ता
सुनील कुमार
एम0ए0 (भूगोल), एम0एड्0, नेट (शिक्षाशास्त्र)
वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय,
जौनपुर (उ0प्र0)

सारांश

समस्या कथन ''लिंग के आधार पर माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों के शैक्षणिक पर्यावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन'' करना है। अध्ययन में सहसम्बन्धात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श के चुनाव हेतु यादृच्छिक प्रतिदर्शन विधि का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में जौनपुर जनपद के 20 उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद से सम्बद्ध माध्यमिक विद्यालयों का चयन कर माध्यमिक विद्यालयों में से कुल 500 विद्यार्थियों (250 छात्र एवं 250 छात्राओं) का चयन यादृच्छिक विधि से किया गया है। शैक्षिक उपलब्धि के लिए विद्यार्थियों की हाईस्कूल परीक्षा में प्राप्त प्राप्तांकों को तथा एम0एल0 शाह एवं अमिता शाह द्वारा निर्मित ''एकेडमिक क्लाइमेट डिस्क्रप्शन क्वेश्चनायर'' का प्रयोग किया गया है। आँकड़ों के विश्लेषण हेतु एनोवा (प्रसरण) विधि एवं टी–अनुपात सांख्यिकी विधियों का प्रयोग किया गया है। अध्ययन के निष्कर्ष में पाया गया कि– शैक्षणिक पर्यावरण का लिंग के आधार पर विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि पर सकारात्मक प्रभाव पाया गया। **हिजकिय्याह एवं अन्य (2021).** ने अध्ययन में पाया कि स्कूली पर्यावरणीय कारकों का छात्रों के शैक्षणिक प्रदर्शन पर एक मजबूत प्रभाव था।

की–वर्ड– छात्र, छात्राएँ, माध्यमिक स्तर, शैक्षणिक पर्यावरण, शैक्षिक उपलब्धि, प्रभाव

भूमिका–

शिक्षा की आवश्यकता को पूरा करने के लिए सरकार ने निजी प्रयासों द्वारा विद्यालय स्थापित करने की नीति को प्रोत्साहित किया। इसका परिणाम भारी संख्या में विद्यालयों की स्थापना के रूप में सामने आया है। कई एकड़ क्षेत्रफल के विद्यालय से लेकर दो कमरों के विद्यालय भी स्थापित हो गये हैं। सरकार द्वारा पोषित विद्यालय में भारी असमानता दिखाई पड़ता है। कुछ विद्यालय अधिक साधन सम्पन्न हैं। कुछ की आर्थिक दशा सोचनीय है। चूंकि ये विद्यालय अपने शुल्क द्वारा ही पोषित होते हैं। अतः इसके प्रबन्धतंत्र का हर सम्भव प्रयास अत्यधिक धन उगाही पर रहता है। इतनी विषमताओं में अध्ययन करने के परिणाम स्वरूप छात्रों के शैक्षिक विकास पर क्या प्रभाव पड़ता है, सोचनीय प्रश्न है। हर गली मुहल्ले में हमें ऐसे

विद्यालय देखने को मिल जाते हैं, वहीं अनुदानित विद्यालयों में एकरूपता पाई जाती है। ये सरकार के मानकों के अनुरूप होते हैं। गैर सरकारी विद्यालय झूठे तथ्य प्रस्तुत कर मान्यता प्राप्त कर लेते हैं। ऐसे व्यावसायिक दौड़ में कहीं विद्यालय का शैक्षिक वातावरण तो प्रभावित नहीं हो रहा है, यह विचारणीय प्रश्न है। शिक्षा के वातावरण के सम्बन्ध में हक्सले महोदय का कथन उल्लेखनीय है। उनके शब्दों में ''शिक्षा का पर्यावरण शिक्षालय द्वारा निर्धारित होता है जिसमें कि माली रूपी शिक्षकों की देखरेख में बालक रूपी पौधे विकसित होते हैं। फलस्वरूप वातावरण ही सब कुछ है।'' इस कथन से शैक्षिक वातावरण का महत्व स्वयं स्पष्ट हो जाता है। ऐसे में इस प्रत्यय पर अध्ययन की आवश्यकता को नकारा नहीं जा सकता है। अध्ययन हेतु 'शैक्षिक वातावरण' अति महत्वपूर्ण विषय है।

व्यक्ति के विकास में वातावरण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। मनोवैज्ञानिक अध्ययनों ने सिद्ध कर दिया है कि बालक के विकास के प्रत्येक पक्ष पर उसके भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक वातावरण का व्यापक प्रभाव पड़ता है। बालक का वातावरण गर्भावस्था के दौरान से ही उसके विकास को प्रभावित करने लगता है। हमारे धार्मिक ग्रंथ भी इस बात की पुष्टि करते हैं। उचित वातावरण के अभाव में बालक का शारीरिक गठन भी प्रभावित होता है। सामाजिक तथा सांस्कृतिक वातावरण का प्रभाव व्यक्ति के मानसिक विकास पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। उत्तम वातावरण में पलने वाले बच्चों की बौद्धिक क्षमता अधिक होती है। वास्तव में वातावरण व्यक्ति के ऊपर अमित व दीर्घकालिक प्रभाव होता है। **गोडसन, फुरहिनी एवं एम. नगुसा, बराका (2020).** के निष्कर्षों से पता चला कि छात्रों की धारणा स्कूल के माहौल पर नकारात्मक थी क्योंकि वे वस्तुओं से असहमत थे। अध्ययन आगे इंगित करता है कि छात्र सीखने के प्रति प्रतिबद्ध थे। अंत में, अध्ययन ने स्कूल के वातावरण और सीखने के प्रति छात्रों की प्रतिबद्धता के बीच मौजूदा संबंध स्थापित किया। इसलिए, प्रभावी स्कूल वातावरण सीखने के प्रति छात्रों की प्रतिबद्धता की दर की भविष्यवाणी करता है। इसलिए अध्ययन में सिफारिश की गई है कि स्कूल प्रबंधन टीमों को पहचाने गए स्कूल पर्यावरण कारकों में सुधार के लिए कड़ी मेहनत करनी चाहिए क्योंकि प्रभावी सीखने के लिए कारक आवश्यक हैं। सीखने की दिशा में पहचाने गए छात्रों की प्रतिबद्धता को छात्रों को ऐसी भावना बनाए रखने के लिए पुरस्कृत करने की आवश्यकता है क्योंकि यह प्रभावी सीखने के लिए एक महत्वपूर्ण कारक है। इसके अलावा, स्कूल प्रशासकों को अनुकूल शिक्षण वातावरण बनाने के तरीके अपनाने चाहिए। **हिजकिय्याह एवं अन्य (2021).** के निष्कर्ष शैक्षिक प्रशासकों के लिए यह सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण हैं कि स्कूल अच्छी तरह से बनाए रखा गया है और शिक्षण और सीखने के लिए सहायक है।

समस्या कथन–

''लिंग के आधार पर माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों के शैक्षणिक पर्यावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन''

अध्ययन का उद्देश्य–

- माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों के शैक्षणिक पर्यावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

- माध्यमिक स्तर पर छात्रों के शैक्षणिक पर्यावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।
- माध्यमिक स्तर पर छात्राओं के शैक्षणिक पर्यावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ–

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित शून्य परिकल्पनाओं का परीक्षण किया गया है–

1. उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध–विधि– वर्णनात्मक अनुसंधान के उपर्युक्त प्रकारों में से सहसम्बन्धात्मक सर्वेक्षण विधि को अध्ययनकर्त्ता ने अपनी समस्या के अध्ययनार्थ उपयुक्त पाया। अतः अध्ययन में सहसम्बन्धात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या– अध्ययन हेतु जनसंख्या में जौनपुर जनपद में उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद द्वारा सम्बद्ध माध्यमिक विद्यालयों में कक्षा–11 के विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया है।

न्यादर्श– प्रस्तुत अध्ययन हेतु न्यादर्श का चयन जौनपुर जनपद के माध्यमिक विद्यालयों में से किया है। इन विद्यालयों के 10+2 स्तर के समस्त विद्यार्थी समष्टि है तथा अध्ययन के लिए चयनित विद्यार्थी न्यादर्श है।

न्यादर्श चयन विधि– प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श के चुनाव हेतु यादृच्छिक प्रतिदर्शन विधि का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में जौनपुर जनपद के 20 उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद से सम्बद्ध माध्यमिक विद्यालयों का चयन कर माध्यमिक विद्यालयों में से कुल 500 विद्यार्थियों (250 छात्र एवं 250 छात्राओं) का चयन यादृच्छिक विधि से किया गया है।

प्रयुक्त उपकरण–

शैक्षिक उपलब्धि– शैक्षिक उपलब्धि के लिए विद्यार्थियों की हाईस्कूल परीक्षा में प्राप्त प्राप्तांकों को सम्मिलित किया गया है।

शैक्षणिक पर्यावरण– एम0एल0 शाह एवं अमिता शाह द्वारा निर्मित ''एकेडमिक क्लाइमेट डिस्क्रप्शन क्वेश्चनायर'' का प्रयोग किया गया है।

सांख्यिकी विधियाँ– आँकड़ों के विश्लेषण हेतु एनोवा (प्रसरण) विधि एवं टी–अनुपात सांख्यिकी विधियों का प्रयोग किया गया है।

प्रदत्तों का विश्लेषण एवं व्याख्या–

उद्देश्य–1 माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों के शैक्षणिक पर्यावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन–

H_{01} उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका 1

उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में अन्तर का प्रसरण–मान

Source	df	SS	MS	F	Table Value
Between Groups	2	191181.61	95590.81	36.95	.01(2,497)=4.66
Within Groups	497	1285888.86	2587.30		
Total	**499**	**1477070.47**	**98178.11**		

0.01 पर सार्थक

व्याख्या– प्रसरण–मान = (36.95) जो कि स्वतंत्रांश = (2, 497) पर एफ–अनुपात के क्रान्तिक मान 4.66 से अधिक है, 0.01 पर सार्थक है। पूर्व निर्मित शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है। परिणामतः उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अन्तर है।

सारणी सं0 1.1

उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्यमानों के बीच टी–अनुपात में अन्तर

S.No.	Level	N	M	S_D	D	t-value
1	High	128	415.24	5.56	44.41	7.99*
	Moderate	243	370.84			
2	High	128	415.24	6.35	45.52	7.17*
	Low	129	369.72			
3	Moderate	243	370.84	5.54	1.11	0.20
	Low	129	369.72			

माध्यमिक स्तर के उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान क्रमशः 415.24, 370.84 एवं 369.72 तथा तीनों के मध्य टी–मान क्रमशः 7.99, 7.17 एवं 0.20 है। सार्थक युग्म तुलना में उच्च शैक्षणिक पर्यावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले विद्यार्थियों की तुलना में अधिक है जबकि सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एक–दूसरे के समान है।

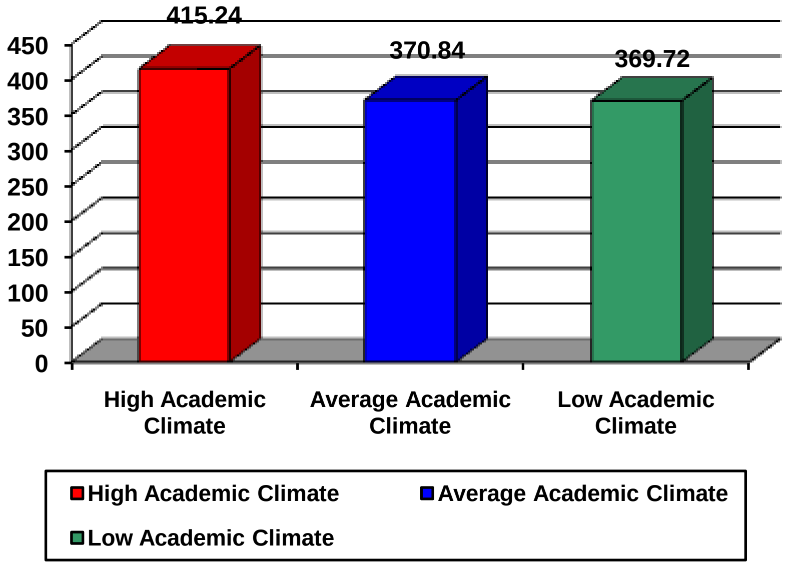

आरेख सं0 1 : उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्यमानों का आरेख चित्र

उद्देश्य–2 माध्यमिक स्तर पर छात्रों के शैक्षणिक पर्यावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन–

H_{02} उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका 2

उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि में अन्तर का प्रसरण–मान

Source	df	SS	MS	F	Table Value
Between Groups	2	38873.88	19436.94	9.87	.01(2,247)=4.71
Within Groups	247	528627.72	2140.19		
Total	**249**	**567501.60**	**21577.13**		

0.01 पर सार्थक

व्याख्या–

प्रसरण–मान = (9.87) जो कि स्वतंत्रांश = (2, 247) पर एफ–अनुपात के क्रान्तिक मान 4.71 से अधिक है, 0.01 पर सार्थक है। पूर्व निर्मित शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है। परिणामतः उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अन्तर है।

सारणी सं0 2.1

उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्यमानों के बीच टी–अनुपात में अन्तर

S.No.	Level	N	M	S_D	D	t-value
1	High	68	385.65	7.04	22.99	3.26*
	Moderate	118	362.66			
2	High	68	385.65	8.06	32.96	4.09*
	Low	64	352.69			
3	Moderate	118	362.66	7.18	9.97	1.39
	Low	64	352.69			

माध्यमिक स्तर के उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान क्रमशः 385.65, 362.66 एवं 352.69 तथा तीनों के मध्य टी–मान क्रमशः 3. 26, 4.09 एवं 1.39 है। सार्थक युग्म तुलना में उच्च शैक्षणिक पर्यावरण वाले छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले छात्रों की तुलना में अधिक है जबकि सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि एक–दूसरे के समान है।

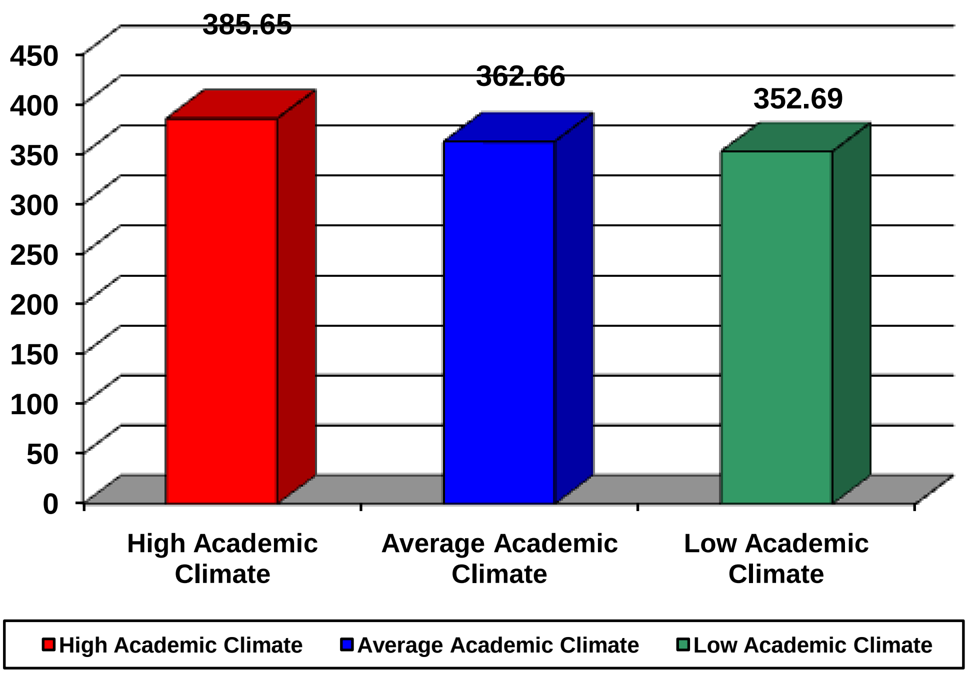

आरेख सं0 2 : उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्यमानों का आरेख चित्र

उद्देश्य–3 माध्यमिक स्तर पर छात्राओं की शैक्षणिक पर्यावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन–

H_{03} उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका 3

उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में अन्तर का प्रसरण–मान

Source	df	SS	MS	F	Table Value
Between Groups	2	54413.19	27206.60	9.15	.01(2,247)=4.71
Within Groups	247	734161.11	2972.31		
Total	**249**	**788574.30**	**30178.91**		

0.01 पर सार्थक

व्याख्या–

प्रसरण–मान = (9.15) जो कि स्वतंत्रांश = (2, 247) पर एफ–अनुपात के क्रान्तिक मान 4.71 से अधिक है, 0.01 पर सार्थक है। पूर्व निर्मित शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है। परिणामतः उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अन्तर है।

सारणी सं0 3.1

उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि के मध्यमानों के बीच टी–अनुपात में अन्तर

S.No.	Level	N	M	S_D	D	t-value
1	High	70	421.06	8.26	31.74	3.84*
	Moderate	115	389.32			
2	High	70	421.06	9.39	34.56	3.68*
	Low	65	386.49			
3	Moderate	115	389.32	8.46	2.83	0.33
	Low	65	386.49			

माध्यमिक स्तर के उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान क्रमशः 421.06, 389.32 एवं 389.32 तथा तीनों के मध्य टी–मान क्रमशः 3. 84, 3.68 एवं 0.33 है। सार्थक युग्म तुलना में उच्च शैक्षणिक पर्यावरण वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाली छात्राओं की तुलना में अधिक है जबकि सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि एक–दूसरे के समान है।

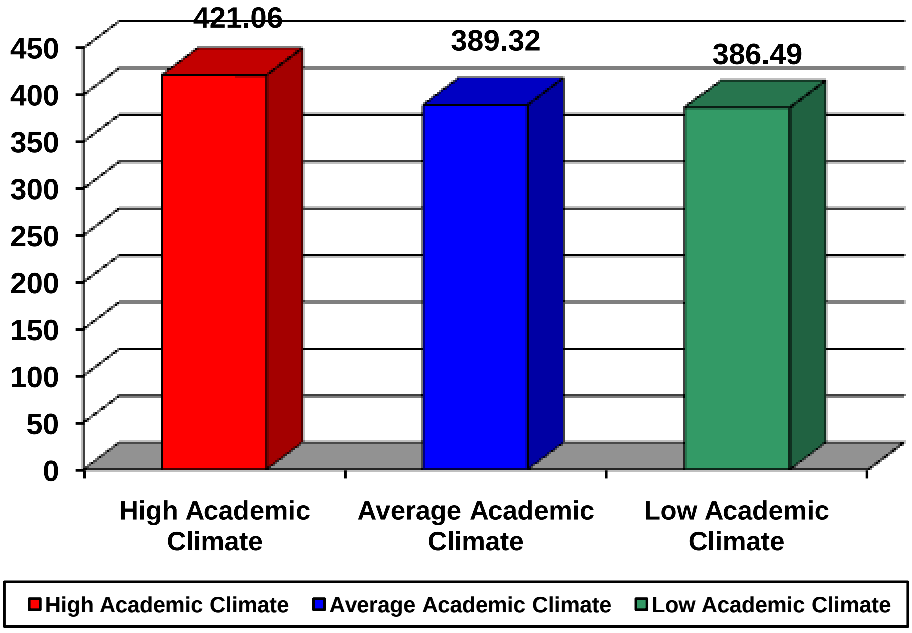

आरेख सं0 3 : उच्च, सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि के मध्यमानों का आरेख चित्र

निष्कर्ष–

प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुये–

- उच्च शैक्षणिक पर्यावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले विद्यार्थियों की तुलना में अधिक है जबकि सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एक–दूसरे के समान है अर्थात् माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों के शैक्षणिक पर्यावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर सकारात्मक प्रभाव है।
- उच्च शैक्षणिक पर्यावरण वाले छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले छात्रों की तुलना में अधिक है जबकि सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाले छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि एक–दूसरे के समान है अर्थात् माध्यमिक स्तर पर छात्रों के शैक्षणिक पर्यावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर सकारात्मक प्रभाव है।
- उच्च शैक्षणिक पर्यावरण वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाली छात्राओं की तुलना में अधिक है जबकि सामान्य एवं निम्न शैक्षणिक पर्यावरण वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि एक–दूसरे के समान है अर्थात् माध्यमिक स्तर पर छात्राओं की शैक्षणिक पर्यावरण का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर सकारात्मक प्रभाव है।

शैक्षणिक पर्यावरण का लिंग के आधार पर विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि पर सकारात्मक प्रभाव पाया गया। **वन्दना शुक्ला (2000)** ने निष्कर्ष में पाया कि वातावरण का शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है। **अग्रवाल एवं मिश्रा (2003)** ने निष्कर्ष में पाया कि छात्राओं की कक्षा में उपस्थिति व उनकी शैक्षिक उपलब्धि में धनात्मक सहसम्बन्ध है व

उच्च उपस्थिति वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि अधिक व निम्न उपस्थिति वाली छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि कम पायी गयी। **मीस, अण्डमान और अण्डमान (2004).** ने अध्ययन में इंगित किया कि स्कूल का वातावरण जो उच्च क्षमता का प्रदर्शन करने और ग्रेड के लिए प्रतिस्पर्धा करने पर केंद्रित है, कुछ छात्रों के शैक्षणिक प्रदर्शन को बढ़ा सकता है। **हिजकिय्याह एवं अन्य (2021).** ने अध्ययन में पाया कि स्कूली पर्यावरणीय कारकों का छात्रों के शैक्षणिक प्रदर्शन पर एक मजबूत प्रभाव था।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

- आर्य, मोहन लाल (2015), ने कक्षा–कक्ष शिक्षण को प्रभावी बनाने में सूचना एवं संचार तकनीकी (आईसीटी) की भूमिका, साउथ एशिया जर्नल ऑफ मल्टीडिस्पिलनरी स्टडीज एस.ए.एम.जे.एस. दिस0 2015, वॉ0 1, नं0 11,
- अल्का शुक्ला(2004), ''उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के व्यवस्थात्मक पर्यावरण का अध्ययन'', कानपुर शिक्षा चिन्तन वर्ष–3 पृ0 48–50
- अलफुहैगी, सारी सलेम (2015). स्कूल इन्वायरमेट एण्ड क्रियेटिव डेवलेपमेण्ट : ए रिव्यू ऑफ लिटेचर, जर्नल ऑफ एजूकेशनल एण्ड इस्ट्ररूक्शनल स्ट्डीज इन द वर्ल्ड, 5(2), पृ0 33–37
- क्लिमोविन, गिडेर एवं अन्य (2010). क्रिऐटिव क्लासरूम क्लाइमेट एसेसमेन्ट फॉर द एडवांसमेन्ट ऑफ फॉरेन लग्युवेज एक्वीजिशन. काल्बु स्टडी जोस, एन.आर. स्टडीज एब्साउट लैग्वेज, नं0 16।
- कुमार, अनिल (2012). सरकारी तथा गैर सरकारी उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन, लघु शोध प्रबन्ध, छत्रपति शाहूजी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर।
- जायसवाल, सुनी (2004–05). जूनियर हाईस्कूल स्तर पर छात्र–छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन, लघुशोध प्रबन्ध, वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय, जौनपुर
- डी0 रूपा बारवोरा (2001) – जर्नल ऑफ इण्डियन एजूकेशन, XVVII(1), पेज 59–65।
- अग्रवाल, सरस्वती तथा रूचि मिश्रा (2003). विद्यार्थियों की कक्षा में उपस्थिति तथा शैक्षिक उपलब्धि में सह–सम्बन्ध का अध्ययन'' लखनऊ भारतीय शोध पत्रिका अंक 21 पृष्ठ 21–23
- अहमद, सरफराज (2012), ''शिक्षा में अभिप्रेरण एवं वातावरणः एक अध्ययन'' वाड्मय बुक्स अलीगढ।
- तिवारी, प्रकाश नारायण (2014). एकल एवं सहशिक्षा विद्यालयों के संस्थागत वातावरण का उनके विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर एवं उपलब्धि अभिप्रेरणा के सम्बन्ध का तुलनात्मक अध्ययन, पी.एच–डी. शोध प्रबन्ध, चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ।

ISSN : 2278-0408, Volume: 15/Issue: 01 / January to June : 2022

समकालीन कवि डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी के साहित्य में काव्य क्षणिकाएं (कोलाज) का महत्त्व

हेतराम (शोधार्थी) ओप्रजोसिंविवि चुरु
डॉ. चित्रा देवगन (शोध प्रवेक्षिका) ओप्रजोसिंविवि चुरु

भारत सरकार द्वारा डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी को हिंदी साहित्य यात्रा सेवा में "पद्मश्री सम्मान" प्रदान किये जाने पर पत्रिका प्रकाशन मंडल की ओर से मंगल शुभकामनाएं

शोध सार : समकालीन हिंदी साहित्य ने परंपरागत चली आ रही साहित्यिक विधाओं की युग चेतना को नकारते हुए एक नये युग के जीवंत मूल्यों को मानवीय स्पंदना और संवेदना के साथ एक नयी विधा का प्रारंभ हुआ। समकालीन साहित्य में इसे "कोलाज" की संज्ञा दी गयी। स्पष्ट है कि आधुनिक हिंदी साहित्य के मध्यावधि दशकों में दीर्घ कविताओं का महत्त्व रहा। इसी प्रकार सत्तर के दशक के बाद समकालीन साहित्य के कवियों ने समकालीन काव्य बोध में मानसिकता को प्रस्फुटित करते हुए काव्य क्षणिकाओं (कोलाज) को काव्य में उतारा।

समकालीन युग में मनुष्य का जीवनवृत्त भागदौड़ का जीवन हो चुका है। आज के जीवन युग में कामकाज की प्रवृत्ति की दिनचर्या के अतिरिक्त उसके मनोरंजन के अनेक साधन तकनीकी संचार ने उपलब्ध करा दिए हैं। इसी कारण मनुष्य का जीवन साहित्य से दूर होता चला गया। साहित्य और रंगमंच का स्थान दूरदर्शन, सिनेमाघरों और मोबाइल भरी संचार की दुनिया ने ले लिया। साहित्य की प्रति कम रूचि व उपेक्षा के भाव पैदा होने लगे। और साहित्य जनमानस की परिस्थितियों को उजागर करने में आम आदमी तक पहुंचने में असमर्थ रहा। क्योंकि मनुष्य के

पास मनोरंजन के सुलभ साधन पैदा हो गए हैं, इस कारण साहित्य ने कोलाज को काव्य बोध की दृष्टि से समकालीन जनमानस के अंतरंग की कविता को रूप देते हुए मानवीय जीवन की मानसिकता को प्रकट करते हुए मानव जीवन के तनाव विचार और उनकी कृतियां देश की भौतिक जन समस्याएं जन सुविधाएं और और देश के सांस्कृतिक मूल्यों को भी आम सभी से आत्मसात् करने के लिए काव्य क्षणिकाओं (कोलाज) को साहित्य में स्थान दिया।

बीज शब्द : काव्य क्षणिका, कोलाज, रूचि, साहित्य, संस्कृति, इतिहास, अनुकृति, चित्रकला, बीज, कथांश।

भारतीय काव्य साहित्य में काव्य क्षणिका (कोलाज) की स्थापना : कोलाज एक फ्रांसीसी शब्द है। और यह भारतीय जनमानस में फ्रांसीसी चित्रकला के माध्यम से भारत में आया। जबकि भारतीय साहित्य में चित्रकला का अपना विस्तृत इतिहास है, भारतीय चित्रकला किसी का अनुकरण नहीं हैं। इसलिए साहित्य में कलमकारों के कोलाज को फ्रांसीसी अनुकरण कहा जाना तर्क संगत नहीं हैं। यह भारतीय साहित्य कला के प्रति अन्याय है। क्योंकि प्राचीन काल में ऋग्वेद के सूक्त, बौद्ध धर्म के त्रिपिटकों में लघु कथांश में बहुत बड़ी– बड़ी अर्थबोध की बातें कही गयी हैं। जन साधारण भाषा में बौद्ध धर्म के त्रिपिटकों में भी जनमानस की भाषाओं में छोटे– छोटे काव्यांश जनचेतना की हुंकार के रूप में विद्यमान हैं। इस संदर्भ में यह जानने की आवश्यकता है कि हम सब कुछ पश्चिमी का अनुकरण नहीं है, जबकि कुछ नवीनता के पीछे हमारे देश की संस्कृति के बीज विद्यमान हैं। उदाहरण में बौद्ध धर्म की नालंदा और विक्रमशिला जैसे विश्वविद्यालय भारत ही नहीं बल्कि विश्व शिक्षा के कीर्तिस्तंभ को स्थापित करते हैं। तो भारतीय साहित्य में हम अनेक विधाओं को पाश्चात्य अनुकरण की संज्ञा दे देना कहा उचित हैं, इसे पूर्ण स्वीकारा नहीं जा सकता। क्योंकि भारत संस्कृति और साहित्य स्वयं प्रदाता रहा है। अतः कोलाज के संदर्भ में हम यह कह सकते हैं कि कि भारतीय भाषा और साहित्य में कोलाज शब्द फ्रांसीसी की देन है क्योंकि भारत लंबी अवधि में विदेशी सत्ता का गुलाम रहा व भारत देश के व्यापार, राजनीति के अतिरिक्त भाषा साहित्य पर भी हस्तक्षेप रहा, इसमें गार्सा द तासी का भारतीय केन्द्रीय भाषा हिंदी का घोर विरोध करना स्पष्ट उदहारण है। तो हिंदी भाषा में फ्रांसीसी शब्दों का प्रयोग होना कोई बड़ी बात नहीं हैं, उदाहरण में हमारे सामान्य व्यवहार में बोले जाने वाले फ्रांसीसी शब्द अंग्रेज, फ्रांसीसी, रेस्तरां, मीनू, बादाम, कारतूस, लैंप, मेयर, बिगुल, कर्फ्यू, फ्रांस इत्यादि सामान्य दृष्टि से भारतीय भाषा के बोलचाल के शब्द हैं, इन शब्दों का हमारी भारतीय भाषा में विलियन हो चुका है, जिसे हिंदी और फ्रांसीसी शब्दों का अलग करना बहुत मुश्किल है। भारतीय साहित्य में काव्य क्षणिका (कोलाज) भारतीय साहित्य की पूर्व पीठिका पर आधारित है।

समकालीन काव्य क्षणिकाएं (कोलाज) पर एक दृष्टि : समकालीन काव्य में मनुष्य के बढ़ते मनोरंजन के जनसंचार माध्यम और आजीविका हेतु बढ़ती भागदौड़ के माध्यम से साहित्य के प्रति रुचि की शिथिलता को तीव्र करने के लिए कलमकारों ने लघु कविता/ लघु कहानी को साहित्य का विषय बनाया।

समकालीन काव्य में लघु अंश कविता पर एक दृष्टि पर पूर्व भारतीय साहित्य के संदर्भ में आदिकालीन संत कबीर दास जी के दोहे के माध्यम से समझ सकते हैं कि कबीर जी सदधूकड़ी भाषा अर्थात् आम आदमी की भाषा में व्यवहार करते हुए सीधे सपाट बयान बाजी में आम आदमी को पाखंडग्रस्त जीवन शैली पर चेतना देते हैं और उनके एक–एक छोटे से दोहे में गागर में सागर विद्यमान हैं। ये दोहे काव्यात्मक कथा या आख्यायान नहीं है। बल्कि काव्य क्षणिका है। जिसे पिंगल शास्त्र में छंद कहा गया है। अतः समय और देशकाल अनुसार परिस्थितियां ही

समकालीनता है। समकालीनता को किसी काल विशेष में बाँधा नहीं जा सकता। समकालीन साहित्य में अनेक कवियों ने काव्य क्षणिकाएं (कोलाज) लिखे। कुछेक उदहारण निम्नलिखित हैं–

मेरे सीने में
एक झरना है
बस इसी बात का तो
मरना है ! नंद किशोर आचार्य[1]

साँप !
तुम सभ्य तो हुए नहीं
नगर में बसना
भी तुम्हें नहीं आया।
एक बात पूछूँ––(उत्तर दोगे?)

तब कैसे सीखा डँसना–
विष कहाँ पाया? अज्ञेय[2]

समकालीन कविता में कोलाज समकालीन समाज की दृष्टि को देखते हुए चित्र रुप से बाहर निकलकर साहित्य में कलम का उपादान बनकर प्रलक्षित हुआ है। अतः उपरोक्त उदाहरण से हम समझ सकते हैं कि कोलाज पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण नहीं है, बल्कि भारतीय पूर्व पीठिका का अनुसरण है और समकालीन युग अंधाधुंध भागदौड़ व मशीनी युग है। इस युग में साहित्य और मनुष्य के बीच संवाद और संबंध स्थापित करने में कोलाज का महत्त्वपूर्ण स्थान हैं।

डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी के काव्य में काव्य क्षणिका योजना का स्वरूप : समकालीन सामाजिक परिवेश और व्यवस्था में मनोरंजन के अनेक साधनों की उपलब्धता और यथार्थ जीवन के संप्रेषण में मानसिकता का प्रस्फुटन जिस कविताओं के माध्यम से पूर्व काल में महाकाव्यों– काव्यों व कविताओं, उपन्यासों, रंगमंच नाटकीयता के माध्यम से होता था, उनका स्थान संसार मीडिया के बढ़ते तकनीकी संचार ने ले लिया है, इसी कारण काव्य और संचार की द्वंद्वात्मक स्थिति के मध्य काव्य क्षणिका योजना का प्रस्तुतीकरण हुआ है।

डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी के काव्य क्षणिका (कोलाज) योजना में निहित तत्व सपाट बयानी में बोलचाल की भाषा से साक्षात्कार करता है। काव्य क्षणिका योजना (कोलाज) की दृष्टि से समकालीन बोध की साहित्यिक जीवन मूल्य की संचेतना व संवेदना की निधि का स्पंदन डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी की काव्य क्षणिका योजना (कोलाज) में मिलता है। कवि बेदी सीधे और साफ–साफ आम आदमी की ही भाषा में आम आदमी को जीवन के विविध संदर्भों की अव्यवस्था के खिलाफ छोटी सी शब्दावली में ही प्रस्तुति देकर मानवीय जीवन की व्यवस्थित समाज की कल्पना करते हैं।

'फैला आकाश' काव्य क्षणिका योजना (कोलाज) समाज में व्याप्त विडंबना से आम आदमी की व्यथा को दूर करता हुआ उसे दुख के बाद सुख का स्वागत करने और हताशा में उत्साह भरते हुए उसे उसके कर्म की ओर प्रेरित करने की शक्ति विद्यमान है।

लोग उत्सुक हैं/ किसी यात्रा के लिए
आलस्य छोड़ो/ दरवाजा खोलो
आंगन में किरणों का नूर/ उतर रहा है।[3]

समाज में सामाजिक विडम्बनाओं में घिरे आदमी के व्यथित हृदय को उल्लू की साजिश बताता है वहीं प्रशासकीय मदद नकारा होने के कारण हादसे की संज्ञा देता हुआ आदमी को प्रतिबद्धित करता हुआ कवि कहता है।

मौसम का हादसा/ बार–बार
लिपटता है/ तन से
और दिन की शुरुआत होती है–
उल्लुओं की साजिश से।[4]

कवि 'आलोचना संवाद' काव्य क्षणिका योजना (कोलाज) में देश में व्याप्त भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करता है। देश के आंशिक लोग निजी लाभ के लिए किसी भी प्रकार की प्रवंचना करने में नहीं चूकते हैं, इस संदर्भ में कवि समझाते हुए कहता है।

आलोचक जी
मैं किस वाद में फिट बैठता हूं
मेरी कविता पर
उस वाद का लेबल चिपका दो।[5]

'सपनो की धूप' काव्य क्षणिका योजना (कोलाज) अन्योक्ति अलंकार का उत्तम उदाहरण ही नहीं बल्कि स्वाधीनता मूल्यों से साक्ष्य करवाता है। कवि स्वाधीनता के सत्तर साल बाद भी नारी शोषण, असामाजिकता और भ्रष्टाचार व समाज अनेक बुराइयों को एक साथ प्रदर्शित करने की क्षमता रखता है। जिसमें कवि बेदी स्वाधीनता के बाद आम आदमी के टूटते सपनों को निम्न लिखित शब्दावली में दर्शाता है।

अब जालें टूट गए हैं
और सपनों की धूप
कटीली झाड़ियों पर बिखर गई है
अब तो दर्पण में कुछ भी दिखाई नहीं देता।[6]

स्वाधीनता के बाद भी भ्रष्टाचार, असामाजिकता, नारी शोषण, इत्यादि अनेक विद्यमान बुराइयों पर रोष प्रकट किया गया है।

डॉ. बेदी के काव्य क्षणिका योजना (कोलाज) में जीवन बोध का विस्तृत फलक : डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी की छोटी– छोटी कविता की शब्दावली काव्य दृष्टि से संक्षेपण में लिखित हैं, परंतु कविता का फलक विस्तृत है, जो समकालीन जीवन में जटिल, तनाव ग्रस्त, जीवन संघर्ष की समग्रता के साथ यथार्थ जीवन बोध को प्रस्तुत करने में सक्षम हैं। कवि हरमहेंद्र सिंह बेदी अपनी लघु अंश काव्यांजलि काव्य क्षणिका योजना (कोलाज) में समकालीन बोध को धरातल पर उतारते हुए नाटकीयता और भिन्न– भिन्न दृश्यों के जीवन मूल्यों से परिचय करवाने की शक्ति रखते हैं। इसी प्रकार कवि डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी काव्यात्मक सौंदर्य के साथ अपनी लघु अंश कविता में भी समकालीन युगीन यथार्थ बोध के अंतर्द्वंद में व्यवस्थित और अव्यवस्थित पक्षों की संरचना के साथ वास्तविक जीवन पद्धति का चित्र प्रस्तुत करते हैं। कवि मानव समाज को दोहरे और बोझिल जीवन से बाहर निकालने में प्रतिबद्ध हैं।

डॉ. बेदी के काव्य क्षणिका योजना (कोलाज) में सामाजिक गतिशील दृष्टि : डॉ. कवि हरमहेंद्र सिंह बेदी के छोटी– छोटी काव्य क्षणिका योजना (कोलाज) सर्जनात्मक दृष्टि से विविध रूपों और विविध संदर्भों और आयामों से गुजरते हुए व्यक्ति को यथार्थ जीवन का गतिशील रूप दर्शाते हैं। और यथार्थ चेतना को अभिव्यक्त करते हैं।

डॉ. बेदी के काव्य क्षणिका योजना (कोलाज) में बिंब सौन्दर्य में समकालीन मूल्यों का परिचय : डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी की लघु कविताओं का शाब्दिक संतुलन और संयोजन करना व संकलन ही मात्र नहीं है। बल्कि वे साहित्यिक दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। अर्थात् रचना विधान की दृष्टि से बिंब का चित्र प्रस्तुत करते हुए मानव समाज को प्रतिबद्धता व समकालीन मूल्यों से परिचित करवाने में सक्षम है।

डॉ. बेदी के काव्य क्षणिका योजना (कोलाज) में अन्विति : अन्विति का तात्पर्य है व्याकरण की दृष्टि से काव्य का स्वरूप खंडित व विकलांग न हो अर्थात् उसमें एक प्रस्तुति की लयबद्धता, कथात्मकता, प्रश्नबोध शक्ति विद्यमान हो। कवि बेदी के काव्य क्षणिका योजना (कोलाज) मानवीय सपंदन हृदयग्राही हैं, वे मानव समाज को एकसूत्र में बांधने की कार्य शक्ति रखते हैं। कवि बेदी की छोटी– छोटी कविताएं व्याकरण की दृष्टि से अन्विति विधायक तत्व में सफल सिद्ध होती है। क्योंकि कवि बेदी भावमूलक संवेदनात्मक मूल्यों के साथ संप्रेषण बोध की शक्ति रखते हुए अपनी कविता को प्रस्तुत करते हैं।

डॉ. बेदी के काव्य क्षणिकाएं (कोलाज) लेखन की आवश्यकता और उद्देश्य : कवि बेदी जी के कोलाज लेखन उद्देश्य कांता सम्मित उपदेश निहित हैं। कवि बेदी समाज की आवश्यकताओं से कोलाज में वार्तालाप करते हैं। इस संदर्भ में उन्होंने एक साक्षात्कार में बतलाते हुए कहा – "सामाजिक जीवन की भागदौड़ की टकराहट, मानवीय मूल्यों का ह्रास, सामाजिक मूल्यहीनता इत्यादि से ग्रसित होकर मानव समाज साहित्य से दूर होता जा रहा है। और उनको कथ्य और संरचना के माध्यम से प्रभावी बनाने के लिए उसके जीवन मूल्यों से अंतःस्पर्श करने के लिए एक ऐसे प्राणतत्व की आवश्यकता है जो सीधे– सीधे उनके हृदयग्राही हो सके। और समाज में व्याप्त विसंगतियों, विडंबनाओं और अमानवीय परिस्थितियों से मानव को बाहर निकाल सके, इसीलिए काव्य क्षणिका योजना (कोलाज) लेखन महत्त्वपूर्ण है। और वर्तमान समाज की आवश्यकता भी है।[7]

डॉ. बेदी के काव्य क्षणिका कला (कोलाज) का वैशिष्ट्य सौंदर्य : डॉ. बेदी के कोलाज का वैशिष्ट्य सौंदर्य सामाजिक व सांस्कृतिक व्यवस्था को समकालीन परिवेश में सज्जित करते हुए मौजूद व्यवस्था को सुचारू रूप से चलायमान बनाने के लिए लोकतंत्र का भी सहारा लेते हैं। कवि बेदी समाज के चितेरे कवि हैं उनके कोलाज में मजदूर, किसान, श्रमिक, सब्जी बेचने वाले, रेहड़ी वाले इत्यादि सभी वर्गीय लोगों को लोकतंत्र की मर्यादा की पहचान कराने में क्षमता रखते हैं। इसके साथ– साथ भावनाओं और संवेदनाओं के मध्य लोकतंत्र का सम्मान और देश के क्रांतिवीरों का स्मरण करने की प्रेरणा भी कोलाज में प्रेरक बिंदु के रूप में विद्यमान हैं। डॉ. बेदी के कोलाज में सामाजिक जाग्रति हेतु अव्यवस्थित वातावरण, असमानता और शोषण का आक्रोश ही नहीं हैं, बल्कि देश की प्रशासनिक व्यवस्था और उनके प्रति सम्मान और संतुलित व्यवस्था का भी पक्ष रखते हुए देश की लोकतंत्र की स्थापना की गयी है। कवि बेदी भारत– पाक सीमा के परिवेश से परिचित हैं इसलिए वे अपने छोटे छोटे कोलाज में संप्रदायिक एकता, समन्वयता की तस्वीर दिखाते हुए समता, समानता, शांति, सौहार्द प्रेम का पाठ पढ़ाने की कुशलता रखते हैं। कवि बेदी के कोलाज में सांप्रदायिक एकता अखंडता के गीत विद्यमान हैं।

डॉ. बेदी के काव्य क्षणिकाएं (कोलाज) में दिखावे के प्रति तीखा व्यंग्य : कवि बेदी के कोलाज में जीवन मूल्यों की अभिव्यक्ति व महत्त्व रखते हुए आम आदमी को उसकी पहचान कराने की शक्ति रखते हैं। कवि बेदी पूरी क्रियाशीलता के साथ आम आदमी की उदासीनता में उत्साह भरने का

हुंकार रखते हैं, जीवन धर्मी मूल्य और उसके चरित्र में जीवंतता के साथ चारित्रिक खूबी से एक हताश निराश आदमी को उत्साहित कर संगीत भरी दुनिया प्रदान करने की शक्ति रखते हैं।

निष्कर्ष : स्पष्ट है कि समकालीन हिंदी कविता में काव्य क्षणिकाएं (कोलाज) का महत्त्वपूर्ण स्थान हैं। क्योंकि मनुष्य जीवन के विविध मनोरंजन के साधन आज व्याप्त हैं। इस कारण वह साहित्य से दूर होता जा रहा है और साहित्य और समाज की दूरी को मिटाने के लिए इसमें लघु कविताओं का और लघु कथाओं का विशेष योगदान है। समकालीन साहित्य में लघु कविताएं और लघु कथाएं सीधे और सपाट बयानी में समकालीन परिदृश्य से यथार्थ चित्रण करती हुई मनुष्य को हृदयग्राही बनने में सिद्ध होती है। और नए जीवन का निर्माण करने हेतु प्रतिबद्ध करती है। समकालीन कविता में डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी की काव्य क्षणिकाएं (कोलाज) कविता के प्रेरक कुंज के रूप में विद्यमान हैं।

संदर्भ सूची :

1. नन्द किशोर आचार्य– झरना, ब्लॉग पेज, कविता कोष / झरना / नन्द किशोर आचार्य
2. अज्ञेय– ब्लॉग पेज सांप, कविता कोष / सांप / इंद्र धनुष रौंदे हुए थे / अज्ञेय
3. हरमहेंद्र सिंह बेदी – गर्म लोहा, संपादक डॉ. रामसजन पांडेय – हरमहेंद्र सिंह बेदी रचनावली भाग 1, निर्मल पब्लिकेशन दिल्ली, (2019), पृष्ठ संख्या 36
4. हरमहेंद्र सिंह बेदी – गर्म लोहा, संपादक डॉ. रामसजन पांडेय – हरमहेंद्र सिंह बेदी रचनावली भाग 1, निर्मल पब्लिकेशन दिल्ली, (2019), पृष्ठ संख्या 52
5. हरमहेंद्र सिंह बेदी – गर्म लोहा, संपादक डॉ. रामसजन पांडेय – हरमहेंद्र सिंह बेदी रचनावली भाग 1, निर्मल पब्लिकेशन दिल्ली, (2019), पृष्ठ संख्या 30
6. हरमहेंद्र सिंह बेदी – गर्म लोहा, संपादक डॉ. रामसजन पांडेय – हरमहेंद्र सिंह बेदी रचनावली भाग 2, निर्मल पब्लिकेशन दिल्ली, (2019), पृष्ठ संख्या 139
7. हरमहेंद्र सिंह बेदी और हिंदी जुड़वां का साक्षात्कार, अक्टूबर, 2021